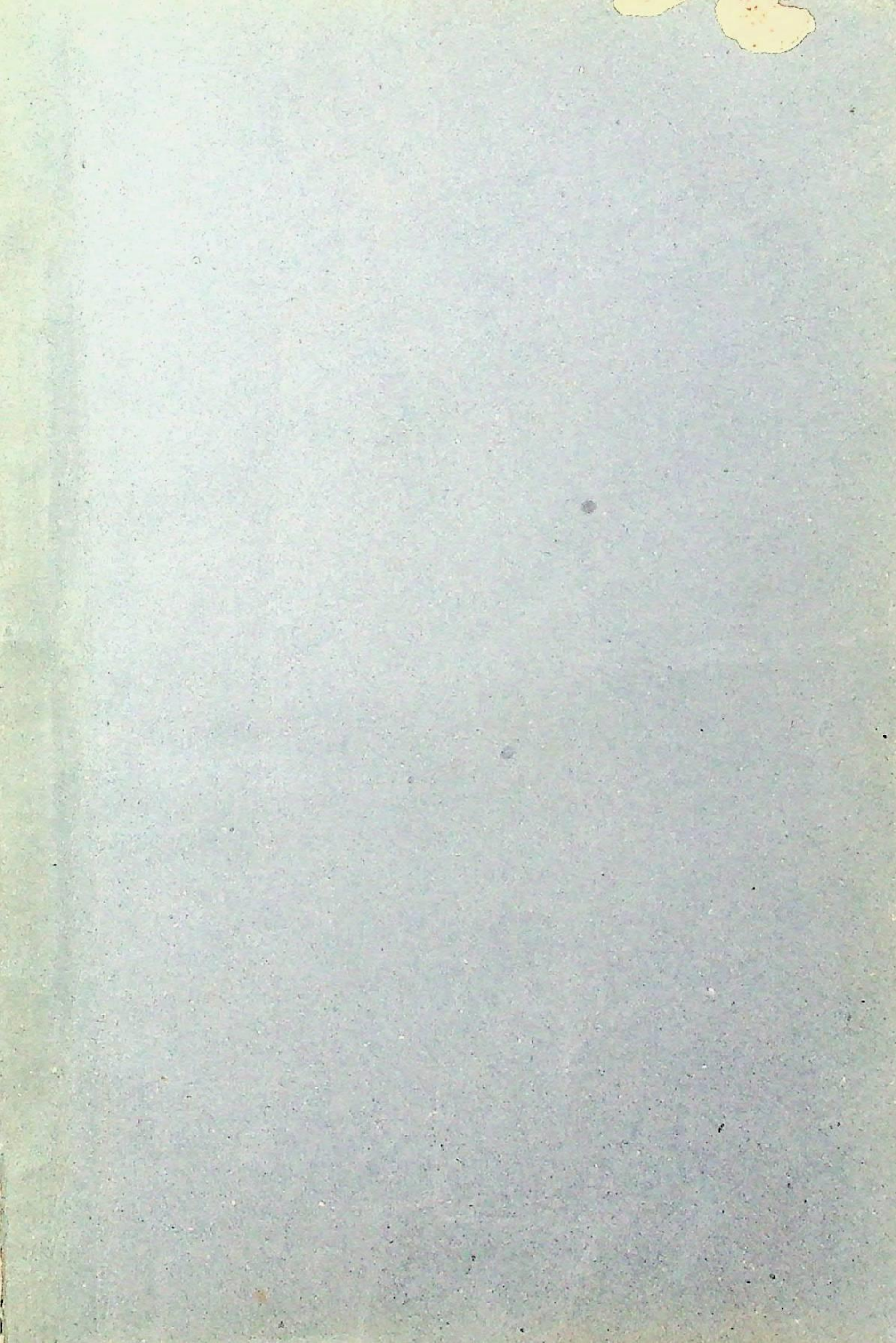
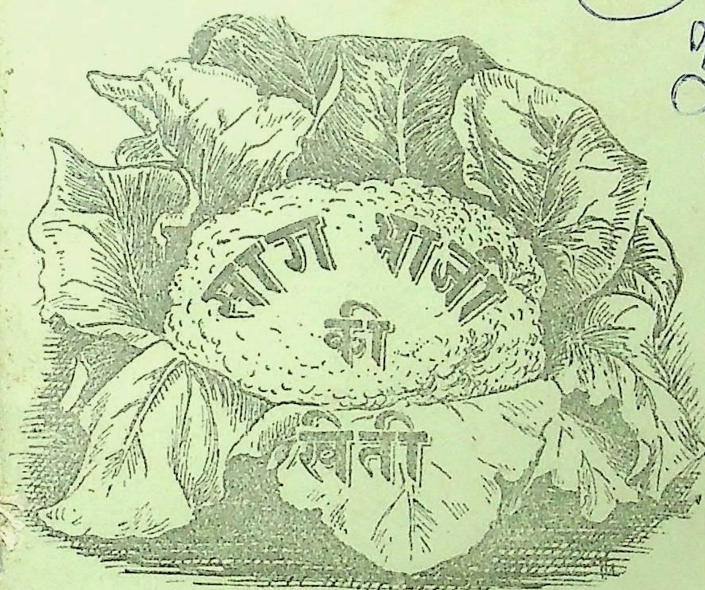


श्री



लेखक

डॉ० नारायण दुलीचन्द व्यास,

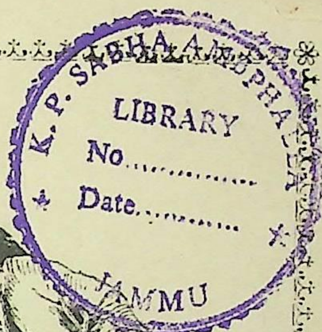
एल० एजी०, एम० एस-सी० (एग्री०) पीएच० डी०

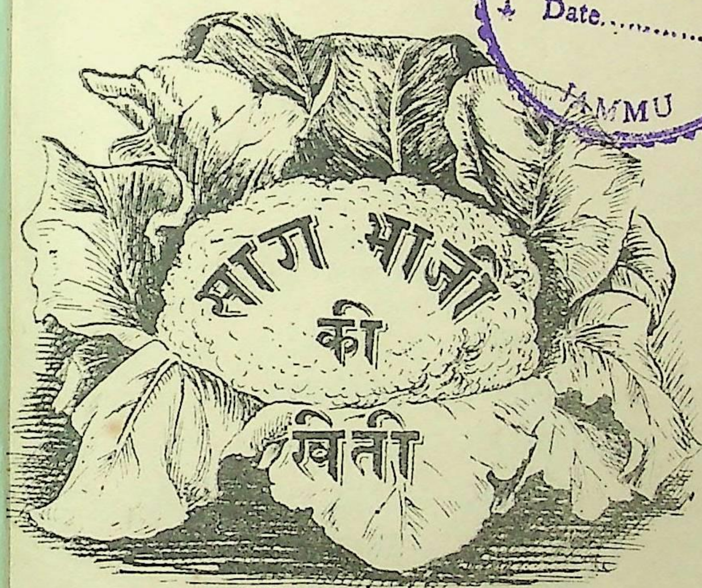
इण्डियन एग्रीकलचरल

रिसर्च इन्स्टीट्यूट,

नयी दिल्ली

श्री





साग भाजी की खेती

लेखक

डॉ॰ नारायण दुलीचन्द व्यास,

एल॰ एजी॰, एम॰ एस-सी॰ (एग्री॰) पीएच॰ डी॰

इण्डियन एग्रीकलचरल

रिसर्च इन्स्टीट्यूट,

नयी दिल्ली

प्रकाशक

लीडर प्रेस, प्रयाग

प्रथम बार	१९३३ ई०
दूसरी बार	१९३६ ई०
तीसरी बार	१९३९ ई०
चौथी बार	१९४२ ई०
पाँचवीं बार	१९४५ ई०
छठी बार	१९४८ ई०

मूल्य ४)

मुद्रक

महादेव एन० जोशी

लीडर प्रेस, प्रयाग

॥ श्री ॥

प्रस्तावना

मनुष्यों के भोजन में फल और तरकारी का होना प्राचीन काल से ही अनिवार्य माना गया है। वर्तमान समय में इसका महत्त्व और भी बढ़ता जा रहा है। मनुष्य चाहे बालक हो या वृद्ध, स्वस्थ हो या अस्वस्थ, सब के आहार में एक प्रमाणित परिमाण में तरकारियाँ अवश्य होनी चाहिएं। इनके उपयोग से पाचन शक्ति तीव्र होती है, मनुष्य स्वस्थ बने रहते हैं, व्याधियाँ निकट नहीं आने पातीं, और कई तरकारियाँ तो ऐसी हैं जिनके सेवन मात्र से कई प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं।

इनकी उपयोगिता की वृद्धि देख कई कृषकों का ध्यान इनकी खेती की ओर आकृष्ट हुआ है। इनकी खेती ही बहुतों के जीवन का आधार है। बहुत से शिक्षित नवयुवक भी इस जीवन संग्राम के युग में इस व्यवसाय को अपना रहे हैं और बहुत से अपनाना चाहते हैं परन्तु उन्हें ऐसी संचित सामग्री नहीं मिलती कि जिससे वे चाहें उस प्रकार की तरकारी की खेती भली भांति कर सकें। ऐसे सज्जनों के हितार्थ ही इस पुस्तक के लिखने का प्रयत्न किया गया है। यदि इससे पाठकों को किञ्चित लाभ पहुँचा तो लेखक अपना परिश्रम सफल समझेगा।

पाठकों से यह भी निवेदन है कि कृपाकर वे एक बार इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ लें और यदि कहीं कोई त्रुटियाँ रह गयी हों तो लेखक को उनकी सूचना देवें कि जिससे यदि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण देखने का सौभाग्य प्राप्त हो तो उसमें वे सुधार ली जायँ।

इसके प्रकाशन की आज्ञा प्रदान के लिए पूसा न्स्टीट्यूट के तत्कालीन डायरेक्टर (Dr. B. A. Keen, D. Sc., now Asst. Director, Rothamsted. Expt. sta,, England) तथा भारत सरकार के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

इसकी तैयारी में मुझे कई मित्रों से सहायता मिली है जिनमें से श्रीमान् हरदयाल सिंह जी श्रीवास्तव, बी० एस-सी, विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

टाइटल पेज के ब्लाक का चित्र, चित्रकार श्रीमान् पी० नारायणम जी की कृपा का फल है और ऐसी पुस्तक के प्रकाशन की आवश्यकता की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट करने का श्रेय मेरे मित्र शङ्करराव जोशी, डिप० एजी०, एफ़० आर० एच० एस० को है।

४-५-१९३३

द्वितीय संस्करण—"साग भाजी की खेती" का दूसरा संस्करण भेंट करते हुए मैं उन महानुभावों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट करता हूँ जिन्होंने इसे अपनाया और इसका प्रचार किया। फलतः मेरा उत्साह इतना बढ़ा कि मैं "फलों की खेती और व्यव-

साय" नाम की पुस्तक लिखने पर उद्यत हुआ। मुझे यह प्रगट करते हर्ष होता है कि जनता ने इस दूसरी पुस्तक को भी "साग भाजी की खेती" के समान ही उपयोगी पाया।

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार और उड़ीसा के शिक्षा विभागों ने दोनों ही पुस्तकों की उपयोगिता स्वीकार की—अनेक कॉलेज, स्कूल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों ने अपने अपने स्कूलों में इन्हें विशेष रूप से स्थान दिया जिसके लिए मैं उपर्युक्त विभागों के अधिकारियों का आभारी हूँ। मैं यह भी आशा करता हूँ कि जहाँ जहाँ अभी तक इन पुस्तकों की पहुँच नहीं हुई है वहाँ भी इनका शीघ्र प्रवेश होगा ताकि वर्तमान जीवन संग्राम में भारत के भावी युवक, ऐसी पुस्तकों द्वारा सरल तथा स्वतंत्र कला का ज्ञान प्राप्त कर, स्वावलम्बी हों।

इस द्वितीय संस्करण में यथा सम्भव पहले संस्करण की सभी त्रुटियाँ दूर करने की ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है। जहाँ तहाँ आवश्यकतानुसार विषय में परिवर्धन भी कर दिया गया है ताकि विषय और भी स्पष्ट हों और सर्व साधारण अधिक से अधिक लाभ उठावें। पूसा माघ शु० १५, सं० १९९२ ता० ७-८-१९३६ ई०

तृतीय संस्करण—जनता ने जिस प्रेम और उत्साह से इस पुस्तक को अपनाया उसके फल स्वरूप यह तीसरा संस्करण उपस्थित है। पूर्व दो संस्करणों का अवलोकन कर जिन जिन महानुभावों ने अपनी अपनी सम्मतियाँ दीं उनका मैं विशेष

आभारी हूँ। उनके आदेशानुसार इस संस्करण में कहीं कहीं विषयों में परिवर्धन, संशोधन तथा विशेष स्पष्टीकरण कर दिया गया है। अन्य प्रान्तों की भाँति स्थानीय दिल्ली प्रान्तीय शिक्षा विभाग ने भी मेरी पुस्तकों की उपयोगित स्वीकार की अतएव मैं उक्त विभागाधिकारियों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। दिल्ली, ज्येष्ठ शु० १५ सं० १९९६ ता० २-६-३९

चतुर्थ संस्करण — यह चतुर्थ संस्करण संशोधित तथा परिवर्धित रूप में कृषि-प्रेमियों के हितार्थ ही आज प्रेस से बाहर जा रहा है। आशा है पिछले संस्करणों की भाँति यह भी उनकी यथोचित सेवा कर सकेगा।

कुछ सज्जनों के अदेशानुसार इस संस्करण में दो परिशिष्ट— एक "साग-भाजियों में रासायनिक पदार्थों की मात्रा" तथा दूसरा "साग-भाजी और खाद्योज (Vitamins)" और बढ़ा दिये गये हैं।

खेद है कि वर्तमान विश्वव्यापी युद्ध के कारण अनेक प्रयत्न करने पर भी प्रकाशक इस संस्करण के निमित्त पिछले संस्करणों सा काग़ज़ प्राप्त करने में असमर्थ है। आशा है पाठक-वृन्द इस विवशता के लिए क्षमा करेंगे। आश्विन शुक्ल १५, सं० १९९९ ता० २३-१०-१९४२

पंचम संस्करण — जैसा कि वैज्ञानिक विषयों की पुस्तकों में होना चाहिए इसमें भी संशोधन तथा परिवर्द्धन किया गया है

जिससे पाठक वृन्द लाभ उठावेंगे। श्रावण शुक्ल १५ सं० २००२ ता० २३-८-१९४५

छठा संस्करण—इस संस्करण के प्रकाशन में एक साल का विलम्ब हुआ और कई महानुभावों को पुस्तक नहीं भेजी जा सकी इसका अत्यन्त खेद है। इस देरी के अनेक कारणों में से एक मुख्य कारण यह था कि कुछ पाठकों की आज्ञानुसार मुझे अन्य फसलों की खेती पर पुस्तकें लिखने तथा छपवाने में अपना समय देना पड़ा और इस पुस्तक का यथा समय संशोधन न हो सका। प्रेस ने भी आवश्यकता से अधिक समय ले लिया। माघ शुक्ल १५, २००४ ता० २४-२-१९४८

विनीत—

नारायण दुलीचन्द व्यास

श्री

विषय-सूची

प्रकरण	विषय	पृष्ठ

प्रकरण १

तरकारियाँ और स्थान का चुनाव तथा क्षेत्रफल, पूँजी, मकान, पशु मज़दूर और कृषि के औज़ार।

पहले भारतवर्ष में भिण्डी, लौकी, कुम्हड़ा, तरोई, खीरा, पालक, मेथी, सेम, मटर, बैंगन, प्याज़, शकरकंद आदि तरकारियाँ होती थीं परन्तु ज्यों ज्यों विदेशियों से हमारा संसर्ग बढ़ता गया भाँति भाँति की नई तरकारियों का आगमन भारतवर्ष में होता गया। फूलगोभी, पत्तागोभी, गाँठगोभी, मूली, शलंजम, गाजर, आलू, टमाटर आदि का आगमन बाद में ही हुआ है। भारत में इन नई तरकारियों का सत्कार ऐसा हुआ कि व्यवसायियों का लक्ष्य इन्हीं की खेती की ओर विशेष होने लगा। पुरानी तरकारियाँ जिनकी खेती पहले नगरों के निकट बहुतायत से हुआ करती थी अब उन्हें ग्रामों में ही कहीं कहीं स्थान मिल जाता है। नयी तरकारियों का जमाव अब ऐसा हो गया है कि ग्रामों में भी इनकी खेती अच्छी तरह से होने लगी है।

गुणावगुण के हिसाब से देखा जाय तो कुछ को छोड़ कर नयी तरकारियाँ बहुधा भारी अर्थात् देर से पचने वाली होती हैं और पुरानी तरकारियाँ शीघ्र पच जाती हैं। ठण्डे देशों या प्रान्तों में गरिष्ठ तरकारियों का उपयोग अच्छा होता है

परन्तु गर्म देशों में शीघ्र पचने वालियों का ही उपयोग अधिक करना चाहिए। जहाँ तक बने ऋतु के अनुसार दोनों का प्रयोग ठीक होता है।

खेती की रीति का विचार किया जाय तो नयी और पुरानी तरकारियों में निम्न लिखित विभिन्नताएँ पायी जाती हैं। पुरानी तरकारियाँ बहुधा वर्षा ऋतु में बोयी जाती हैं इसलिए वर्षा ऋतु के बाद थोड़ी सी सिंचाई से काम चल सकता है। इनके लिए खाद भी कम देना होता है। इनके विपरीत नयी तरकारियों में खाद विशेष देना पड़ता है और सिंचाई भी अधिक करनी पड़ती है। मँहगी बिकने के कारण पुरानी तरकारियों की अपेक्षा नयी तरकारियों से प्रति एकड़ लाभ विशेष होता है।

तरकारी की खेती के लिए चाहे पुरानी तरकारियाँ चुनी जायँ या नयी, लाभ-हानि अधिकतर कृषक की योग्यता पर निर्भर है। जिन कृषकों का मुख्य व्यवसाय यही हो उन्हें दोनों प्रकार की तरकारियाँ लगानी चाहिए।

तरकारी की खेती करने वाले तीन प्रकार के मनुष्य पाए जाते हैं। एक वे रईस हैं जिनके खेतों या बग़ीचों में निजी उपयोग के लिए ही तरकारियाँ पैदा की जाती हैं। उनके यहाँ व्यय की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। वहाँ तो बाग़ीचों की सुन्दरता और वस्तुओं के उत्तमोत्तम होने का ही ध्यान रक्खा जाता है। दूसरे वे साधारण कृषक हैं जो अपने घरों के निकट या खेतों में इधर उधर थोड़ी बहुत तरकारियाँ लगा

देते हैं जिनमें से यदि निजी उपयोग के बाद कुछ बचीं तो बेच दी जाती हैं और तीसरे वे मनुष्य हैं जिनका जीवन तरकारी की खेती पर ही निर्भर है। इन्हें आय-व्यय का बहुत विचार करना पड़ता है। स्थान का चुनाव, भूमि की जुताई, खाद, सिंचाई, फ़सल की तैयारी और बिक्री आदि सब कार्य्यों की ओर उन्हें बहुत ध्यान देना पड़ता है। उनका लक्ष्य यह होना चाहिए कि कम से कम व्यय से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके। वैसे तो यह पुस्तक तीनों प्रकार की खेती करने वालों के लिए उपयोगी है परन्तु लिखते समय इसी व्यवसाय पर निर्भर रहने वालों के लक्ष्य की ओर विशेष ध्यान रक्खा गया है।

स्थान का चुनाव—

वर्तमान समय में तरकारियों का व्यवसाय ग्रामों की अपेक्षा नगरों में अधिक होता है इसलिए जहाँ तक हो सके ज़मीन नगरों के निकट ही प्राप्त करनी चाहिए। यदि नगरों के निकट न मिले अथवा मँहगी मिले तो ऐसा स्थान चुनना चाहिए जो रेलवे स्टेशन के निकट हो या सड़कों के किनारे हो कि जिससे बहुत जल्दी और आसानी से माल बाज़ार में पहुँचाया जा सके। तरकारी की खेती में सिंचाई की विशेष आवश्यकता होती है इसलिए स्थान को चुनते समय यह प्रयत्न करना चाहिए कि जिसमें नहर से जल प्राप्त किया जा सके। यदि ऐसा असम्भव हो तो ऐसी भूमि

चुननी चाहिए जिसमें कुओं से काम चलाया जा सके। नगरों की निकटता और सिंचाई की सुविधा के साथ साथ यह भी देखना चाहिए कि मज़दूरों के मिलने में कठिनाई तो नहीं होगी क्योंकि इस खेती में समय समय पर मज़दूरों की आवश्यकता अधिक पड़ती है।

क्षेत्रफल—

किसी भी व्यवसाय या जीविका के साधन के चुनाव से प्रथम यह सोचना पड़ता है कि किन किन व्यवसायों से हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है और भविष्य में उनकी उन्नति की क्या आशा है। इसी भाँति तरकारी की खेती वालों को भी पहले यह निश्चय कर लेना चाहिए कि उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मासिक आय कितनी होनी चाहिए। साधारण तौर पर यह कहा जा सकता है कि लग भग १००) रुपये की मासिक आय के लिए कम से कम दस एकड़ भूमि अवश्य होनी चाहिए जिसमें से आधा एकड़ मकानात, नर्सरी इत्यादि में और आधा एकड़ के क़रीब सड़कों में लग जायगी।

पूँजी—

आवश्यकीय पूँजी का अनुमान स्थानीय स्थितियों के आधार पर किया जा सकता है। ज़मीन का मूल्य या भूमि-कर, पशुओं का मूल्य, मज़दूरी की दर तथा कृषि के औज़ारों की क़ीमत सब स्थानों पर एक सी नहीं होती इसलिए

यहाँ दस एकड़ की तरकारी की खेती के लिए मकानात, कृषि के औज़ार, पशु तथा मज़दूर और आवश्यकीय वस्तुओं की सूची दे देना ही ठीक होगा। इस सूची से स्थानीय दर को ध्यान में रखकर पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं।

मकान, पशु और अन्य वस्तुएँ—

प्रत्येक तरकारी की खेती के स्थान (फ़ार्म) पर दो एक मकान अवश्य होने चाहिएँ। एक मकान ऐसा हो जिसमें पशु, खेती के औज़ार, खाद तथा बैलों के खाने का दाना रक्खा जा सके। उसके निकट ही एक ऐसा मकान होना चाहिए जिसके एक हिस्से में चौकीदार रह सके और दूसरे में बीज और तरकारी आदि रखने का प्रबन्ध हो। दोनों ही मकान फूस के बनाये जा सकते हैं परन्तु दूसरे को कच्चा पक्का बना लेना अच्छा होता है।

कुआँ—

जहाँ सिंचाई नहर से हो वहाँ सिर्फ़ पीने का जल प्राप्त करने के लिए एक छोटा कुआँ या 'ट्यूब वेल' होना चाहिए परन्तु यदि कहीं निकट से ही स्वच्छ जल प्राप्त किया जा सके तो इसकी कोई आवश्यकता नहीं मालूम पड़ती। नहर के अभाव में दस एकड़ भूमि की सिंचाई के लिए एक कुआँ ऐसा होना चाहिए जिसका पानी दिन भर दो मोट चलाने पर भी न टूटे और टूटा

हुआ पानी रात्रि में भर जाय। बड़े फ़ार्म पर मोट का काम पम्प और इञ्जिन से भी लिया जा सकता है।

पशु—

जहाँ मोट से सिंचाई न करना हो वहाँ दस एकड़ भूमि के लिए एक जोड़ी अच्छे बैलों से भली-भाँति काम चल सकता है परन्तु तरकारियों को बाज़ार भेजने में असुविधा न हो इसलिए एक हलकी जोड़ी भी और रख लेनी चाहिए। जहाँ मोट से सिंचाई करना हो वहाँ तो दो जोड़ी अच्छे बैल अवश्य रखने चाहिएं।

स्थायी मज़दूर या नौकर—

एक योग्य माली और तीन स्थायी मज़दूरों से दस एकड़ की खेती अच्छी तरह से चल सकती है। काम की भीड़ के समय पर अस्थायी मज़दूरों से काम लिया जा सकता है। स्मरण रहे कि मालिक की ज़बान और आंख नौकरों के हाथ से अधिक काम करती है इसलिए नौकरों का काम बराबर देखते रहना चाहिए और मधुर भाषण से उत्साह बढ़ाते हुए काम लेना चाहिए।

कृषि के औज़ार तथा अन्य वस्तुएँ—

दस एकड़ की खेती के लिए निम्न लिखित औज़ारों का प्रबन्ध होना चाहिए।

मोट रस्सियों सहित (यदि कुओं से पानी उठाना हो)	२
सादे हल	२

नाली बनाने वाला हल (Ridging plough)	१
बखर (Scraper and clod crusher combined)	२
हाथ से चलाने वाले हो (Hoes)—एक पहिए वाले	२
बोने का यंत्र (Seed drill)	१
गाड़ी	१
हाथ गाड़ी (Wheel barrow)	१
काँटे (Forks)	२
कुदाल (Spades)	६
खुर्पी	४
छुरी या चाक़ू	२
कैंची बड़ी	१
चलनी (नर्सरी के लिए मिट्टी और खाद चालने के लिए)	१
हज़ारे या झाँझ(Watering cans)	४
दतारी (Garden rakes)	२
कूल्हाड़ी	१
हँसुआ	२
आरी	१
बसूला	१
रुखानी	१
काँटा बड़ा, वज़न के लिए	१
टोकरियाँ	१२
देवदार के बक्स इत्यादि	

प्रकरण २

भूमि की जाति और उसका सुधार

स्थान के चुनाव के पश्चात् मुख्य कर्तव्य ज़मीन की पहचान का होना चाहिए ताकि तरकारी की चाह के योग्य मिट्टी प्राप्त की जा सके या बनायी जा सके। वैज्ञानी मिट्टी की पहचान उसकी भौतिक और रासायनिक स्थिति तथा उसमें बसने वाले सूक्ष्म जन्तुओं की संख्या और उनके कर्तव्य की जाँच करके करते हैं। साधारण कृषक मिट्टी का नामकरण उसमें बालू की मात्रा पर करते हैं। जिसमें बालू अधिक होती है उसे बलुआ और जिसमें महीन मिट्टी अधिक होती है उसे मटियार कहते हैं। जिस मिट्टी में दोनों क़रीब क़रीब बराबर भाग में होती हैं उसे दुमट कहते हैं। बालू की मात्रानुसार साधारण मिट्टी पाँच भागों में विभाजित की जा सकती है, जैसे बलुआ, बलुआ-दुमट, दुमट, मटियार-दुमट और मटियार। जिसमें ८० शतांश से अधिक बालू हो उसे बलुआ माननी चाहिए। दूसरी में ६० से ८०, तीसरी में ४० से ६० और चौथी में २० से ४० शतांश भाग बालू का रहता है। मटियार में बालू का भाग २० शतांश से कम होता है*।

---

* मोटे तौर पर मिट्टी की जाँच निम्न लिखित रीत से की जा सकती है। खेत में चार पाँच जगह छः इञ्च लम्बे चौड़े और एक फुट गहरे गढ़े

तरकारियों के लिए सब से उत्तम ज़मीन दुमट होती है क्योंकि एक तो इसकी जुताई और सिंचाई सरलता से हो सकती है। और दूसरी बात यह है कि ऐसी मिट्टी में साल भर तक

खुदवाये जाँय और खुदी हुई मिट्टी को इकट्ठी करके खूब मिला लेनी चाहिए। उसमें से करीब पाव भर मिट्टी लेकर उसे सुखा लेनी चाहिए। बाद में लकड़ी के डण्डे से उसके ढेले तोड़कर उसे ऐसी चलनी से चाल ली जाय जिसके छिद्र २ सम (cm) यानी १/२.८ इञ्च व्यास के हों। चली हुई मिट्टी से दश माशा मिट्टी लेकर एक चौड़े मुँह की बोतल में डाल दो। बोतल में दस सम की ऊँचाई तक पानी भर कर के रात भर रहने दो। दूसरे दिन लोहे के छड़ से अथवा लकड़ी के चिकने छड़ से जिसपर मिट्टी चिपकने नहीं पावे हिला दो और पाँच मिनट तक ठहर जाओ। बाद में धीरे से बोतल को टेढ़ी करके पानी को इस तरह से गिराओ कि नीचे बैठा हुआ हिस्सा जमा रहे। उस बोतल में दस सम तक फिर पानी भरके हिला दो और पाँच मिनट बाद फिर पानी फेंक दो। इसके बाद प्रति चार चार मिनट ठहर कर पानी गिराते रहो जब तक कि ऊपर का पानी साफ न हो जाय। ऐसा करने से गँदले पानी के साथ मिट्टी के दूसरे भाग निकल जायँगे। और नीचे बालू रह जायगी। उस बालू को सुखाकर वज़न कर लो। यदि वह बालू आठ माशे से अधिक हो तो उस मिट्टी को बलुआ माननी चाहिए। यदि उसका वज़न छः से आठ माशे हो तो वह मिट्टी बलुआ दुमट होगी। दुमट में बालू का वज़न चार माशे से छः माशे तक निकलेगा और मटियार दुमट में दो से चार माशे होगा। यदि दो माशे से कम बालू निकले तो उस मिट्टी को मटियार मानना होगा। (A rapid method for the mechanical anlaysis of soils by Dr. N. D. Vyas and K. C. Batra. *Current science*, Sept. 1944, p. 225-227 के अधार पर)

एक-न-एक प्रकार की तरकारी पैदा की जा सकती है। बलुआ ज़मीन में सिचाई अधिक करनी पड़ती है और यदि मटियार हुई तो उसकी जुताई में कठिनाई होती है। बरसात में ऐसी मिट्टी में पानी अधिक रहने के कारण तरकारियों में बीमारियाँ लग जाती है। दोनों प्रकार की मिट्टी के लिए दुमट मिट्टी की अपेक्षा खाद भी अधिक देना पड़ता है।

यदि दुमट ज़मीन न मिले तो जैसी हो उसी को सुधार कर काम में लानी चाहिए। मटियार ज़मीन में बरसाती पानी जल्दी निकल जाय इसके लिए कुछ कुछ दूरी पर खुली हुई नालियाँ बनवा देनी चाहिए। जहाँ अधिक आय की सम्भावना हो वहाँ कुछ व्यय करके कृषि विभाग की सहायता लेकर मिट्टी के झिर-झिरे (Porous tiles) नल खेतों में ढाई फ़ीट से तीन फ़ीट की गहराई पर और पन्द्रह से बीस फ़ीट की दूरी पर लगवा देना चाहिए ताकि उनके द्वारा पानी ज़मीन से खींचा जाकर खेतों के ढाल की ओर बहाया जा सके। बलुआ और मटियार दोनों ज़मीन का सुधार हरे खाद या गोबर के खाद से भी हो सकता है। इनसे बलुआ ज़मीन में पानी रोकने की शक्ति बढ़ जाती है और भारी ज़मीन हलकी हो जाती है।

ज़मीन के चुनाव में उसकी सतह का भी ध्यान रखना चाहिए। तरकारी की खेती के लिए ऊँची नीची ज़मीन अच्छी नहीं होती क्योंकि उसमें पानी ठीक से नहीं पहुँचाया जा सकता। ज़मीन समतल होनी चाहिए। जिधर से पानी की आय हो उधर

से दूसरी ओर कुछ हलका सा ढाल उत्तम होता है इससे जहाँ आवश्यकता हो वहाँ पानी सरलता से पहुँचाया जा सकता है।

ज़मीन की जुताई—

यह तरकारी की जाति पर निर्भर है। जड़ वाली या कंद के लिए अधिक गहरी तथा दूसरी तरकारियों के लिए कम गहरी होनी चाहिए। बड़े बीजों की अपेक्षा छोटे बीजों के लिए ऊपर की मिट्टी बहुत महीन होनी चाहिए। प्रत्येक फ़सल के लिए कम से कम दो बार हल और दो बार बखर से जुताई अवश्य करनी चाहिए। जहाँ सिंचाई करनी हो वहाँ अन्तिम जुताई के बाद नालियाँ, क्यारियाँ इत्यादि बनवा लेनी चाहिए। तरकारी की जाति के अनुसार जुताई का वर्णन भिन्न-भिन्न तरकारियों के विवरण में विशेष रूप से दिया गया है।

—

प्रकरण ३

खाद

जिस प्रकार जीवधारियों का पोषण आहार से होता है उसी भाँति पौधों का पोषण खाद से होता है। खाद द्वारा ही पौधों की बाढ़ होती है। पौधों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि ये कई प्रकार के तत्वों के मेल से बने हैं जिनमें से प्रधान तत्व, कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नत्रजन, स्फुर, पोटाश, खटिक, मेग्नेशियम, लोहा और गंधक है। इनमें से पहला तत्व, पौधे अपने पत्ते और हरे अंगों द्वारा वातावरण से, दूसरा और तीसरा कुछ वातावरण से और अधिकांश जल के रूप में जड़ों द्वारा मिट्टी से और शेष तत्व मिट्टी से ही जड़ों द्वारा प्राप्त करते हैं। इनमें से नत्रजन, स्फुर और पोटाश भूमि में न्यूनाधिक होते हैं इसलिए खाद द्वारा इन्हीं के पहुँचाने का विचार रक्खा जाता है। अन्य तत्वों की मात्रा साधारण भूमि में काफ़ी होती है। इन तीन तत्वों के सिवाय अम्लदार मिट्टी में अम्ल की शान्ति के लिए खटिक (चूना) का भी उपयोग किया जाता है। ये तत्व, तत्व के रूप में ही काम में नहीं लाये जा सकते। पौधे इनका उपयोग इनके नमक के रूप में करते हैं। भिन्न भिन्न तत्वों का असर तरकारियों पर भिन्न भिन्न प्रकार का होता है

नत्रजन—इससे धड़, शाखाएँ और पत्तों की पुष्टि होती है इसलिए जब पौधों की बाढ़ के दिन हों उन दिनों में इसकी चाह अधिक होती है। यह समय तरकारियों के बोने के कुछ समय बाद से फल आने तक का होता है। इस तत्व की आवश्यकता क़रीब क़रीब सब तरकारियों को होती है परन्तु पत्तेदार और फूलदार को इससे विशेष लाभ पहुँचता है।

स्मरण रहे कि यदि नत्रजन का खाद बहुत अधिक मात्रा से दिया जायगा तो पत्ते वाली को छोड़ कर अन्य तरकारियाँ देरी से तैयार होंगी और व्याधियों का आक्रमण भी विशेष होने की सम्भावना रहेगी।

स्फुर—इससे पहले जड़ों की पुष्टि होती है और बाद में फल और बीज के लिए इसका उपयोग होता है। इससे फ़सलें कुछ जल्दी तैयार होती हैं। फल और बीजदार तरकारियों के लिए इस तत्व के पूर्ता खादों का उपयोग करना चाहिए।

पोटाश—इससे जड़ और कंद वाली जैसे गाजर, मूली, चुकन्दर, आलू और फलदार जैसे बैंगन, टमाटर, मिर्च आदि तरकारियों को अच्छा लाभ पहुँचता है। ऐसे खाद से भारतवर्ष के अधिकांश स्थानों में उपज में तो विशेष लाभ न भी हो सकता है परन्तु रूप रंग और आकार में तरकारियाँ अच्छी होंगी। पौधे स्वस्थ भी होंगे।

स्मरण रहे कि एक ही प्रकार के तत्व के डालने से पूर्ण लाभ नहीं हो सकता। खाद द्वारा जहाँ तक हो तीनों तत्वों को खेतों

में पहुँचाना चाहिए। सिर्फ़ मात्रा, फ़सल की जाति अनुसार, न्यूनाधिक होनी चाहिए।

ये तत्व सजीव अथवा निर्जीव खाद के रूप में खेतों में डाले जाते हैं। भारतवर्ष में बहुधा सजीव खाद का ही उपयोग किया जाता है और जहाँ तक मिल सके इनका ही उपयोग करना चाहिए। इनके बिना निर्जीव खाद के आधार पर ही काम नहीं चल सकता। निर्जीव खाद का उपयोग सजीव खाद की कमी पूरी करने के लिए करना चाहिए। खटिक अर्थात् चूने जैसे खाद की पूर्ति सजीव खाद द्वारा नहीं हो सकता इसलिए निर्जीव खाद द्वारा ही होनी चाहिए।

सजीव अथवा निर्जीव खाद जिनका उपयोग तरकारियों के लिए किया जाता है निम्न लिखित है।

सजीव खाद—

नत्रजन प्रधान—जिनमें स्फुर और पोटाश की मात्रा से नत्रजन की मात्र अधिक हो।

(१) पशुओं का मल-मूत्र और पशुशालाओं के घास-पात का मिश्रण।

(२) मनुष्यों का मल-मूत्र।

(३) पक्षियों की विष्ठा।

(४) खली का खाद।

(५) हरा खाद।

(६) (क) सूखे तथा हरे पत्तों का खाद, (ख) "काम्पोस्ट"

(७) शहर के कूड़ा कर्कट का खाद।

(८) शहरों की मोरियों का पानी।

स्फुर प्रधान—जिनमें नत्रजन और पोटाश से स्फुर की मात्रा अधिक हो।

(१) हड्डियों का खाद।

(२) मछलियों का खाद।

(३) पक्षियों की विष्ठा।

पोटाश प्रधान—जिनमें स्फुर और नत्रजन की मात्रा की अपेक्षा पोटाश की मात्रा विशेष हो।

(१) सामुद्रिक जंगल या नदी, नाले या तालाब में उत्पन्न होने वाले सेवार।

निर्जीव खाद—

नत्रजन पूर्ता—जिनसे सिर्फ़ नत्रजन ही प्राप्त होती है।

(१) सोडियम नाइट्रेट	१५ शतांश नत्रजन
(२) एमोनियम सलफ़ेट	२० " "
(३) एमोनियम क्लोराइड	२५ " "
(४) सायनामाइड	२० " "
(५) केलशियम नाइट्रेट	१३ से १६ शतांश नत्रजन

स्फुर पूर्ता—जिनसे स्फुर ही की पूर्ति हो।

(१) सुपर फ़ॉसफ़ेट	२० से ४० शतांश स्फुर
(२) बेसिक स्लैग	१६ से १८ " "

पोटाश पूर्ता—जिनसे पोटाश ही की पूर्ति हो ।

(१) पोटेशियम सलफ़ेट	लगभग ४८ शतांश पोटाश
(२) पोटेशियम क्लोराइड	,, ५० ,, ,,

नत्रजन और स्फुर मिश्रित—

	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर
(१) डाईमॉन फ़ॉस	२१	५४
(२) एमोफ़ॉस	१३	४८
(३) ल्यूनोफ़ॉस	२०	२०

		शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर
(४) नाइसी फ़ॉस	नं० १	१४	४५
	नं० २	१८	१८

नत्रजन और पोटाश मिश्रित—

	शतांश नत्रजन	शतांश पोटाश
(१) पोटेशियम नाइट्रेट	१४	४८

स्फुर और पोटाश मिश्रित—

	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
(१) राख	२	४ से ६

नत्रजन, स्फुर और पोटाश मिश्रित—

	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
(१) नाइट्रोफ़ोस्का	१५	१५	२०

(२) स्फुर की मिट्टी ।

(३) तालाब, कुएँ आदि की मिट्टी ।

उपर्युक्त सूची के सब खादों का विस्तारपूर्वक वर्णन यहाँ स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सकता। मुख्य मुख्य खादों का ही संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है।

खाद की मात्रा—

खाद कितना देना चाहिए यह भूमि की उर्वरा शक्ति और तरकारी की जाति पर निर्भर है। इस पुस्तक में मात्राएँ दी गयी हैं वे साधारण उर्वरा भूमि के लिए हैं और जो कम व्यय से दी जा सकती हैं। बतलायी हुई मात्राओं से कुछ अधिक खाद देने से तरकारियाँ और भी उत्तम प्राप्त की जा सकती हैं और प्रति एकड़ आय भी विशेष हो सकती है परन्तु व्यय के प्रमाणानुसार आय नहीं होती।

वर्तमान समय में कृत्रिम खाद कई प्रकार के मिलने लगे हैं जिनमें खाद्य तत्वों के साङ्केतिक अङ्क ५-१०-५. २-८-१० इत्यादि रहते हैं। इन चिन्हों का अभिप्राय यह होता है कि प्रत्येक १०० सेर पहले खाद से आप को ५ सेर नत्रजन, दस सेर स्फुर (P_2O_5) और पाँच सेर पोटाश (K_2O) मिलेंगे और दूसरे १०० सेर खाद से २, ८ और १० सेर नत्रजन, स्फुर और पोटाश मिलेंगे।

साधारणतः पत्ते वाली साग भाजी के लिए ५-१०-५.

कन्द और जड़वाली के लिए २-८-१० और फली और फल

वाली के लिए ४-८-८ के अङ्कों के लगभग वाले खाद काम में लाये जायँगे तो अच्छा होगा।

गोबर का खाद—

पशुओं के मलमूत्र और पशुशालाओं के घास-पात के मिश्रण को गोबर का खाद कहना चाहिए क्योंकि ये सब पदार्थ एक साथ ही रक्खे जाते हैं। इस खाद का उपयोग बहुत समय से चला आता है और प्रायः सभी कृषक इसके उपयोग का लाभ जानते हैं। यह एक ऐसा खाद है जिसके द्वारा तीनों तत्वों की प्राप्ति के सिवाय भूमि की दशा भी सुधर जाती है और न्यून तत्वों* की पूर्ति भी होती रहती है। भूमि चाहे बलुआ हो या मटियार दोनों ही इससे अच्छी हो जाती हैं। इससे भूमि में सूक्ष्म जन्तुओं की वृद्धि भी होती है जिनमें एक ऐसी जाति के भी होते हैं जो वायु-मंडल से नत्रजन लेकर भूमि में संचित करते हैं।

इस खाद का न्यूनाधिक गुण पशुओं की जाति और उनके भोजन† तथा खाद के रखने की रीति पर निर्भर है। गाय-

---

*वैज्ञानिक खोज से यह पता चला है कि पौधों की स्वस्थ बाढ़ के लिए भूमि में कुछ न्यून तत्वों (minor elements) का होना जरूरी है। उनके अभाव में पौधे व्याधिग्रस्त-से हो जाते हैं। गोबर के खाद का उपयोग किया जाय तो उनकी पूर्ति होती रहती है।

† *Study of the losses of fertilising constituents from cattle dung during storage and a method for their control By N. D. Vyas, L. Ag., Agri. & Live-stock in India. Vol. 1, Part 1 January, 1931.*

बैल की अपेक्षा भेड़-बकरी का खाद विशेष लाभदायक होता है। किसी किसी तरकारी के लिए घोड़े की लीद अच्छी मानी गयी है। जिन पशुओं को भूसी के साथ अनाज या दाना खिलाया जाता है उनका मल-मूत्र केवल भूसी खाने वाले पशुओं के मल-मूत्र से अधिक गुणकारी होता है इसलिए जब गोबर का खाद मोल लिया जाय तो इस बात का पता लगा लेना चाहिए कि वह खाद कैसे पशुओं का है और उनका पोषण किस प्रकार के आहार से किया गया है। इसके सिवाय यह भी देखना चाहिए कि मल-मूत्र में घासपात की मात्रा कितनी है। खाद के रक्खे जाने की रीति पर भी विचार करना चाहिए। सूर्य की तेज़ी से तपा हुआ या वर्षा के जल से धुला हुआ खाद छाया में रक्खे हुए खाद की अपेक्षा कम लाभदायक होता है। खाद का मूल्य ठहराने में इन सब बातों पर ध्यान रखना चाहिए।

खाद खेतों में डालते समय यह देखना चाहिए कि वह कितना सड़ा हुआ है और कितना सड़ा हुआ खाद किस तरकारी के योग्य होता है। बहुत सी तरकारियाँ ऐसी होती हैं कि जिन्हें कम सड़े हुए खाद से लाभ की अपेक्षा हानि पहुँचती है और बहुत सी ऐसी होती हैं जिन्हें ऐसे खाद से हानि नहीं पहुँचती बल्कि लाभ ही होता है। जड़ और फलदार तरकारियों के लिए सड़ा हुआ खाद ही देना चाहिए। हल्की मिट्टी में अच्छा सड़ा हुआ और भारी मटियार में कम सड़ा हुआ डाल सकते हैं।

पत्ते वाली तरकारियाँ जैसे गोभी, साग आदि के लिए कम सड़े हुए खाद का उपयोग किया जा सकता है। खाद डालने में ऋतु का भी ध्यान रखना चाहिए। कम सड़ा हुआ खाद यदि बरसात में डाला जाय तो विशेष हानि नहीं पहुँचाता परन्तु यदि जाड़े या गर्मी में डाला जाय तो हानि करता है। घरेलू पशुओं का जो खाद रक्खा जाय उसे धूप और बरसात से बचाने के लिए छाया में रखना चाहिए। अन्य प्रकार की न हो तो फूस की छाया ही अच्छी होती है। खाद जब सड़ता है तो उसके प्रधान तत्व, नत्रजन, की कुछ मात्रा वायुमंडल में चली जाती है। यदि खाद को ढेरी पर एक शतांश यानी प्रति ढाई मन खाद के लिए एक सेर सुपरफॉसफेट* छींट दिया जाया करे तो बहुत अंश तक उड़ने वाली नत्रजन की रुकावट हो जाती है। खाद को इस तरह से रखना चाहिए कि जिसमें कुछ भाग गढ़े में और कुछ ऊपर रहे। गढ़े के फर्श को मुरम से खूब पिटवा देना चाहिए जिससे खाद मिट्टी में न सोख जाय। दो जोड़ी पशुओं के गोबर के खाद के लिए ८×८×४ फ़ीट का गढ़ा काफ़ी होता है। पशुओं का मूत्र वृथा न चला जाय इसलिए पशुशालाओं के फ़र्श पर मिट्टी बिछा कर रखनी चाहिए जिसको कुछ दिनों में खाद की ढेरी पर या खेतों में डालकर दूसरी मिट्टी पशुशालाओं में बिछा देनी चाहिए। बहुधा यह देखा जाता है कि खेतों में खाद की

*Ibid, p. 18.

छोटी छोटी ढेरियाँ बहुत दिनों तक वैसी ही पड़ी रहती हैं। ऐसा करने से धूप लगने के कारण खाद की उपज शक्ति कुछ कम हो जाती है इसलिए खेतों में डालते ही खाद मिट्टी में मिला देना चाहिए।

गोबर के खाद में प्रधान खाद्य तत्वों की मात्रा:—ये मात्राएँ खाद के रखने की रीति, पशुओं के खान पान तथा खाद में कूड़ा कर्कट के मिश्रण पर निर्भर है। साधारणतः बरसात और धूप से बचाये हुए एक साल के सड़े हुए खाद में ४० शतांश जल, ०.५ शतांश नत्रजन, ०.३ शतांश स्फुर और ०.६ शतांश पोटाश मान लेना चाहिए।

(१) गोबर के खाद की मात्रा :—

यह मात्रा तरकारी की जाति, उसकी पैदावार तथा मूल्य और ज़मीन के उर्वरापन पन पर निर्भर है। साधारण तौर पर यह कहा जा सकता है कि देशी या देश रंजित की अपेक्षा नयी आगन्तुक के लिए अधिक और पत्ते और फूलवाली से जड़ वाली के लिए अधिक डालना चाहिए। इसी भाँति महँगी बिकने वाली के लिए भी अधिक खाद लाभदायक ही होगा।

मेथी, पालक, धनिया आदि के लिए १०० से १२५ मन, खरबूजा, ककड़ी, कद्दू आदि के लिए १२५ से १५० मन, विलायती मटर, फ्रेंचबीन आदि के लिए १५० से १७५ मन, बैंगन, टमाटर. परवल आदि के लिए १७५ से २०० मन,

गाजर, मूली, शलजम आदि के लिए २०० से २५० मन, और गोभी, आलू आदि के लिए क़रीब ३०० मन प्रति एकड़ डालना चाहिए।

बहुत से लोग प्रत्येक तरकारी को खाद न देकर एक ही बार अधिक खाद दे देते हैं। यदि ऐसा करना हो तो वह बरसाती फ़सल को देना चाहिए।

(२) मनुष्यों का मल-मूत्रः--

इस खाद का प्रचार चीन और जापान में बहुत है। वहाँ इसे घृणा की दृष्टि से नहीं देखते। अब भारतवर्ष में भी कुछ प्रचार हो रहा है। इसका उपयोग तीन रीति से किया जाता है। खेतों में नालियाँ बनाकर ताज़ा गाड़ देना या मिट्टी के साथ सड़ाकर खेतों में डालना या पानी में घोल कर पम्प द्वारा खेतों में पहुँचाना। तरकारी की खेती में पहली रीति काम में नहीं लायी जा सकती है क्योंकि उसमें कुछ दिनों के लिए बिना फ़सल के खेतों को छोड़ना पड़ता है जिनको इस व्यवसाय वाले नहीं छोड़ सकते। दूसरी रीति में मैले को मिट्टी या राख के साथ सड़ाकर सुखाते हैं और फिर बेच देते हैं। ऐसे खाद को अँग्रेज़ी में पुडरेट कहते हैं। इसकी मात्रा गोबर के खाद की मात्रा से आधी होनी चाहिए।

तीसरी रीतिः—आज कल बहुत से शहरों में पैखाने आप से आप धुल जाते हैं और मैला बहकर शहर के बाहर एक स्थान पर चला जाता है। वहाँ रासायनिक क्रिया और सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा

विच्छेदन होता है और फिर विच्छेदित पदार्थ के घोल से सिंचाई की जाती है। ऐसी सिंचाई से अच्छी तरकारियाँ पैदा की जाती हैं। बड़े बड़े शहरों में आजकल सीवेज प्लेन्ट (Sewage plant) लगाये जाते हैं। मैले और पानी के घोल में हवा देकर ऐसा विच्छेदन कर देते हैं कि दुर्गन्ध मिट जाती है पानी साफ़ पानी जैसा अलग हो जाता है जिसे जितना हो सके उतना सिंचाई के काम में लाकर शेष नदियों में बहा दिया जाता है। गाढ़ा पदार्थ जिसे स्लज (Sludge) कहते हैं सुखा कर खाद के काम में लाया जाता है। इसमें लगभग ३ से ५ शतांश नत्रजन, २ से ३ शतांश स्फुर और ०·५ से १·० शतांश तक पोटाश रहता है।

(३) पक्षियों की विष्ठा का खादः—

मुर्ग़ियाँ, कबूतर, बतख़ आदि पालतू पक्षी या अन्य पक्षियों की विष्ठा का खाद भी उत्तम होता है। सूखे हुए खाद में लगभग ४ शतांश नत्रजन, २·२७ शतांश स्फुर और १·२ शतांश पोटाश रहता है। विष्ठा मिट्टी के साथ मिलाकर रखनी चाहिए नहीं तो नत्रजन वायुमंडल में उड़ जाती है। यह खाद बहुतायत से नहीं मिलता। थोड़ा बहुत कहीं हुआ तो काम में ले आना चाहिए। मिट्टी के साथ मिले हुए इस खाद को लगभग दस मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए।

चमगादड़ की विष्ठा भी खाद के लिए अच्छी होती है। इसमें क़रीब ८ शतांश नत्रजन, ३·८ शतांश स्फुर और १·३ शतांश पोटाश रहते हैं।

(४) खली का खाद :—

बहुत जल्दी लाभ पहुँचाने वाला खाद सड़ी हुई खली का होता है। इसका गुण कई कृत्रिम निर्जीव खाद से भी अधिक होता है। भारतवर्ष में खली मिलती भो बहुत है परन्तु इसके उपयोग के ज्ञान के अभाव के कारण इसका प्रचार बहुत नहीं हुआ है।

खलियाँ दो प्रकार की होती हैं। एक वे जो पशुओं को खिलायी जाती हैं और दूसरी वे जो खिलाने के योग्य नहीं होतीं। जो खलियाँ पशुओं को खिलायी जाती हैं उनका भी बहुत सा भाग रूप परिवर्तनोपरान्त गोबर और मूत्र के रूप में खेतों में पहुँच ही जाता है परन्तु जो ज़हरीली होने के कारण नहीं खिलायी जातीं उन्हें सड़ाकर डालनी चाहिए।

* खलियों को सड़ाने की रीति :—

१०० भाग खली, २५ भाग मिट्टी, ५ भाग कोयला और ६० से ७० भाग जल का मिश्रण बनाकर छाया में क़रीब तीन मास तक सड़ा लेना चाहिए। इस ढेरी को ढककर रखना चाहिए ताकि अधिक पानी उड़ने न पावे। कभी कभी दस पन्द्रह दिन पीछे पानी भी छिड़कते रहना चाहिए।

खलियों के खाद में स्फुर और पोटाश भी कुछ परिमाण में रहते हैं परन्तु इनका उपयोग नत्रजन के विचार से ही किया जाता है। साधारण खलियों में ये तत्व निम्न लिखित परिमाण में पाये जाते हैं।

**Pusa Bulletin No. 176 by N. D. Vyas, L. Ag., 1928.*

(१) पशुओं को खिलायी जाने वाली खलियाँ :—

नाम खली	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
मूंगफली	७·६	२·३	२·२
सरसों	५·६	१·९	१·४
कुसुम	५·८	१·३	१·२
अलसी	५·०	१·६	१·६
तिल	५·०	१·१	१·०
रामतिल्ली	४·५	२·०	१·९
नारियल	३·७	१·९	१·८
बिनौला (छिलका सहित)	२·६	१·२	१·१

(२) पशुओं को नहीं खिलायी जाने वाली खलियाँ :—

	शतांश नत्रजन	शतांश स्फुर	शतांश पोटाश
एरंडी (castor)	५·०	१·८	१·६
नीम	४·४	१·०	१·४
करंज	३·५	०·७	१·३
महुआ	२·६	०·८	२·८

खलियों के खाद की मात्रा :—

इनकी मात्रा नत्रजन के आधार पर होनी चाहिए। क़रीब १० सेर से २० सेर नत्रजन प्रति एकड़ पहुँचे इतनी खली, तरकारी से प्राप्त होने वाली आय का अनुमान करके, डालनी चाहिए। कभी कभी गोबर के खाद और खली दोनों का उपयोग एक साथ किया जाता है। उस स्थिति में न्यूनाधिक परिमाण का अन्दाज़ कर लेना चाहिए।

(५) हरा खादः--

इस खाद का उपयोग साधारणतः तरकारी की खेती में विशेष नहीं हो सकता क्योंकि चार पाँच महीने तक खेत बिना तरकारी के छोड़े जाना चाहिए सो नहीं छोड़े जा सकते। फिर भी यदि सम्भव हो तो इसका उपयोग कर सकते हैं। जहाँ मक्का की फ़सल ली जाती है वहाँ यदि उसके साथ उड़िद बो दिया जाय तो अच्छा होता है। मक्का की फ़सल लेते ही उड़िद को गाड़ देना चाहिए। ऐसा करने से फ़सल भी मिल जाती है और उड़िद गाड़ देने से हरा खाद भी खेतों में पहुँच जाता है। साधारणतः हरे खाद की फ़सल बरसात के प्रारम्भ में बोयी जाती है और जब दो ढाई महीने की हो जाती है तो उसे उसी खेत में गाड़ देते हैं। ऐसी फ़सल के सड़ने के लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है इसलिए वर्षा ऋतु की समाप्ति के पूर्व ही गाड़ देनी चाहिए। बरसात के बाद गाड़ने से यह अच्छी सड़ने नहीं पाती।

हरे खाद के लिए फलीदार, जल्दी बढ़ने वाली, ज्यादे पत्ते वाली और कोमल डंडो वाली फ़सल चुननी चाहिए। फलीदार फ़सलें इसलिए चुनी जाती हैं कि उनकी जड़ों पर एक प्रकार के सूक्ष्म जन्तु रहते हैं जो वायुमंडल की नत्रजन का उपयोग कर उसे भूमि में संचित करते हैं और उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं। फलीदार फ़सलें कई जाति की होती जैसे सन, ढेंचा, और ग्वार, चंवली, मूंग, मटर, उड़िद आदि।

इनमें से सन, ढेंचा और ग्वार अथवा मक्का के साथ उड़िद की फ़सल खाद के लिए काम में लायी जा सकती हैं। हरे खाद के लिए सब से उत्तम फ़सल सन की होती है क्योंकि इसकी बाढ़ बहुत जल्दी होती है। जहाँ बरसात अधिक हो वहाँ इसकी बाढ़ अच्छी नहीं होती इसलिए ढेंचा का उपयोग करना चाहिए।

सन के खाद में खाद्य तत्वों की मात्रा* निम्न लिखित प्रमाण में मानी जा सकती है।

न० ०·४६% स्फुर ०·३२% पो० ०·४१% जल ७६%

मात्रा :—जिस खेत में जितना हरा खाद पैदा हो उतना सब गाड़ देना चाहिए। हरे सन के खाद का वज़न प्रति एकड़ २०० से ३०० मन उसकी बाढ़ के अनुसार हो जाता है।

(६) (क) हरे या सूखे पत्तों का खाद :—

इनका खाद नर्सरी के लिए अच्छा काम देता है। पत्तों को मिट्टी के साथ मिलाकर पानी से गीला करके सड़ा लेते हैं। तरकारी की खेती में पौधों के पत्ते, डण्ठल आदि बहुत प्राप्त होते हैं जैसे शलजम, गोभी आदि के पत्ते। जिन पत्तों को पशु खा सकें उन्हें तो खिलाना ही अच्छा है नहीं तो सड़ाकर काम में लाना चाहिए। यदि अलग न रक्खे जा सकें तो कम से कम खाद की ढेरी पर डालते रहना चाहिए।

---

* Bombay Dept. Agri, Bul. No. 174 p. 14. by Shahasbr budhe.

मात्रा—गोबर के खाद से ऐसे खाद की मात्रा कुछ कम होनी चाहिए।

(ख) आज कल भारतवर्ष में "कम्पोस्ट" खाद बनाने पर बड़ा ज़ोर दिया जा रहा है। कई सज्जनों के प्रेषित पत्र भी मेरे पास इस विषय की जानकारी प्राप्त करने के लिए आए हैं इसलिए इस विषय पर दो शब्द यहाँ दे देना उचित ही है।

यथार्थ में देखा जाय तो भारतीय कृषकों के लिए 'काम्पोस्ट' शब्द नया है न कि काम्पोस्ट वस्तु। सूखे तथा हरे पत्ते, निंदाई के समय खेतों में से निकाले हुए घास-पात, कड़बी, मक्का, ज्वार जैसी फ़सलों की खूँटियाँ, भूसा, फ़सलों के डण्ठल, गन्ने के पत्ते, इत्यादि अनावश्यक सजीव पदार्थों को थोड़े से गोबर, मिट्टी और पानी के साथ सड़ाने से जो पदार्थ बनता है उसे काम्पोस्ट कहते हैं। कहीं कहीं ऐसे मिश्रण को जल्दी सड़ाने के लिए उसमें एमोनियम सलफेट भी थोड़ा डाल देते हैं जिससे मिश्रण में नत्रजन की मात्रा लगभग १ शतांश हो जाय।

यह प्रथा हाल में विदेशों में प्रचलित हुई है क्योंकि वहाँ पर खेती मशीनों से होती है और अनाज की भूसी, कड़बी इत्यादि बहुत ज्यादा हो जाती है जिसको किसी न किसी तरह काम में लाने की समस्या को हल करने के लिए काम्पोस्ट बनाया जाने लगा। हमारे यहाँ तो कड़बी, भूसी आदि पशुओं को खिलाने के लिए भी पूरी नहीं होती। जो कुछ पशुशालाओं में बिछाई जाती है अथवा पशुओं के खाने से बच जाती है वह खाद की ढेरी पर

पहुँच जाती है और वहाँ उसका काम्पोस्ट बन जाता है। फिर भी जहाँ कहीं सजीव पदार्थ प्राप्त हो सके वहाँ काम्पोस्ट बनाकर काम में लाना चाहिए।

जिन वस्तुओं का काम्पोस्ट बनाया जाता है वे तीन प्रकार की होती हैं। एक हरी जैसे साग भाजी के पत्ते, खेतों का घास-पात अथवा मही.न भूसा, दूसरी हरी लेकिन कुछ कठोर जैसे काट-छाँट द्वारा प्राप्त की हुई छोटी छोटी टहनियां और तीसरी ऐसी वस्तुएँ जो सूखी और कठोर हों जैसे तूवर और कपास की डंडियाँ।

काम्पोस्ट बनाने के लिए पहली और दूसरी बराबर भाग में मिलानी चाहिए लेकिन जब तोसरी प्रकार की वस्तु काम में लाना हो तो इसका एक भाग और पहली के दो भाग होने चाहिए। यह भी देखना चाहिए की तीसरी प्रकार की वस्तु जितनी बन सके उतनी टूटी हुई हो। पशुओं के चलने फिरने के मार्ग में अथवा सड़कों पर जहाँ गाड़ियाँ चलती हों ऐसी वस्तु डाल दी जाय तो जल्दी टूट जाती है।

ऐसे मिश्रण को बरसात में ढेरी के रूप में और गर्मी में अथवा जहाँ पानी न गिरता हो वहाँ गढ़ों में बनाना चाहिए। ढेरी सात आठ फीट चौड़ी और ढाई ती.न फीट ऊँची होनी चाहिए ताकि उलट फेर आसानी से हो सके। ढेरी बनाते समय अथवा गढ़े में भरते समय लगभग ५ शतांश के करीब पानी में घोला हुआ गोबर छींटा जाय और गोबर से दूनी मात्रा मिट्टी की मिलानी चाहिए। पानी आवश्यकतानुसार देना चाहिए। ऐसे

काम्पोस्ट का प्रति मास उलट फेर करना पड़ता है ताकि वह जल्दी सड़ जाय। उपर्युक्त रीति से तैयार किया हुआ काम्पोस्ट तीन चार महीनों में तैयार हो जाता है। सहूलियत होने से बरसात में खेतों की मेड़ों पर भी ऐसा काम्पोस्ट बनाया जा सकता है ताकि खाद को गाड़ियों द्वारा हटाने का व्यय न पड़े।

मात्राः—गोबर के खाद के बराबर डालनी चाहिए।

इन्दौर में साधारण काम्पोस्ट के सिवाय एक दूसरी युक्ति-भी निकाली है जिसमें मैले का उपयोग भी हो जाता है। ऐसे काम्पोस्ट को सेनीटरी काम्पोस्ट कह सकते हैं।

इसमें १५ फीट चौड़ी, दो फीट गहरी और आवश्यकतानुसार लम्बी एक खाई जिसकी फर्श गिट्टी या ईटों के टुकड़ों से पीटी हुई हो बना ली जाती है। इसमें एक गाड़ी घास-पात (लगभग ३५ घन फुट) एक तरफ़ से डाल कर उसे बिछा देते हैं। जिसमें तीन चार इञ्च की तह हो जाय। इस पर एक गाड़ी मैला, (सात साढ़े सात मन) मैले की गाड़ी से गिरा दिया जाता है। इसके ऊपर फिर घास-पात डाल कर सब को दतारी (Rake) से मिला देते हैं। इसी तरह से दो दिन में आठ तह बनाकर अन्तिम तह घास-पात की दी जाती है। इसी तरह लम्बाई की ओर भरते हुए चले जाते हैं।

पहले दिन के काम्पोस्ट को चौथे दिन दतारी से उलट फेर करते हैं और आवश्यकता होने से पानी भी देते हैं। आठ दिन बाद

*Institute of Plant Industry, Indore Bulletin No. 1, 1934.

फिर उलट फेर किया जाता है। तीसरी उलट फेर दूसरी के १५ दिन बाद की जाती है और बाद में काम्पोस्ट की ढेरी बनाकर छोड़ देते हैं। ऐसा खाद तीन सप्ताह से लेकर आठ सप्ताह में तैयार हो जाता है।

(७) शहर का कूड़ा कर्कट :--

इसमें साग भाजी के पत्ते, घरों का कूड़ा और राख, बर्तनों के टुकड़े, सड़कों पर का गोबर और लीद और फटे पुराने कपड़े, क़ागज़ इत्यादि कई वस्तुएँ रहती हैं।

मात्रा:—ऐसे खाद को बरसात के पहले ५०-६० गाड़ी प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए। बन सके तो मोटे छेद वाले चलने से चाल कर डालना उत्तम होगा।

(८) शहर की मोरियों का पानी:--

बड़े बड़े शहरों में तो मोरियों का पानी ज़मीन के अन्दर नलों द्वारा बाहर ले जाया जाता है परन्तु छोटे छोटे शहरों में अब भी गन्दा पानी खुली मोरियों द्वारा बहता रहता है जो अन्त में छोटे नाले के रूप में बहने लगता है। ऐसे नाले के किनारे बहुत से लोग सब्जियाँ लगाकर उनको नाले के पानी से सींचते हैं और अच्छी अच्छी तरकारियाँ पैदा करते हैं।

स्फुर प्रधान सजीव खाद:--

(१) हड्डियाँ:—

इनके खाद से स्फुर की मात्रा पहुँचायी जाती है परन्तु इस में थोड़ी नत्रजन भी रहती है (स्फुर २० शतांश और नत्रजन ३ से ४ शतांश)। इनका उपयोग तीन प्रकार से किया जाता है।

चूर्ण करके या सड़ा करके या अम्ल से गला करके। चूर्ण का स्फुर पौधे जल्दी से काम में नहीं ला सकते इसलिए इसे सड़ाकर या अम्ल से गलाकर खेतों में डालना चाहिए। सड़ाने की क्रियाएँ कई प्रकार की हैं परन्तु उनमें समय अधिक लगता है। गलाने की क्रियाएँ कारखानों में होती हैं जहाँ गन्धक या स्फुर के अम्ल से हड्डियाँ गलायी जाती हैं। वहाँ से तैयार खाद मिल सकता है परन्तु वह महँगा पड़ता है। एक ऐसी क्रिया* भी है जिसमें सड़ने और घुलने के दोनों कार्य एक साथ चलते रहते हैं। गन्धक के अम्ल की जगह गन्धक का ही उपयोग किया जाता है। छः भाग हड्डी का चूर्ण, छः भाग बालू, डेढ़ भाग गन्धक और एक भाग कोयले के चूर्ण का मिश्रण बना कर पानी से गीला करके छः महीने तक सड़ाया जाता है। सूक्ष्म जन्तु गन्धक से उसका अम्ल बना देते हैं जिससे स्फुर घुलनशील हो जाता है।

इस प्रकार का खाद मटियार भूमि में अच्छा लाभ पहुँचाता है। फलीदार तथा फलदार और कन्द के लिए गोबर के खाद के साथ इसका उपयोग करना चाहिए।

मात्राः—प्रति एकड़ तीन चार मन हड्डी पहुँचे इतना खाद डालना चाहिए।

(२) मछलियों का खादः—

समुद्र के किनारे जहाँ मछलियों का व्यापार बहुतायत से होता है सड़ी गली मछलियाँ फेंक दी जाती हैं वे खाद के काम में

* Pusa Bull. No. 204 by N. D. Vyas, L. Ag., 1930

लायी जा सकती हैं। जिन कारखानों में मछलियों का तेल निकाला जाता है वहाँ से भी यह खाद प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे खाद से विशेषतः स्फुर और कुछ नत्रजन की पूर्ति होती है।

(३) पक्षियों की विष्ठा:—

समुद्र के पक्षी किसी किसी द्वीप में चट्टानों पर अपना निवास स्थान बनाते हैं उनके बैठने के स्थान पर जो विष्ठा गिरती है वह सूख जाती है। व्यवसायी लोग उसे लाकर बेचते हैं। यदि वह विष्ठा ऐसे स्थान की हो जहाँ पानी न गिरता हो तो उसमें नत्रजन और स्फुर करीब करीब बराबर मात्रा में पाये जाते हैं परन्तु जहाँ पानी गिरता है वहाँ की विष्ठा की नत्रजन घुल कर बह जाती है। उसमें स्फुर ही रह जाता है। पहले प्रकार की विष्ठा में चार पाँच शतांश नत्रजन और उतना ही स्फुर रहता है। दूसरी में नत्रजन नहीं होती स्फुर की मात्रा आठ शतांश तक होती है।

मात्रा:—सात आठ मन विष्ठा प्रति एकड़ डालनी चाहिए।

पोटाश प्रधान सजीव खाद:—

समुद्र के किनारों के निकट पानी में होने वाले पौधों से अथवा सेवार से पोटाश के खाद की पूर्ति होती है। इनमें लगभग १·५ शतांश पोटाश रहता है। कम गहरी सजीव नदियों में और तालाब में जो पौधे होते हैं जिन्हें सेवार कहते हैं उनका भी उपयोग लेखक के प्रयोगों में लाभप्रद सिद्ध हुआ है। मुलायम पत्ती वाला सेवार अच्छा होता है। सूखे सेवार में क़रीब १

शतांश नत्रजन, ०·४ शतांश स्फुर और लगभग २ शतांश पोटाश रहता है।

निर्जीव खाद:--

इन खादों के उपयोग का अच्छा बुरा फल बहुत सी बातों पर निर्भर है। इनका उपयोग सजीव पदार्थों के खाद की भांति नहीं कर सकते। बड़ी सावधानी से इनसे काम लेना चाहिए। इनके उपयोग के पूर्व निम्न लिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए।

जब भूमि की जुताई अच्छी महीन होती है तो ऐसे खाद विशेष लाभ पहुँचाते हैं। वर्षा आने वाली हो उस समय इन्हें नहीं डालना चाहिए, क्योंकि ये पानी में घुलकर बह जाते हैं। इनके खेतों में डालने का समय भी ध्यान में रखना चाहिए। स्फुर और पोटाश के खाद बोने के कुछ दिन पहले डाल दिये जा सकते हैं परन्तु नत्रजन के कुछ खाद ऐसे हैं जिन्हें बोने के थोड़े ही समय पहले डालना चाहिए। बहुत से ऐसे हैं जिन्हें फ़सल के कुछ बढ़ जाने पर डालना लाभप्रद होता है। इन्हें इस रीति से देना चाहिए कि ये फ़सल के पत्तों पर न गिरने पावें। पृथक पृथक खाद में तत्वों की मात्रा का परिमाण न्यूनाधिक होता है, उनका भी ध्यान रख कर उपयोग करना चाहिए।

नत्रजन पूर्ता निर्जीव खाद:--

सोडियम नाइट्रेट जिसमें १५ शतांश और एमोनियम सलफ़ेट जिसमें २० शतांश नत्रजन रहती है सब फ़सलों के लिए काम में लाये जा सकते हैं। इनसे पौधों को बहुत जल्दी लाभ पहुँचता

है। यदि फ़सल पीली नज़र आये और कमज़ोर हो तो सोडियम नाइट्रेट देने से आठ रोज़ में ही इसका अच्छा असर मालूम हो जाता है। गोबर के खाद की कमी इनसे पूरी की जा सकती है। गोबर के खाद के परिमाण को ध्यान में रख कर सवा मन से ढाई मन प्रति एकड़ के हिसाब से इन्हें डालना चाहिए। सजीव खाद के बिना सिर्फ़ इनका ही प्रयोग ठीक नहीं होगा। इसमें सन्देह नहीं कि पहले कुछ सालों तक अच्छी फ़सलें मिलेंगी परन्तु बाद में भूमि ख़राब हो जाता है। उन कृषकों के लिए जिन्होंने थोड़े समय के लिए भूमि ली हो ऐसे खाद लाभप्रद होंगे परन्तु जिन्हें अधिक दिनों तक भूमि से लाभ उठाना है उन्हें निर्जीव खादों का उपयोग सजीव खाद के साथ ही करना चाहिए। एमोनियम सलफेट फ़सल लगाने या बोने के कुछ दिन पहले भी खेतों में डाल सकते हैं। सोडियम नाइट्रेट फ़सल के कुछ बढ़ जाने पर ही डालना चाहिए।

अन्य नत्रजन प्रधान निर्जीव खादों का अभी विशेष प्रचार नहीं हुआ है।

स्फुर पूर्ता निर्जीव खादः—

सुपर फ़ॉसफ़ेटः—गन्धक या स्फुर के अम्ल के साथ जो स्फुर की मिट्टी या हड्डियाँ गलायी जाती हैं और जो पदार्थ बनता है उसे स्फुर की मात्रानुसार सुपरफ़ॉसफ़ेट या डबल सुपरफ़ॉसफ़ेट कहते हैं। इसका स्फुर घुलनशील होता है जिससे पौधों को जल्दी लाभ पहुँचता है। इसमें स्फुर की मात्रा २० से ४० शतांश तक रहती है।

मात्रा :—२५ सेर से ३० सेर स्फुर प्रति एकड़ पहुँचे इस प्रमाण से इसे डालना चाहिए।

पोटाश पूर्त्ता निर्जीव खाद :—

भारत की अधिकांश भूमि में इस तत्व की कमी नहीं है इसलिए ऐसे खादों का प्रचार विशेष नहीं हुआ है। आवश्यकता प्रतीत हो तो मन सवा मन के लगभग पोटेशियम सल्फ़ेट या पोटेशियम क्लोराइड के रूप में इन्हें डाल सकते हैं। अधिकतर इसके लिए राख ही डाली जाती है जिससे कुछ स्फुर भी पहुँच जाता है।

उपर्युक्त खादों के सिवाय कुछ ऐसे खाद भी मिलते हैं जिनसे दो या दो से अधिक तत्व प्राप्त किये जाते हैं जैसे डॉइमन फ़ॉस, एमोफ़ॉस, ल्यूनोफ़ॉस और नाइसीफॉस से नत्रजन और स्फुर; पोटेशियम नाइट्रेट से नत्रजन और पोटाश; राख से स्फुर और पोटाश और नाइट्रोफोस्का से नत्रजन, स्फुर और पोटाश मिलते हैं। स्फुर की मिट्टी का उपयोग यद्यपि स्फुर की पूर्ति के लिए किया जाता है तथापि उसमें कुछ भाग नत्रजन और पोटाश का भी रहता है। तालाब की मिट्टी में भी तीनों तत्व पाये जाते हैं।

स्फुर की मिट्टी भारतवर्ष में सिंहभूम, हज़ारीबाग़ ट्रिचिनापोली, नेलोर, मसूरी, राजपूताना आदि स्थानों में पायी जाती है। इसके छोटे छोटे ढेले होते हैं जिन्हें पीसकर खेतों में डालते हैं या उनसे सुपरफॉसफेट बनाते हैं। ऐसी मिट्टी में २० से ४० शतांश तक स्फुर रहता है। पीस कर खेतों में डालने से इसके स्फुर के

अघुलनशील होने के कारण जल्दी लाभ नहीं होता परन्तु धीरे धीरे लाभ होता है।

मात्रा :—पाँच छः मन प्रति एकड़ डालनी चाहिए।

अन्य कृत्रिम खाद के तत्वों की मात्रा का प्रमाण पहले दिया जा चुका है। उससे गणना करके इन्हें डाल सकते हैं। इनका उपयोग गोबर के खाद के साथ करना चाहिए। इनके द्वारा दस पन्द्रह सेर नत्रजन और २५ से ३० सेर स्फुर प्रति एकड़ पहुँच जाना चाहिए।

राख में ४ से ६ शतांश पोटाश रहता है और क़रीब २ शतांश स्फुर भी रहता है। इससे गाजर, मूली, चुक़न्दर, आलू, शकर-क़न्द, प्याज़, बैंगन, मिर्च, मक्का आदि को अच्छा लाभ पहुँचता है। राख को बरसात से बचाकर रखना चाहिए। नहीं तो पोटाश घुलकर बह जाता है।

मात्रा :—आठ दस मन राख प्रति एकड़ डालनी चाहिए।

खटिक अर्थात् चूने का खाद :—

अम्लदार मिट्टी में अम्ल की शान्ति के लिए इसे डालते हैं क्योंकि ऐसी मिट्टी में तरकारियाँ अच्छी नहीं होतीं। इसकी मात्रा के लिए कृषि विभाग के किसी रसायनज्ञ से मिट्टी की जाँच करा लेनी चाहिए और उसकी सम्मत्यानुसार डालना चाहिए। जहाँ ऐसा करने की सुविधा न हो वहाँ कम से कम १०-१५ मन बुझाया हुआ चूना प्रति एकड़ डालकर देखना चाहिए। और यदि इतने से भी लाभ न हो तो कुछ और डालना चाहिए।

हार्टवेल* साहब के प्रयोग में जिन जिन तरकारियों को चूने से लाभ हुआ, उनका ब्योरा यह है—

(१)—बीन, आलू, मूली, टमाटर, शलजम, शिकोरी, मक्का, पार्सली आदि को चूने की आवश्यकता नहीं होती या थोड़ा दे सकते हैं।

(२)—गाजर, खीरा, गाँठगोभी, मटर, कुम्हड़ा, एन्डाइव, केल, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, चार्ड, कोलार्ड्स, डेन्डेलियन, रुबर्ब, स्क्वेश आदि को कुछ चूना चाहिए।

(३)—ब्रोकोली, पत्तागोभी, फूलगोभी, बैंगन, खरबूज़ा, सरसों आदि को कुछ विशेष चूने की आवश्यकता होती है।

(४)—ऐसपेरगस, चुक़न्दर, लीक, प्याज़, लेट्यूस, पारस्निप, मिर्च, सेलेरी, सॉल्सीफाई, स्पिनेक आदि को अधिक चूने से अच्छा लाभ पहुँचता है।

इस खाद के वर्णन में खाद की मात्राएँ प्रति एकड़ दी गयी हैं परन्तु आजकल कोठियों तथा बँगलों के घेरों में छोटी छोटी क्यारियों में भी साग-भाजी बहुत लगायी जाती हैं। ऐसे स्थानों के लिए निम्न लिखित मात्राएँ डालना ठीक होंगी।

गोबर का खाद तीन सेर प्रति वर्ग गज़ या खली का खाद दो छटाँक प्रति वर्ग गज़ या सोडियम नाइट्रेट या एमोनियम सलफ़ेट आधी छटाँक प्रति वर्ग गज़ डालना चाहिए।

सुपरफ़ॉस्फेट:—

सुपरफ़ासफेट पहले तीनों के साथ साथ डाल सकते हैं। मात्रा ५ छटाँक प्रति वर्ग गज़ होनी चाहिए।

---

* *Rhode Island Bull. No. 160 by Hartwell and Damon.*

प्रकरण ४

बीज और बोआई

तरकारी का अच्छा बुरा होना अच्छे बुरे बीज पर भी निर्भर है। बीज ऐसे होने चाहिए जो जल्दी अंकुर फेंक सकें, जिनमें दूसरे बीजों का समावेश न हो, जो कीट और व्याधि रहित और ठीक जाति अनुसार तरकारियाँ पैदा कर सकें।

जिन बीजों से अंकुर जल्दी फेंके जाते हैं उनके पौधे स्वस्थ होते हैं और फ़सल भी जल्दी तैयार हो जाती है। दूसरी जाति के बीज मिले हुए होने से अनावश्यक पौधे खेतों में जम जाते हैं, जिससे निराई का व्यय बढ़ जाता है और मुख्य पौधों की बाढ़ में रुकावट होत है। कीटादि शत्रुओं से हानि पहुँचाये हुए बीज शक्तिहीन हो जाते हैं। ऐसे बीज या तो अंकुर फेंकते ही नहीं और यदि फेंक भी दें तो पौधे स्वस्थ नहीं होते। पौधों की बहुत सी व्याधियाँ ऐसी होती हैं जिनके जन्तु बीज के ऊपर या अन्दर रहकर खेतों में पहुँच जाते हैं और जब पौधे बड़े होते हैं तो उनपर आक्रमण करते हैं इसलिए जब बीज एकत्रित किये जायँ तो अच्छे स्वस्थ पौधों के बीज ही रखने चाहिए। जिस प्रकार क फ़सल पैदा करनी हो वैसी ही फ़सल देने के योग्य होने चाहिए। जहाँ तक हो सके जिन फ़सलों के बीज भली भाँति तैयार किये जा सकें उन्हें अपने बाग़ीचों में ही तैयार

करके सम्हाल कर रखना चाहिए। बाहर से मँगाये हुए बहुत से बीज स्थानान्तर और जलवायु के हेर फेर से ठीक नहीं जमते और कई बार निराश होना पड़ता है। जिन तरकारियों के बीज निज के बाग़ीचों में तैयार नहीं किये जा सकते उनके बीज के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है इसलिए यदि ख़रीदे जायँ तो बहुत ही भरोसे वाले व्यवसायी से ख़रीदना चाहिए।

बीजों के अंकुर फेंकने की शक्ति उनके परिपक्व होने, उनकी आयु तथा उनके रखने की रीति पर निर्भर है। अच्छे परिपक्व बीज पुष्ट अंकुर फेंकते हैं। पुराने बीजों की अपेक्षा नये बीजों में उत्पन्न शक्ति अधिक रहती है। कुछ तरकारियों के बीज एक साल से अधिक की आयु के होने से जमते ही नहीं। जो बीज सावधानी से रक्खे जाते हैं उन्हें कीटादि शत्रु या वातावरण की तरी से हानि नहीं पहुँचती। वातावरण की तरी से बीजों को बचाना भी किसी किसी जाति के बीजों के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है। इससे बचाने के लिए अच्छे बीज सुखा करके सूखे बन्द बर्तन में रखना चाहिए। विशेष सावधानी के लिए बीज को सूखी राख या कोयले के चूर्ण में मिलाकर रख सकते हैं। कीटादि शत्रुओं से बचाने के लिए नेफ्थलीन की गोलियों का या गंधक के चूर्ण का उपयोग अच्छा होता है। सेर भर बीज के लिए दो तीन और मन भर के लिए ५०-६० (क़रीब ३ छटाँक) गोलियाँ ठीक होती हैं। जब गंधक का चूर्ण डाला जाय तो एक मन बीज में एक सेर चूर्ण डालना चाहिए। जिन बर्तनों

में बीज रक्खे जायँ उनके मुँह मोम या मिट्टी से बन्द कर देना चाहिए कि जिससे हवा का आवागमन न हो।

बहुत सी तरकारियाँ जैसे तरोई, लौकी, भिण्डी आदि ऐसी हैं जिनके बीज फलों के साथ ही सुरक्षित रक्खे जा सकते हैं। जिन तरकारियों के बीज न बोकर अन्य अंग बोये जाते हैं, उनको सुरक्षित रखने की रीति तरकारियों के वर्णन में दी गयी है।

स्मरण रहे कि सुरक्षित बीज भी सदा के लिए जीवित नहीं रह सकते। कौन कौन सी तरकारियों के परिपक्व सुरक्षित बीजों में कितने दिनों तक अंकुर फेंकने की शक्ति बनी रहती है, यह निम्न लिखित ब्योरे से ज्ञात होगा।

१ वर्ष—प्याज़, लीक, पार्सली, पारस्निप, साल्सीफ़ाई।

२ वर्ष—गाजर, मटर, मिर्च, मक्का, एन्डाईव, पालक, खट्टा पालक, ग्लोब आर्टिचोक, कोलार्ड्स।

३ वर्ष—ऐसपेरेगस, बीन, सेम, गोभियाँ, ब्रोकोली, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, केल, भिन्डी, टमाटर, ककड़ी, सेलेरी

४ वर्ष—चुक़न्दर, कद्दू, लेट्यूस, चाडं कशनी, मूली, शलजम, स्क्वेश।

५ वर्ष—बैंगन, ककड़ी, ख़रबूज़ा, तरबूज़।

अधिकांश जाति के बीज आठ दस दिन में भूमि के बाहर निकल आते हैं। ऐसपेरेगस, गाजर, पार्सली, पारस्निप इत्यादि के बीज कुछ समय अधिक लेते हैं। इसलिए उपयुक्त अवधि में

बीज न निकलते दिखाई दें तो अधिक समय नष्ट न कर दूसरे गिरा देना चाहिए।

अंकुर फेंकने की शक्ति के सिवाय फ़सल की पैदावार बीज के आकार पर निर्भर है। अच्छे बड़े बीजों से फ़सल जल्द तैयार होती है और पैदावार भी अधिक होती है। इसलिए ध्यान रखना चाहिए कि बीज के लिए पौधे पहले से ही चुनकर छोड़ दिये जायँ। उनमें से फल तरकारी के लिए नहीं तोड़ना चाहिए। बहुत से लोग ऐसा करते हैं कि अच्छे अच्छे फलों की तरकारी बना लेते हैं और बचे हुए जो कठोर हो जाते हैं या अन्य कारणों से तरकारी के योग्य नहीं होते उन्हें बीज के लिए छोड़ देते हैं। ऐसे फलों के बीज अच्छे पुष्ट नहीं होते और उनके बोने से तरकारियाँ अच्छी नहीं होतीं।

बीज बोना :—

बहुत सी तरकारियों के बीज खेतों में ही बोये जाते हैं और कुछ के बीज थोड़ी सी ज़मीन (नर्सरी) में पहले घने बोकर फिर जब पौधे कुछ बड़े हो जाते हैं तो स्थानान्तर कर देते हैं अर्थात् उस स्थान से हटाकर खेतों में लगा दिये जाते हैं। कुछ तरकारियाँ ऐसी भी होती हैं जैसे आलू, अर्वी, शकरक़न्द, परवल आदि कि जिनके बीज न बोकर पौधों के अन्य अंग ही लगाये जाते हैं। ऐसी तरकारियाँ सीधी खेतों में ही लगायी जाती हैं।

नर्सरी :—

स्थानान्तर करने के पूर्व जिन तरकारियों के बीज थोड़ी सी ज़मीन में घने बोये जाते हैं उस स्थान को नर्सरी कहते हैं।

नर्सरी क्यों बनायी जाती हैं? जिन तरकारियों के पौधे बाल्य अवस्था में कोमल होते हैं और जो खेतों की शीतोष्णता सहन नहीं कर सकते अथवा कीटादि शत्रुओं से अपना संरक्षण नहीं कर सकते उन्हीं की रक्षा के लिए नर्सरी की आवश्यकता होती है। नर्सरी में उनका पालन पोषण और उनकी रक्षा कृत्रिम उपायों से भली-भाँति की जा सकती है। जब पौधे कुछ शक्ति-शाली हो जाते हैं तब उन्हें खेतों में स्थान देते हैं। इसके सिवाय और लाभ यह होता है कि जिन खेतों में पौधे लगाने होते हैं उनकी जुताई के लिए समय अधिक मिल जाता है इससे जुताई अच्छी हो जाती है और यदि कोई फ़सल खेत में हुई तो वह भी हटा ली जाती है।

नर्सरी बनाने की रीति :—

नर्सरी के लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। यदि मटियार हो तो उसमें बालू और बलुआ हो तो उसमें मटियार मिट्टी मिला देनी चाहिए। इस मिट्टी में चाला हुआ सड़े पत्तों का खाद देना अच्छा होता है। यदि मिट्टी में दीमक या अन्य कीट के होने की सम्भावना हो तो उस पर घास और पत्ते डालकर जला देना चाहिए ताकि वे कीट, उनके अण्डे या कोष हों तो जल जायँ। फिर कंकड़ पत्थर चुनवाकर फिंकवा देने के बाद उस मिट्टी से

नर्सरी बनानी चाहिए। यदि बीज बरसात में बोना हो तो नर्सरी की मिट्टी आस-पास की भूमि से नौ दस इञ्च ऊँची होनी चाहिए। जब नर्सरी बन जाय तो हजारे से पानी देकर छोड़ देना चाहिए।

फिर दूसरे या तीसरे दिन ऊपर की दो तीन इञ्च मिट्टी दतार (रेक) से ढीली करके उसमें या तो पंक्तियों में या वैसे ही बीज छींटकर मिट्टी के साथ इस तरह मिला देना चाहिए कि वे ढक जायँ। बरसात में नर्सरी के ऊपर छाया की आवश्यकता होती है कि जिससे पानी हानि नहीं पहुँचावे। गर्मी में भी यदि कड़ी धूप हो तो उनसे बचाने के लिए छाया करानी चाहिए। बहुधा बोने के पश्चात् बीज पत्तों से ढक दिये जाते हैं ताकि वे गर्मी से जल्दी अंकुर फेंक दें। अंकुर फेंक देने के पश्चात् पत्ते हटा दिये जाते हैं। इसके बाद आवश्यकतानुसार निंदाई और सिंचाई करते रहना चाहिए। जाड़े या गर्मी में जो नर्सरी बनायी जाय वह बरसात की नर्सरी की अपेक्षा कम ऊँची होनी चाहिए।

नर्सरी का आकार आवश्यतानुसार होना चाहिए। प्रत्येक कार्य में सहूलियत हो इसलिए लगभग चार पाँच फ़ीट चौड़ी होनी चाहिए जिससे दोनों किनारे से बीच की भूमि तक हाथ पहुँच सके। लम्बाई आवश्यकतानुसार हो सकती है। दो नर्सरी के बीच में एक फ़ुट से डेढ़ फ़ुट का मार्ग छोड़ना चाहिए कि जिसमें फिरकर पौधों की देख भाल भली-भांति की जा सके और पानी आसानी से दिया जा सके। ऐसे मार्ग में बैठकर निंदाई और पौधों की छँटती का कार्य भी अच्छी तरह हो सकता है।

बहुधा ऐसा भी होता है कि देवदारु के बक्स में या मिट्टी की कढ़ाइयों में बीज गिराये जाते हैं। ऐसे बक्स तीन चार इञ्च गहरे होने चाहिए। और उनमें चार भाग बलुआ मिट्टी और एक भाग सड़े पत्तों का खाद मिलाना चाहिए। छोटे छोटे बाग़ीचों के लिए इस रीति से बीज गिरा कर पौधे तैयार करना अच्छा रहता है। आवश्यकतानुसार बक्सों को धूप या छाया में हटा सकते हैं और कीटादि शत्रु से बचाने के लिए उनपर कपड़े की जाली भी लगायी जा सकती है।

पौधों के रोपने का समय और रीतिः—

साधारणतः नर्सरी में जब पौधे दो तीन इञ्च ऊँचे हो जाते हैं तब उन्हें खेतों में लगाते हैं। कुछ तरकारियों के लिए न्यूनाधिक ऊँचाई भी रक्खी जाती है। किसी किसी के पौधे दो बार नर्सरी में लगाये जाते हैं। गोभी के पौधों को कुछ लोग नर्सरी से निकाल कर पन्द्रह दिन के लिए दूसरे स्थान में नर्सरी की अपेक्षा कुछ विशेष अन्तर पर लगाते हैं और फिर उस स्थान से उठाकर खेतों में लगाते हैं। ऐसा करने से पौधे और भी बलिष्ठ हो जाते हैं।

पौधों को एक स्थान से उखाड़ने पर उनमें निर्बलता आ जाती है। उस निर्बलता की स्थिति में व्याधियाँ उन पर आक्रमण करने लगती हैं इसलिए उस समय उनकी रक्षा की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। उन्हें धूप से बचाने का प्रबन्ध करना चाहिए। कोमल पौधों को रोपने के पश्चात् दो चार दिनों के लिए उनपर पत्तों से

छाया कर देनी चाहिए। रोपने के लिए संध्या का समय अच्छा होता है। इससे रात भर में पौधे कुछ सम्हल जाते हैं और दिन की धूप सहन करने योग्य हो जाते हैं। जहाँ बहुत ज्यादे रोपना हो वहाँ हो सके तो बादलों वाला दिन अच्छा होता है। रोपते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पौधों की जड़ों के साथ डंडी का थोड़ा सा भाग मिट्टी में जाने पावे। अधिक गहरा रोपना हानिकारक होता है। प्याज़ के जैसे पौधों को रोपते समय यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्याज़ बनने वाले भाग का आधा हिस्सा बाहर और आधा मिट्टी के अन्दर रहे।

सीधी खेतों में बोयी जाने वाली तरकारियों के बीज कब, कितने, कितनी दूरी पर और कितनी गहराई पर बोना चाहिए ?

बीज से बीज और पंक्ति से पंक्ति का अन्तर पौधों की ऊँचाई और उनके फैलाव पर निर्भर है। अच्छी उपजाऊ ज़मीन में बाढ़ अच्छी होती है इसलिए दूरी कुछ बढ़ा देना चाहिए हल्की ज़मीन में कुछ नज़दीक रोपना चाहिए। इसी तरह से ज़मीन की जाति, उसकी तरी और बीज के आकार का भी ध्यान रखना चाहिए। जिस ज़मीन में तरी पूरी हो उसमें बीज कम गहराई पर बोना चाहिए। भारी मटियार में कम गहराई पर और बलुआ में अधिक गहराई पर बोना ठीक होता है। बोने की गहराई पाव इञ्च से डेढ़ इञ्च तक होनी चाहिए। छोटे बीज कुछ ऊपर और बड़े कुछ गहरे बोना चाहिए।

आलू, हल्दी, शकरक़न्द, लहसुन आदि के बीज नहीं बोये

जाते बल्कि पौधों के अन्य अंग लगाये जाते हैं। इनके लगाने की रीति में बहुत भेद हैं इसलिए प्रत्येक तरकारी के विवरण में ही उसे देखना चाहिए।

प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता:—

तरकारियों के बीज इतने छोटे बड़े होते हैं कि सिर्फ़ अनुमान से काम नहीं चल सकता। बहुत सी तरकारियों के बीज बड़े महँगे बिकते हैं और ऐसे बीज आवश्यकता से कम या अधिक नहीं खरीदे जायँ इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए। बीज का अन्दाज़ पौधों की दूरी, उनके वज़न और गिनती के हिसाब से किया जा सकता है। इनके साथ साथ बोने की रीति और बीज के अंकुर फेंकने की शक्ति का भी ध्यान रखना चाहिए। स्मरण रहे कि सब के सब बीज अंकुर नहीं फेंकते और जो फेंकते हैं उनमें सब के सब पौधे स्वस्थ नहीं होते और जो स्वस्थ होते हैं उनमें से कुछ को कीटादि शत्रु हानि पहुँचाने में नहीं चूकते, ऐसी स्थिति में कम से कम बीस शतांश बीज अधिक मँगवाना चाहिए।

कुछ तरकारियाँ ऐसी भी होती हैं जिनके बीज सीधे खेतों में भी बोये जा सकते हैं या नर्सरी में भी लगाये जा सकते हैं। ऐसे बीजों के लिए यह ध्यान रखना चाहिए कि जब खेतों में बोये जायँ तो नर्सरी में बोये जाने वालों से अधिक बोना चाहिए।

पौधों की गिनती और बीज का अनुमान जल्दी से ज्ञात हो जाय इसके लिए आगे दो सारणियाँ (Tables) दी जाती हैं।

पौधों की दूरी और प्रति एकड़ संख्या

पंक्ति से पंक्ति का अन्तर		पौधे से पौधे का अन्तर		संख्या प्रति एकड़
फुट	इञ्च	फुट	इञ्च	
०	६	०	६	१७४,२४०
०	९	०	९	७७,४४०
१	०	०	६	८७,१२०
१	०	१	०	४३,५६०
१	६	०	६	५८,०८०
१	६	१	०	२९,०४०
१	६	१	६	१९,३६०
२	०	०	६	४३,५६०
२	०	१	०	२१,७८०
२	०	१	६	१४,५२०
२	०	२	०	१०,८९०
३	०	०	६	२९,०४०
३	०	१	०	१४,५२०
३	०	१	६	९,६८०
३	०	२	०	७,२६०
३	०	२	६	५,८०८
३	०	३	०	४,८४०
४	०	०	६	२१,७८०

पंक्ति से पंक्ति का अन्तर		पौधे से पौधे का अन्तर		संख्या प्रति एकड़
फुट	इञ्च	फुट	इञ्च	
४	०	१	०	१०,८९०
४	०	१	६	७,२६०
४	०	२	०	५,४४५
४	०	३	०	३,६३०
४	०	४	०	२,७२२
५	०	५	०	१,७४२
६	०	६	०	१,२१०
८	०	८	०	६८०
१०	०	१०	०	४३५

निम्न लिखित सूत्र से यह गणना सरलता से की जा सकती है।

$$\frac{४३५६०}{\left\{\begin{matrix}\text{पंक्तियों का अन्तर}\\\text{फुट में}\end{matrix}\right\}\times\left\{\begin{matrix}\text{पौधों का अन्तर}\\\text{फुट में}\end{matrix}\right\}}=\text{संख्या पौधे प्रति एकड़}$$

उदाहरणः— $\frac{४३५६०}{२\times२}=\frac{४३५६०}{४}=$ १०८९० पौधे प्रति एकड़

संख्या बीज प्रति छटाँक और आवश्यक बीज प्रति एकड़

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छटाँक	आवश्यक बीज प्रति एकड़
अजवाइन	६०,०००	५ सेर
अदरक		१२ मन
अरारूट		२० मन
अर्वी		३० से ४० मन
आर्टिचोक ग्लोब	१०००	५ से ६ छटाँक
,, जेरुसेलम (कच्चू)		५-६ मन कच्चू के टुकड़े
आल (लौकी)	४५०	३ सेर
आलू		२० मन (पहाड़ी) १२ मन (देशी)
उच्चे		३ सेर
एण्डाइव	२७,०००	१ सेर
ऐसपेरेगस	२,०००	२ से ३ सेर
ककड़ी	२०००	१ सेर
कद्दू	२५०	३ सेर
,, विलायती		२ सेर
,, भूरा (शिशकुम्हड़ा)		२ सेर
करेला	४००	३ सेर
कलौंजी	२४,०००	१० सेर
किराओ	९००	२० सेर
कुसुम	१८००	१० सेर
केल	१०,०००	१० छटाँक

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छटाँक	आवश्यक बीज प्रति एकड़
केला		४०० पौधे
कोलार्ड्स	१७,०००	३ छटाँक
क्रेस	१,००,०००	३ सेर
ख़रबूज़ा	२४००	१ सेर
ख़सख़स	१२,००,०००	२ सेर
खिसारी	११५०	१ मन
खीरा	२०००	८ छटाँक
खीरा गोल		,,
गराड़ू		१०-१५ मन
गाजर	५०,०००	१॥ सेर
गोभी गाँठ	१४,०००	२ सेर
,, चीनी	४०,०००	३ छटाँक
,, फूल	१६,०००	२-३ छटाँक
,, बंधा	१०,०००	२-३ छटाँक
ग्वार	१७५०	८ सेर
चना	६००	१ मन
चवँली	४५०	८ सेर
चिचड़ा		४ सेर
चुकन्दर	३५००	३ सेर
चौलाई	७०,०००	३ सेर
ज़ीरा सफ़ेद	१४००	७ सेर
,, स्याह		६ सेर
टमाटर	१५,०००	३ छटाँक

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छटाँक	आवश्यक बीज ।ति एकड़
तरबूज़	४५०	१॥ सेर
तरोई	८००	३ सेर
घीया तरोई	८००	३ सेर
तूर (अरहर)	६००	१० सेर
दिल पसन्द (टिन्डा)		१ सेर
धनिया	८०००	८ सेर
पटुआ		४ सेर
पपैया (पपीता)		४०० पौधे
परवल		१५०० लता के टुकड़े
पारस्निप	५६००	२ सेर
पालक	६०००	१ सेर
,, खट्टा		१ सेर
पार्सली	३५,०००	२ सेर
प्याज़	२५,०००	२॥ सेर
फूट	२०००	८ छटाँक
बथुआ		½सेर
बैंगन	१०,०००	५ छटाँक
ब्रासेल्स स्प्राउट्स	१३.०००	३ छटाँक
ब्रोकोली	१४,०००	२ छटाँक
भिण्डी	८५०	५ सेर
मटर	१००से३००	२०सेर देशी१५-३०सेर वि०
मक्का	३५०	१० सेर

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छटाँक	आवश्यक बीज प्रति एकड़
मिर्च	१०,०००	१ सेर
मूली	,,	४-५ सेर
मेथी	७२००	१५ सेर
मोगरी		२ सेर
रतालू		१५ मन
राई		५ सेर
रुटे बागा		२ सेर
रूबर्ब	३६००	२ सेर
लहसुन		१० मन कलियाँ
लीक	१६,०००	२–२।। सेर
लेट्यूस	३२,०००	२ सेर
शकरकन्द		२०,००० लता के टुकड़े
शलजम	२२,०००	१।।–२ सेर
शिकोरी	५०,०००	२ सेर
शेरबिल		२। सेर
शेलाट		२०–२५ सेर
सरसों पीली	३२,०००	५ सेर
,, सफेद		६ सेर
साग कुलफा		३ सेर
,, मरसा	७०,०००	३ सेर
,, लाल	,,	३ सेर
सायबीन	१००	१० सेर
साल्सी फ़ाई	९०००	४ सेर

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छटाँक	आवश्यक बीज प्रति एकड़
सेम और बीन	२००	१० सेर
,, ऊदा		६ सेर
,, कमच		६ सेर
,, फ्रेञ्च		१५ सेर
,, बकला		१० सेर
,, ब्रॉड		१० सेर
,, लाइमा		६ सेर
,, लोबिया		६ सेर
,, स्कारलेट रनर		६ सेर
सुथनी		१२ मन
सूरन (ओल)		७५ मन प्रथम वर्ष में
सेलेरी	१००,०००	३ छटाँक
सोआ		१० सेर
सौंफ बड़ी		८ सेर
,, छोटी		५ सेर
स्क्वेश गर्मीवाली	२५०	२ सेर
,, जाड़ेवाली	६००	२ सेर
हल्दी		१२ मन हरी गाँठें

प्रकरण ५

निंदाई, निराई या सोहनी

निंदाई का मुख्य अभिप्राय खेतों में से घास-पात निकालने और ऊपर की मिट्टी को ज़रा ढीली करने से है। खेतों में अनावश्यक पौधे होने ही नहीं देना चाहिए। उन्हें तरकारियों के शत्रु समझना चाहिए क्योंकि जो पानी और खाद्य पदार्थ खेतों में तरकारियों के लिए रहता है उसमें वे हिस्सा बटाते हैं, पौधों की बाढ़ को रोकते हैं और उन्हें हानि पहुँचाने वाले कीटादि शत्रुओं को शरण देते हैं। प्रकाश तथा वायु के हेरफेर में भी इनकी उपस्थिति से अन्तरागमन होता है। ऊपर की मिट्टी ढीली रखने से हवा का आवागमन होता रहता है, ज़मीन का पानी जल्दी से उड़ने नहीं पाता और यदि कहीं थोड़ी वर्षा हो जाय तो वह पानी ज़मीन में सोख लिया जाता है, बहकर वृथा नहीं चला जाता। कुछ अंश तक पौधों का भोजन भी इस क्रिया से तैयार होता है।

निंदाई का समय और उसकी रीति :—

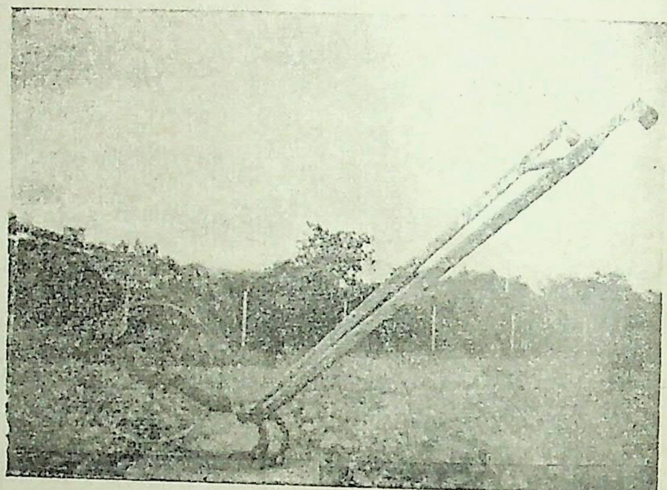
जब फ़सल के पौधे छोटे रहें तब निंदाई कम गहरी और जल्दी जल्दी करनी चाहिए। ज्यों ज्यों पौधे बढ़ते जायँ निंदाई का समय और गहराई भी बढ़ायी जा सकती है। छोटे छोटे पौधों के समय यदि निंदाई में देर की जाय तो दूसरे अनावश्यक पौधे

ज्यादे बढ़ जाते हैं। इन्हें निकालने के लिए फिर गहरी निंदाई करनी पड़ती है जिससे छोटे छोटे पौधों की जड़ों को हानि पहुँचती है।

निंदाई के समय जंगली पौधों के उखाड़ने या ज़मीन की पपड़ी तोड़ने से ही काम नहीं चलता। तरकारी के पौधे जो आवश्यकता से अधिक हो तो उनकी छँटती भी करनी चाहिए। फ़सल में यदि किसी प्रकार की व्याधि या कीड़ा लग जाय तो उसकी ओर ध्यान रखकर उचित चिकित्सा करनी चाहिए। असाध्य व्याधि हो तो रोगग्रस्त पौधों को नष्ट ही कर देना उचित है। जिन पौधों को सहारे की आवश्यकता हो उनके लिए बाँस की टट्टियाँ, सूखी टहनियाँ लगाने का प्रबन्ध करना चाहिए। जो लताएँ इधर उधर फैल रही हों उन्हें टट्टियों पर या पारियों पर चढ़ाना हो तो चढ़ा देना चाहिए। बहुत सी लत्तियाँ यदि ज़मीन पर बिना हिलाये डुलाये छोड़ दी जायँ तो वे जगह जगह जड़ें फेंक देती हैं, जिससे पैदावार कम हो जाती है ऐसी लत्तियों को कभी कभी उठाकर देख लेनी चाहिए। बार बार उठाते रहने से वे जड़ें फेंकने नहीं पातीं। जिन पौधों पर मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता हो उन पर मिट्टी चढ़ाना, जिनमें बढ़ती हुई शाख़ के ऊपरी भाग को तोड़ना हो उसे तोड़ना या जिनमें पत्ते या डंडियाँ सफ़ेद करनी हों (Bleaching) तो उसका प्रबन्ध करना इत्यादि सभी क्रियाओं की ओर निंदाई के समय ध्यान रखना चाहिए।

निंदाई के औज़ार:—

घास-पात निकालने के लिए अधिकतर खुर्पी काम में लायी





पृष्ठ ५७ के सामने

जाती है। जहाँ पौधों के बीच का अन्तर थोड़ा हो वहाँ खुर्पी से काम लेना चाहिए परन्तु जहाँ अन्तर पूरा हो वहाँ हाथ से चलाने वाला 'हो' (Hoe) अच्छा काम देता है। तरकारी की खेती वालों के लिए यह बहुत ही उपयोगी है, इससे काम बहुत जल्दी होता है। मिट्टी चढ़ाने के लिए कहीं कहीं छोटे हलों का भी उपयोग किया जाता है। थोड़ी जगह पर मिट्टी चढ़ाने के लिए कुदाल या काटे भी अच्छे होते हैं।

प्रकरण ६

सिंचाई

तरकारी की खेती वालों के लिए सिंचाई का पूर्ण प्रबन्ध करने का प्रश्न बड़ा ही महत्व का है। इस व्यवसाय की सफलता या असफलता अधिकतर सिंचाई के ऊपर ही निर्भर है। बरसाती जल के आधार पर यह कार्य नहीं छोड़ा जा सकता। भारतवर्ष में बिहार और बंगाल जैसे प्रान्तों में कुछ स्थान ऐसे हैं जहाँ की उपजाऊ ज़मीन में तरी अच्छी रहती है और बहुत सी तरकारियाँ बिना सिंचाई के पैदा की जा सकती हैं परन्तु फिर भी कुछ तरकारियों को पानी देना ही पड़ता है। इस पुस्तक में जितनी तरकारियों का वर्णन है उनमें से लगभग ८० शतांश तरकारियाँ पूसा* के निकटवर्ती स्थानों में बिना सिंचाई के ही पैदा की जाती हैं परन्तु ऐसी स्थिति अन्य स्थानों में नहीं है। कई स्थान तो ऐसे हैं जहाँ बिना सिंचाई के कोई भी तरकारी पैदा नहीं की जा सकती।

सिंचाई के लिए जल की प्राप्ति :—

इस कार्य के लिए जल चार रीति से प्राप्त किया जा सकता है। :—

---

* सन् १६३६ तक भारतीय सरकार की मुख्य कृषि प्रयोगशाल (Imperial Agricultural Research Instiute) पूसा (बिहार) में थी और अब देहली में है। १६४६ से Imperial के स्थान से Indian कर दिया गया है।

(१) वृष्टि से।

(२) नहर द्वारा, नदी-नाले, प्राकृतिक झरने या तालाब से।

(३) कुओं से।

(४) शहरों की मोरियों से।

(१) यद्यपि वृष्टि के ऊपर कृषकों का अधिकार नहीं है तथापि वृष्टि द्वारा प्राप्त किए हुए जल को उचित प्रचारों से भूमि में संचित रखना मनुष्याधीन है। वृष्टि की जब सम्भावना हो उससे पहले ही भूमि को जोत जुताकर ऐसी तैयार रखनी चाहिए कि जिसमें जल जल्दी से सोख जाय और बाहर बहने न पाये। जब वृष्टि समाप्त हो जाय और सूर्य की तेजी से भूमि के जल का उड़ना प्रारम्भ हो उस समय भूमि की पपड़ी तोड़कर ऊपर की कुछ मिट्टी ढीली कर दी जाय तो पानी का उड़ना कुछ कम हो जाता है। इस प्रकार की सिंचाई को स्वाभाविक सिंचाई कहना चाहिए। दूसरी युक्तियाँ जो जल प्राप्त करने की हैं वे कृत्रिम हैं।

(२) कृत्रिम रीतियों में यदि पानी नदी, नाले, तालाब या प्राकृतिक झरनों से नहरों द्वारा प्राप्त किया जा सके तो अच्छा ही है परन्तु यदि न हो सके तो एञ्जिन और पम्प द्वारा ऐसे स्थानों से प्राप्त करना चाहिए।

(३) जहाँ पानी की सतह नज़दीक हो और दस पाँच-फ़ीट पर ही पानी निकल आवे तो थोड़ी थोड़ी दूरी पर कुएँ खुदवा कर मज़दूरों द्वारा ढेकुली से सिंचाई करायी जा सकती है परन्तु

यदि पानी गहरा हो तो अच्छा पक्का जलाशय बनवाना चाहिए। एक अच्छे कुएँ से दस एकड़ की सिंचाई अच्छी तरह से हो सकती है।

(४) शहरों में आजकल मैला और मोरियों का पानी नलों द्वारा शहर से बाहर ले जाया जाता है और वहाँ पर कुछ रासायनिक उपचार और सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा जल मिश्रित पदार्थों का विच्छेदन कराकर उससे तरकारियाँ सींची जाती हैं।

पानी उठाने के उपचार:—

नहरों से जहाँ सिंचाई होती है वहाँ बहुधा भूमि की सतह पानी की सतह से नीची होती है जिससे पानी खेतों में भली भाँति दौड़ जाता है। कहीं कहीं जहाँ भूमि ऊँची होती है वहाँ इन नहरों से भी जल ऊपर उठाना पड़ता है। गहरे कुएँ या नदी-नालों से पानी कई युक्तियों से ऊपर उठाया जा सकता है जिनमें की प्रधान युक्तियाँ निम्न लिखित हैं जो पानी की गहराई तथा सिंचाई के क्षेत्रफलानुसार काम में लायी जा सकती हैं।

पानी ऊपर उठाने के लिए मनुष्य, पशु, वायु, विद्युत, वाष्प या तेल की शक्ति काम में लायी जा सकती है।

मनुष्य की शक्ति से चलाये जाने वाले यंत्र:—

टोकरी।

डोन।

ढेकुली।

चेन पम्प।

सक्शन या फ़ोर्स पम्प।

किफायत रहट।

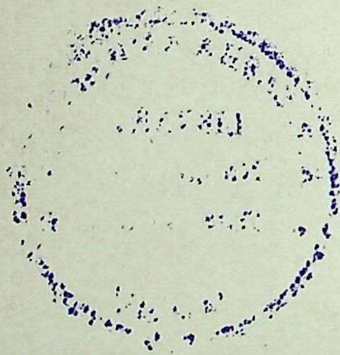
टोकरी:—यह एक सूपाकार टोकरी होती है जिसके चारों कोनों पर रस्सियाँ बाँध दी जाती हैं। दो आदमी आमने-सामने ऊँची ज़मीन पर खड़े होकर अपनी अपनी ओर की रस्सी पकड़े रहते हैं और बार बार पानी वाले गढ़े में टोकरी को डुबा कर पानी को ऊपर फेंक देते हैं जहाँ से बहकर वह खेतों में चला जाता है। एक टोकरी में क़रीब २० सेर पानी रहता है और प्रत्येक मिनट में यदि ठीक से काम किया जाय तो २० टोकरी पानी बाहर फेंका जा सकता है। सात आठ फ़ीट की ऊँचाई तक इससे पानी उठाया जा सकता है।

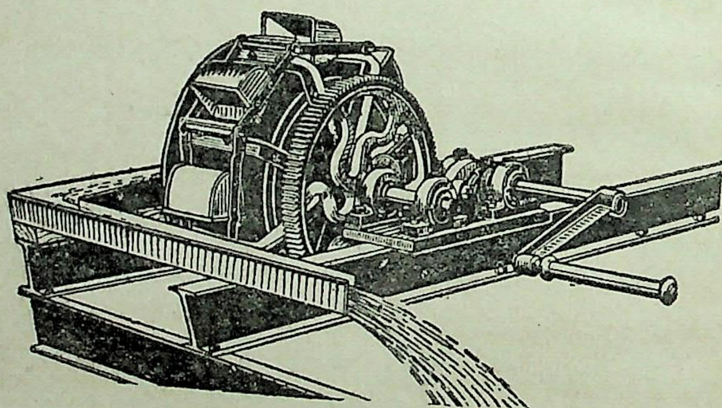
डोन:—यह नौका जैसी लोहे या लकड़ी की बनी हुई होती है जिसका एक मुँह जो खुला रहता है ज़मीन की सतह पर दो खूटों से ढीली रस्सी से बाँध दिया जाता है। दूसरे मुँह पर जो बन्द रहता है एक रस्सी बाँध दी जाती है जिसका दूसरा छोर एक बाँस के मुँह से बँधा रहता है। इस बाँस का बीच का भाग एक मोटी गाड़ी हुई लकड़ी पर घूमता रहता है और दूसरे मुँह पर कुछ वज़न बाँध देते हैं ताकि भरी हुई डोन आसानी से उठ सके। एक आदमी पानी की सतह के निकट तख्तों पर खड़ा रह कर पाँव से डोन को बार बार पानी में डुबो देता है। बाँस के दूसरी ओर के वज़न से वह ऊपर उठ जाती है और खुले हुए मुँह

की ओर से पानी बाहर फेंक देती है। इस युक्ति से पाँच छः फ़ीट तक का पानी उठाया जा सकता है और यदि आदमी अच्छा काम करता रहे तो एक घंटे में सौ डेढ़ सौ मन पानी फेंक सकता है।

ढेकुली :—डोन से जिस प्रकार काम लिया जाता है उसी भाँति इससे भी लेते हैं। जिस रस्सी से डोन का मुँह बाँधा जाता है उसमें एक लोहे का बर्तन गोल और नोकीली पेंदी वाला बाँध देते हैं ताकि ज़मीन पर रखते ही वह लुढ़क कर खाली हो जाय। एक आदमी बर्तन को बार बार पानी में डुबो देता है और फिर उठा कर थाले पर रख देता है जहाँ लुढ़क कर वह खाली हो जाता है और पानी खेतों में बह जाता है। यह युक्ति १५ फ़ीट की गहराई तक काम दे सकती है। एक घंटे में पचास साठ मन पानी उठाया जा सकता है।

चेन पम्प :—इसमें एक नल क़रीब तीन इञ्च व्यास का ज़मीन की सतह से पानी में डूबता रहे इतना लम्बा लगाया जाता है। उस नल के बीच से एक ज़ञ्जीर एक चक्के पर चलती रहती है और अपने साथ पानी खींचकर ऊपर ले आती है। चक्का धुरी पर घूमता रहता है जिसे एक या दो आदमी घुमाते रहते हैं। ज़ञ्जीर में कहीं कहीं लकड़ी और चमड़े के टुकड़े लगे रहते हैं जो पानी को वापिस गिरने से रोक कर ऊपर ले आते हैं। इस नल का मुँह सूप के आकार जैसे चौखटे में खुलता है जिसके द्वारा पानी बहकर खेत की राह लेता है। इस पम्प से प्रति घंटा





किफायत रहट

पृष्ठ ६३ के सम्मुख

क़रीब १५० मन पानी आठ दस फ़ीट की गहराई से उठाया जा सकता है।

सक्शन या फ़ोर्स पम्प :—इनसे २५ से ३० फ़ीट की गहराई तक का पानी उठाया जा सकता है। इनमें आदमी पम्प के दस्ते को चलाया करते हैं जिससे पानी ऊपर उठ आता है। ऐसे पम्प कई प्रकार के होते हैं और नित्य नये बनते रहते हैं इसलिए कितने घंटे में कितना पानी ऊपर उठेगा इसका अनुमान यहाँ नहीं किया जा सकता। इसकी जानकारी पम्प-विक्रेता से प्राप्त करनी चाहिए।

किफायत रहट* :—इस यंत्र में लगभग एक सौ छोटी छोटी बालटियां लगी रहती हैं। प्रत्येक बालटी में करीब सवा सेर जल रहता है। इस यंत्र द्वारा चालीस फीट की गहराई का पानी एक घंटे में करीब एक सौ मन बाहर फेंका जा सकता है। छोटे बाग़ीचों के लिए बड़े काम का यंत्र है।

पशु शक्ति से चलाए जाने वाले यंत्र :—

(१) चेन पम्प।

(२) सक्शन पम्प।

(३) रहट।

(४) मोट या चड़स।

चेन पम्प और सक्शन पम्प ऐसे ही होते हैं जैसे हाथ से

*किफायत रहट किर्लोसकर बन्धु से प्राप्त किया जा सकता है।

चलाने वाले होते हैं पर ये कुछ बड़े होते हैं। इनके चलाने में शक्ति कुछ विशेष लगती है इसलिए पशुओं की शक्ति का उपयोग किया जाता है। एक गियर नाम की कल द्वारा ये चलाये जाते हैं जिसे ऊख पेरने की चरखी की भाँति दो जोड़ी बैल से चलाते हैं।

रहट :—यह एक प्रकार का लकड़ी या लोहे का पहिया होता है जिस पर रस्सी में बँधी हुई मिट्टी या धातु की बालटियाँ लटका दी जाती हैं। ख़ाली बालटियाँ उलटी लटकती हुई पानी में चली जाती हैं और भरी हुई ऊपर आते ही उलट कर अपना पानी एक चौखटे में डाल देती हैं जहाँ से वह बहकर खेत की ओर चला जाता है। इसमें एक या दो पशु की आवश्यकता होती है। इससे तीस पैंतीस फ़ीट का पानी भलीभाँति ऊपर उठाया जा सकता है। यदि पानी थोड़ा हुआ और रहट छोटा हुआ तो आदमी भी चला सकते हैं।

मोट या चड़स :—अन्य यंत्रों की अपेक्षा हमारी समझ में थोड़ी खेती वालों के लिए यह बहुत ही उपयोगी है। यह दो प्रकार का होता है एक सूँड़दार और दूसरा बिना सूँड़वाला। सूँड़दार अपने आप पानी फेंक देता है। बिना सूँड़वाले को खाली करने के लिए आदमी की आवश्यकता होती है। सूँड़वाले मोट के उपयोग में समय कम लगता है और व्यय भी कम होता है। इसमें दो बैल और एक आदमी से काम चल सकता है। बिना सूँड़वाले के लिए एक या दो आदमी अधिक लगते हैं।

मोट से २० से ८० फ़ीट तक की गहराई का पानी उठाया जा सकता है।

मोट बहुधा चमड़े का होता है परन्तु अब कहीं कहीं लोहे का भी बनाया जाता है।

मोट से कितना पानी उठाया जा सकता है यह मोट के आकार तथा जल की गहराई पर निर्भर है। साधारण मोट में क़रीब चार मन पानी समा सकता है जिसका एक चतुर्थांश के लगभग हिलने डुलने और चू जाने से ऊपर आते तक फिर कुएँ में लौट जाता है, इस हिसाब से क़रीब तीन मन पानी प्रति मोट बाहर फेंका जाता है। कहीं कहीं मोट इतना छोटा होता है कि जिसमें सिर्फ़ तीन मन ही पानी समाता है और कहीं कहीं इतना बड़ा भी होता है कि जिसमें आठ मन पानी आ जाता है। ऐसे बड़े मोट के लिए दो जोड़ी बैल की आवश्यकता होती है। साधारण मोट से पचीस तीस फ़ीट का पानी उठाना हो तो एक दिन में आधे से पौन एकड़ तक की सिंचाई हो सकती है। मोट के आकार, जल की गहराई तथा बैल की चाल से पाठक स्वयम् इसका अनुमान कर सकते हैं।

मोट की देख-भालः—बरसात के दिनों में मोट पर तिल का तेल अवश्य लगाना चाहिए और जब काम में लाया जाय तो उस समय भी लगाना चाहिए। नये मोट के लिए क़रीब चार सेर और पुराने के लिए दो सेर तेल की आवश्यकता होती है।

रामचन्द्र वाटर लिफ्ट:—

यह पानी उठाने का यंत्र ऐसा है जिसमें चड़स की जगह एक लोहे की डोल लगी रहती है और चड़स की भांति चकरी पर चलायी जाती है। इसमें बैलों को आगे पीछे या मुड़कर नहीं चलना पड़ता। बैलों के चलने के ढालू मार्ग में रेल की पटरी जैसी लगायी जाती है। इस पर चार चक्के वाली एक ट्रॉली रहती है जिसमें लकड़ी के तख्ते जड़े हुए होते हैं। जब डोल भर जाती है तो बैल को ट्रॉली पर खड़ा कर दिया जाता है। बैल के वज़न से ट्रॉली नीचे चली जाती और डोल ऊपर आकर खाली हो जाती है। बैल ट्रॉली पर से उतर जाता है और डोल धीरे धीरे फिर पानी में चली जाती है। बैल पास के मार्ग से ऊपर आकर फिर ट्रॉली पर खड़ा हो जाता है। ट्रॉली चल पड़ती है और भरी हुई डोल ऊपर आ जाती है।

इसका काम चड़स के काम के बराबर हो जाता है। लाभ यह होता है कि बैल को तकलीफ नहीं होती और एक ही बैल से काम चल जाता है चूँकि यह यंत्र अभी नया है इसमें मोट से खर्चा कुछ विशेष पड़ जाता है। यदि कुछ सस्ता हो जाय तो सम्भव है मोट का स्थान ले ले।

वायु, विद्युत, वाष्प या तेल की शक्ति का उपयोग:—

जहाँ हवा बराबर चलती रहती है वहाँ पम्प द्वारा पवन चक्की से पानी ऊपर उठाया जा सकता है परन्तु इनका प्रचार

भारतवर्ष में विशेष नहीं हो सकता क्योंकि यहाँ हवा निर्मांणित रूप से नहीं चलती।

विद्युत, वाष्प या तेल की शक्ति के उपयोग के लिए एञ्जिन की आवश्यकता होती है। ऐसे एञ्जिन और पम्प द्वारा सौ डेढ़ सौ फीट का पानी ऊपर उठाया जा सकता है। इनका मूल्य इनके विक्रेता से मालूम किया जा सकता है। उन्हें निम्न लिखित बातों की सूचना दे देने से वे उचित पम्प और एञ्जिन की सलाह दे सकते हैं।

(१) कुएँ की लम्बाई, चौड़ाई या व्यास और गहराई का ब्योरा।

(२) गर्मी में पानी की सतह कितनी नीची रहती है।

(३) बरसात में पानी कितनी ऊँचाई तक आ जाता है।

(४) कुएँ के मुँह से पानी कितना ऊपर फेंकना होगा।

(५) पम्प में मोड़ कितने लगाने होंगे।

(६) यदि एञ्जिन हो और पम्प मँगाना हो तो एञ्जिन के शक्ति-संचालन, पहिए का व्यास और प्रति मिनट वह कितने चक्कर लगाता है इसका ब्योरा देना चाहिए।

(७) प्रति मिनट पानी कितना फेंकना होगा।

पानी की चाह कितनी होगी यह निम्न लिखित रीति से निकाली जा सकती है।

सिंचाई के लिए एक बार में कम से कम आधा इञ्च और अधिक से अधिक दो ढाई इञ्च पानी दिया जाता है। एक इञ्च

पानी देना हो तो एक एकड़ के लिए एक सौ टन पानी होता है। इस हिसाब से एक दिन में कितने एकड़ सींचने होंगे इसका निश्चय करके पानी की चाह का अनुमान कर सकते हैं।

उदाहरण के लिये समझिये, किसी व्यक्ति को दस एकड़ ज़मीन पर एक इञ्च पानी नित्य प्रति देना है तो उसे नित्य १००० टन पानी चाहिए। मान लिया जाय कि पम्प १० घंटे रोज चलता है तो प्रति मिनट $\frac{१०००}{१० \times ६०} = \frac{५}{३}$ टन या ३७३.३ गेलन पानी मिलना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को पम्प मँगाते समय यह लिखना चाहिए कि ऐसा पम्प हो जो क़रीब ३७५ गेलन पानी प्रति मिनट बाहर फेंक सके। (एक गेलन पानी लगभग पाँच सेर होता है।)

दस एकड़ के बाग़ीचे के लिए मोट ही उत्तम होता है परन्तु फिर भी यदि किसी की इच्छा हो तो ऊपर लिखी हुई रीति से गणना करके पम्प मँगवा सकते हैं। ऐसे बाग़ीचों में प्रति दिन एक एकड़ की सिंचाई काफ़ी होगी।

सिंचाई की रीति :—

सिंचाई चार प्रकार से की जा सकती है।

(१) ऊपर से जल का छिड़काव।

(२) क्यारियों में जल देना।

(३) नालियों द्वारा सिंचाई करना।

(४) मिट्टी के अन्दर दबाए हुए झिरझिरे (Porous) नलों द्वारा।

पहली रीति भारतवर्ष में सिर्फ़ नर्सरी या गमलों की सिंचाई के काम में लायी जाती है जिसमें हज़ारे से पानी दिया जाता है। अमेरिका में कहीं कहीं खेत के खेत इस रीति से सींचे जाते हैं। खेतों में पाँच छः फ़ीट की ऊँचाई पर नल लगाए जाते हैं जिनमें छिद्र रहते हैं। उन्हीं छिद्रों द्वारा बहुत महीन जल की धाराएँ फ़व्वारे की भाँति उड़ती रहती हैं। नल इतनी दूरी पर लगाये जाते हैं कि जिसमें दोनों ओर की धाराओं से बीच की सब ज़मीन की सिंचाई हो सके। इस प्रकार की सिंचाई में जल का व्यय तो कुछ अधिक होता है क्योंकि कुछ भाग हवा में उड़ जाता है परंतु लाभ यह है कि पौधों के आस-पास की हवा कुछ ठंडी हो जाती है और पौधे धुल जाते हैं जिससे उनकी बाढ़ अच्छी होती है। विशेष लाभ यह है कि ज़मीन यदि ऊँचा नीची हो अर्थात् समतल न हो तो इस प्रकार की सिंचाई से अच्छा काम चलाया जा सकता है।

दूसरी रीति में नालियों द्वारा क्यारियों में जल पहुँचाया जाता है और वे भर दी जाती हैं। क्यारियाँ साधारण तौर पर पन्द्रह बीस फ़ीट लम्बी और आठ दस फ़ीट चौड़ी होती हैं। परन्तु ज़मीन के ढालानुसार इनका आकार बढ़ाया घटाया जा सकता है। इस रीति से जहाँ पानी दिया जाता है वहाँ की भूमि समतल होनी चाहिए। अधिक ढालू ज़मीन में यह रीति काम

नहीं दे सकती। इस प्रकार की सिंचाई में पानी का व्यय भी कुछ विशेष होता है।

तीसरी रीति में तरकारियाँ पारियों पर या नालियों में लगायी जाती है और नालियाँ पानी से भर दी जाती हैं। इस रीति में पानी कुछ कम देना पड़ता है। यह समतल तथा ऊँची नीची ज़मीन में भी काम में लायी जा सकती है। इसमें इतना ध्यान रखना चाहिए कि पानी देने वाली नालियाँ ढाल से समकोण पर रहें। ढाल के समानान्तर यानी ऊँचाई से निचाई की ओर रक्खी जायँगी तो पानी नीचे की ओर जमा हो जायगा और ऊपर वाले पौधों को पूरा जल नहीं मिलेगा।

उपर्युक्त दोनों रीतियों में से किसे काम में लाना चाहिए यह ज़मीन के ढाल या तरकारी की जाति पर निर्भर है। साग, मेथी, धनियाँ आदि क्यारियों में लगाना ठीक होता है। गोभी, मूली, आलू आदि पारियों पर अच्छे होते हैं। खरबूज़ा, ककड़ी आदि नालियों में लगाये जाते हैं।

चौथी रीति का उपयोग निजी बाग़ीचों में जहाँ की भूमि दुमट या बलुआ दुमट हो और पानी की कमी हो वहाँ काम में लायी जा सकती है। इसके लिए एक निर्माणित दूरी पर मिट्टी के झिरझिरे नल जमीन के अन्दर दो ढाई फ़ीट की गहराई पर लगा दिये जाते हैं। इन नलों की कतारें एक बड़ी नाली या नलों की नाली से जगह जगह मिला दी जाती हैं। बड़ी नाली में पानी छोड़ देते हैं और झिरझिरे नल उस पानी से भर जाते हैं जिनसे मिट्टी

आवश्यकतानुसार जल प्राप्त कर पौधों का पोषण करती रहती है। इस प्रकार की सिंचाई में पानी कम लगता है। क्योंकि मिट्टी के अन्दर रहने से वायु मडल में पानी विशेष उड़ने नहीं पाता। पौधों की जड़ों के पास जहाँ पानी की आवश्यकता होती है वहीं रहता है। खेतों में ऊपरी सतह में पानी कम होने से खरपतवार भी जमने नहीं पाते।

पानी कब और कितना देना चाहिए :—

इसके लिए कोई खास नियम नहीं बनाया जा सकता। तरकारी और भूमि की जाति तथा ऋतु के अनुसार पानी देना चाहिए। देशी या देश रंजित तरकारियों की अपेक्षा बाहर से आयी हुई को पानी विशेष देना पड़ता है। बलुआ जमीन में मटियार की अपेक्षा जल की अधिक आवश्यकता होती है, अतः बलुआ में पानी जल्दी जल्दी देना पड़ता है। एक साथ अधिक पानी भी ऐसी जमीन में नहीं देना चाहिए क्योंकि बहुत सा पानी नीचे चला जाता है और पौधों की पहुँच के बाहर हो जाता है। इन सब कारणों से तरकारियों के वर्णन में यही कहा गया है कि आवश्यकतानुसार जल देना चाहिए। यहाँ पर यह कह सकते हैं कि प्रत्येक सिंचाई के समय तरकारी की जाति के अनुसार एक इञ्च से ढाई इञ्च तक पानी देना चाहिए। तरकारियाँ स्वयम् अपनी माँग दर्शा देती हैं। जब जमीन फटने लगे और तरकारियाँ कुछ मुर्झाने लगें तब पानी देने में विलम्ब नहीं करना चाहिए। थोड़े से अनुभव से पानी देने का समय ज्ञात हो जाता है।

प्रकरण ७

फ़सल की तैयारी तथा हेर फेर

कुछ तरकारियाँ ऐसी हैं जो बोने के समय से तीन चार सप्ताह में उपयोग के योग्य हो जाती हैं। अधिकांश ऐसी हैं जो तीन चार महीने बाद तैयार होती हैं। कुछ ऐसी भी हैं जिन्हें सात आठ महीने लगते हैं और दो चार ऐसी भी हैं जिनकी तैयारी में दो साल से चार पाँच साल की आवश्यकता होती है। ऐसपेरेगस दो साल के बाद काम के योग्य होता है और फिर बरसों तक लगा रहता है। पूरा बाढ़ पाया हुआ सूरन चार साल के परिश्रम से तैयार होता है। जो फ़सलें उचित समय से आगे पीछे लगाई जाती हैं उनमें कुछ समय अधिक लगता है।

तरकारी के व्यवसाय वालों को फ़सल की तैयारी और अमुक फ़सल कितने दिनों तक तैयार होने के पश्चात् खेतों में या पौधों पर छोड़ दी जा सकती है, इसका पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। बहुत सी तरकारियाँ जैसे भिण्डी, तरोई आदि तैयार हो जाने पर दो चार दिन के लिए छोड़ दी जायँ तो कठोर हो जाती हैं, गोभियाँ फूट जाती हैं और उनका स्वाद नष्ट हो जाता है। टमाटर, फूट आदि फट जाते हैं, इसलिए ऐसी तरकारियाँ ज्यों ही तैयार हो जायँ ठीक समय पर बाज़ार में भेज देनी चाहिएँ। कुछ तरकारियाँ जैसे

आलू, शकरकंद, सुथनी आदि ऐसी हैं कि जिन्हें कुछ समय तक रख सकते हैं। ऐसी फ़सलों का भाव ठीक चढ़ जाय उस समय तक रखने में कोई हानि नहीं है। मूली, बीट (चुकन्दर), गाजर आदि को ठीक उसी समय उखाड़ना चाहिए जब उनकी बाढ़ पूरी हो जाय पर कोमलता नष्ट न हो। कच्ची उखाड़ने से वे अच्छी स्वादिष्ट नहीं होतीं।

ज़मीन से ऊपर होने वाली फ़सलों की तैयारी उनके रूप, रंग और आकार से भलीभांति जानी जा सकती है परन्तु जो मिट्टी के अन्दर होती हैं उनके पहचानने में तनिक कठिनाई होती है। ऊपर वाली फ़सलें जैसे जैसे तैयार होती जायँ उन्हें तोड़ सकते हैं परन्तु जहाँ खोदकर निकालना होता है वहाँ ऐसा नहीं कर सकते। एक पौधे को खोदने से निकट के दूसरे पौधे को कुछ न कुछ हानि पहुँच ही जाती है। ऐसी फ़सलों की खेती इस रीति से करनी चाहिए कि जिसमें एक बार उठाने से इतनी फ़सल एक साथ ही तैयार हो जाय। ज़मीन के अन्दर होने वाली फ़सलों की तैयारी उनके पत्तों के रंग बदलने तथा मुर्झाने से जानी जा सकती है।

फ़सल का हेर फेर:—

एक ही स्थान में प्रति वर्ष एक ही तरकारी नहीं लगानी चाहिए। इसमें हेर फेर होना ही चाहिए। ऐसा नहीं करने से पैदावार अच्छी नहीं होती और भूमि द्वारा तथा कीट द्वारा होने वाली व्याधियों की वृद्धि होती रहती है। एक ही जाति की

तरकारी के लिए एक ही प्रकार की जुताई करनी पड़ती है जिससे भूमि की रासायनिक और भौतिक स्थिति भी बिगड़ जाती है। खाद के तत्वों की मात्रा का परिमाण भी ठीक नहीं रहता क्योंकि एक ही तरकारी के लगाने से कुछ तत्वों का व्यय विशेष हो जाता है और कुछ की मात्रा बढ़ जाती है। इन सब कारणों से तरकारियों के लगाने में हेर फेर अवश्य करते रहना चाहिए।

तरकारियों के हेर फेर में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि गहरी जड़ वाली, फ़सलों के बाद उथली जड़ वाली, अधिक खाद चाहने वाली के बाद कम खाद चाहने वाली, नत्रजन का खाद चाहने वाली के बाद स्फुर और पोटाश का खाद चाहने वाली, जड़ वाली अथवा कंद के बाद पत्ते वाली और फलदार के बाद फली वाली फ़सलें लगायी जायें।

प्रकरण ८

तरकारियों के शत्रु और उनसे बचाने के उपाय

तरकारियों के शत्रु भी बहुत होते हैं। इनके आक्रमण से बचाने की ओर पूरा ध्यान रखना चाहिए नहीं तो खेत के खेत नष्ट हो जाते हैं। निदाई, सिंचाई तथा और किसी वक्त भी तरकारियों के खेतों को देखते रहना चाहिए।

तरकारियों के शत्रु दो प्रकार के होते हैं। एक वे जो बिना किसी यन्त्र की सहायता के दिखलायी दें और दूसरे वे जिनकी पहचान के लिए यन्त्रों की सहायता लेनी पड़ती है। पहले प्रकार के शत्रुओं में मनुष्य, पशु-पक्षी और कीट हैं। दूसरे में सूक्ष्म जन्तु हैं। इनके सिवाय पाले से भी तरकारियों को हानि पहुँचती है इसलिए उससे बचाने के उपचार भी होने चाहिए।

मनुष्यों से बचाने के लिए काँटेदार घेरा या रखवाला रखने के सिवाय अन्य कोई युक्ति नहीं है। बड़े पशुओं से बचाने के लिए घेरा, रखवाला, रोशनी और ढोल या किसी बर्तन की आवाज से काम निकालना चाहिए। बहुत से पशु रोशनी से डर कर निकट नहीं आते। बन्दरों को बन्दूक की आवाज गुलेल या पत्थरों से भगाना चाहिए। चूहों को पिंजड़ों में पकड़कर या विषैली औषधियों से मार डालना चाहिए। किसी खाने के पदार्थ

में विष मिलाकर खेतों में जगह जगह रख देने से चूहे उसे खाकर मर जाते हैं। गिलहरी और पक्षी टीन की आवाज़ या पत्थर से भगाये जा सकते हैं। लकड़ियों पर रंगे हुए फटे पुराने कपड़े लगा देने से भी बहुत से पशु-पक्षी निकट नहीं आते हैं।

पशुओं में सूअर और साही कंद को, गीदड़ और साही मक्का को बहुत हानि पहुँचाते हैं। पक्षियों में सुग्गा मक्का को और मैना मटर को बहुत खाती है। मटर के निकलते ही कोपलों को और फलियाँ आते ही बीज निकालकर मैना खा जाती है।

कीट और सूक्ष्म जन्तुओं से होने वाली व्याधियों से बचाने के लिए ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि जिसमें उपस्थित कीट वा जन्तु मर जायँ और दूसरे बाहर से आकर वंश-वृद्धि करने न पावें।

निम्नलिखित साधारण नियमों की ओर ध्यान रक्खा जाय तो फ़सलों का बचाव बहुत कुछ हो सकता है।

(१) फ़सल का हेर फेर:—बहुत सी व्याधियों के कीट और जन्तु ज़मीन में रहते हैं। इनमें कुछ ऐसे होते हैं जो किसी मुख्य फ़सल को ही हानि पहुँचा सकते हैं। यदि एक ही खेत में एक ही प्रकार की फ़सल लेते रहें तो व्याधिकर्ता जन्तुओं की वृद्धि होती रहती है क्योंकि उन्हें बराबर भोजन मिलता रहता है। फ़सल के हेर फेर से उचित भोजन के अभाव के कारण वे नष्ट हो जाते हैं।

(२) कूड़ा-कर्कट:—घास-पात और कम सड़े हुए पत्तों

में भी कीट और व्याधि के जन्तु रहते हैं इसलिए इन्हें खूब सड़ा कर खेतों में डालना चाहिए और जो व्याधिग्रस्त पौधे हों उनको तो जला ही देना चाहिए।

(३) जुताई :—बार बार की जुताई से बहुत से कीट बाहर निकल आते हैं जिन्हें पक्षी खा जाते हैं या वे धूप से मर जाते हैं। उनके अण्डे और कोष का भी धूप से नाश हो जाता है। इसके सिवाय खेतों में घास पात जमने नहीं पाते जिनमें बहुत से कीट छिपे रहते हैं और फसलों के अभाव में उनसे अपना पोषण करते हैं।

(४) व्याधि और कीट रहित बीज :—बहुत से कीट और जन्तु बीज के साथ खेतों में पहुँच जाते हैं इसलिए सुरक्षित, व्याधि और कीट रहित बीज ही बोना चाहिए। यदि ऐसे बीज न मिल सकें तो उन्हें व्याधि और कीट रहित करके बोना चाहिए। पारे के नमक (Corrosive Sublimate) या (Mercuric Chloride) के घोल से धोने से बीज जन्तु रहित और कार्बन-बाईसलफाइड (Carbon-bi-Sulphide) की धूनी से कीट रहित किये जा सकते हैं। उपरोक्त औषधियों के उपयोग की रीति आगे दी गयी है।

(५) भूमि को जन्तुहीन करना :—बहुमूल्य बीज जब नर्सरी में बोये जाते हैं तो उनके बोने के पहिले नर्सरी की मिट्टी को भी जन्तु रहित कर लेते हैं। इस क्रिया को स्टरिलाईजेशन (Sterilization) कहते हैं। इसके लिए वाष्प (भाफ) या

फ़ार्मेलीन का उपयोग किया जाता है। जब वाष्प का उपयोग करते हैं तो मिट्टी पर एक बड़ी कढ़ाई उलटी रखकर उसके नीचे वाष्प छोड़ देते हैं। दो घंटे तक जो मिट्टी इस रीति से गरम की जाती है वह बहुत कुछ जन्तु और कीट रहित हो जाती है। जब फ़ार्मेलीन का उपयोग किया जाता है तो उसे मिट्टी पर छींटकर मिट्टी चला देते हैं।

(६) नर्सरी में रक्षा :—नर्सरी में पौधों को एक प्रकार के छोटे छोटे कीट (Flea beetles) बहुत हानि पहुँचाते हैं। जब पत्तों में बहुत से छेद नज़र आयें तब समझना चाहिए कि यह ऐसे कीट की करतूत है। इनसे बचाने के लिए मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख पौधों पर छिड़कते रहना चाहिए। ज़मीन पर रेंगने वाले कीट से बचाने के लिए नर्सरी के आसपास खाई बनवा देना चाहिए ताकि वे खाई में गिर जायँ और मारे जा सकें।

(७) खेतों में लगाने के पश्चात् यदि फ़सल पर कीट का आक्रमण हो जाय तो उन्हें विष से मार देना चाहिए। विष दो प्रकार के होते हैं एक आन्तरिक अर्थात् जिनके खाने से कीट मर जायँ और दूसरे स्पर्शक अर्थात् जिनके कीट के बदन पर लगने से कीट का नाश हो जाय। कुछ औषधियाँ ऐसी भी हैं जिनकी बास से कीट भाग जाते हैं।

(८) घातक कीट का संरक्षण :—कुछ कीट ऐसे भी होते हैं जो फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीट का नाश करते हैं (पृष्ठ ८६-८७)। ऐसे कीट की रक्षा करनी चाहिए।

(९) कीट भक्षक पक्षियों का पालन या संरक्षण:—कौवे, नीलकंठ, तीतर इत्यादि पक्षी ऐसे हैं जो कीड़े खाते हैं, ऐसे पक्षियों का संरक्षण भी लाभदायक होता है।

सूक्ष्म जन्तु द्वारा होने वाली व्याधियों से बचाने के लिए भी ऐसे उपचार किए जाते हैं।

कीट से होने वाली व्याधियाँ :—

कीट से क़रीब क़रीब सब तरकारियों को हानि पहुँचती है। इनसे बचाने का एक मुख्य उपाय यह है कि हानि पहुँचाते हुए देखते ही उन्हें मार डालने का प्रयत्न करना चाहिए। छोड़ देने से या देरी करने से उनकी वंश-वृद्धि हो जाती है और फिर फ़सल का बचाना बहुत कठिन हो जाता है।

बहुत से कीट का जीवनचरित्र ऐसा विचित्र है कि उन्हें पहचानना सरल नहीं है। उनके बाल कीट के रहन-सहन तथा खान-पान के ढंग तरुण कीट के ढंग से बिलकुल ही निराले होते हैं जिनसे साधारण मनुष्य यह नहीं कह सकता कि अमुक कीट अमुक जाति के कीट का बाल कीट है। जब तक इस बात का कुछ ज्ञान न हो जाय उनसे मुक्त होना भी कठिन है क्योंकि यदि हानिकर्ता बाल कीट मार भी दिये जायँ तो उनके जन्मदाता तरुण कीट उन्हें फिर उत्पन्न कर देते हैं इसलिए सभी अवस्था में उनके नाश करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस कार्य के लिए कीटों का कुछ जीवन-रहस्य भी अवश्य जानना चाहिए।

यहाँ पर स्थानाभाव के कारण विस्तार पूर्वक जीवन-रहस्य

नहीं दिया जा सकता। कुछ मुख्य मुख्य कीट जिनसे तरकारियों को बहुत हानि पहुँचती है उन्हीं के जीवन-रहस्य का संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है कि जिससे कृषकों का काम चल जाय और वे कीट को पहचान सकें। विशेष जानकारी की इच्छा हो तो पाठकों को चाहिए कि "फ़सल के शत्रु*" नाम की पुस्तक का अवलोकन करें।

कीट सब अण्डज अर्थात् अण्डों से पैदा होते हैं। साधारण कीट दो विभागों में विभाजित किये जा सकते हैं। एक वे जिनके जीवन में रूपान्तर होता है; जिसमें बाल कीट का रूप तरुण कीट के रूप से बिलकुल ही निराला होता है और दूसरे वे जिनमें रूपान्तर नहीं होता। इस विभाग के तरुण कीट बाल कीट से बड़े होते हैं लेकिन उनका रूप नहीं बदलता। परिवर्तन सिर्फ यही होता है कि बाल कीट के पर नहीं होते पर ज्यों ज्यों वे बड़े होते जाते हैं पर आते जाते हैं। किसी किसी कीट के पर नहीं भी आते हैं। इस वर्ग में कुछ कीट ऐसे होते हैं जो तरकारियों को मुँह से काट कर खाते हैं और कुछ का मुँह नली के आकार का होता है जिसके द्वारा वे रस चूसते हैं।

तितली, गोबरीला, फलों की मक्खी, रेशम के कीट आदि की गणना रूपान्तर करने वालों में है। टिड्डी, दीमक, झिंगुर, तिलचट्टा, लाख के कीट आदि दूसरे वर्ग के हैं।

---

*लेखक—शंकर राव जोशी।

रूप बदलनेवाले कीट के बाल कीट गोल और लम्बे कई रंग के होते हैं। किसी किसी के बदन पर बाल भी होते हैं। किसी किसी जाति के बाल कीट के बहुत से पाँव होते हैं और किसी किसी के होते ही नहीं। इस अवस्था में ये कीट बहुत जल्दी जल्दी बढ़ते हैं। खाद्य-पदार्थ को मुँह से काट कर भोजन करते हैं और जब तरुण अवस्था प्राप्त होने की होती है तो खाना पीना छोड़ देते हैं, आकार छोटा हो जाता है और अपने ऊपर पतली या मोटी झिल्ली (कोष) बनाकर कई दिनों तक बिना खान-पान के उसमें रह जाते हैं। इस झिल्ली के अन्दर रूपान्तर होता है। बिलकुल नया रूप बन जाता है। इसी अवस्था में पर भी आ जाते हैं और पाँव भी बन जाते हैं। किसी किसी का मुँह नली के जैसा बन जाता है जिससे वे सिर्फ रस ही चूस सकते हैं जैसा कि तितलियों का मुँह होता है और किसी किसी का मुँह ऐसा भी रहता है कि वे काटकर ही खाते हैं जैसे गोबरीले कीट की जाति वाले कीट। रूपान्तर करने वाले कीट की तरुण अवस्था बहुत कम दिनों की होती है। इनका मुख्य कर्त्तव्य प्रजोत्पत्ति का होता है। नर-मादा का जब मेल हो जाता है तो नर तो बहुधा उसी समय प्राण त्याग देता है और अण्डे देने के पश्चात् मादा का भी प्राणान्तर हो जाता है।

खान-पान की रीति अनुसार वर्ग निर्माण किया जाय तो हानि पहुँचाने वाले कीट के दो वर्ग होंगे। पहले वर्ग में वे होंगे जो मुँह से काट कर खाते हैं और दूसरे में वे जो सिर्फ रस चूसते हैं।

तितलियों के बाल कीट (Caterpillars), टिड्डे (Grass-hoppers), गोबरीले (Beetles) आदि पहले वर्ग के और तितलियों के तरुण कीट, तरुण मच्छर और खटमल की जाति वाले कीट दूसरे वर्ग के उदाहरण हैं।

कीट के खान-पान की रीति का ज्ञान हो जाने से उनके नष्ट करने के उपायों में सरलता होती है, इसी ज्ञान के आधार पर विष प्रयोग किया जाता है। खाने वालों के लिए आन्तरिक और रस चूसने वालों के लिए स्पर्शक विष देना चाहिए। आन्तरिक विष पौधों पर पानी में घोलकर छींट दिए जाते हैं या अन्य किसी प्रकार के खाद्य-पदार्थ में मिला कर खेतों में रख देते हैं जिनके खाने से कीट मर जाते हैं। स्पर्शक विष कीट के ऊपर छिड़के जाते हैं जिससे उनका नाश हो जाता है।

स्मरण रहे कि विष ऐसे हों जो यदि धोए जायँ तो तरकारी पर से धुल जायँ ताकि मनुष्यों को हानि नहीं पहुँचे।

हानिकारक कीट की मुख्य जातियाँ :—

टिड्डे की जाति वाले कीट—(Grass-hoppers, Crickets, Locusts) :-इन कीटों से सब तरकारियों को हानि पहुँचती है। ये बहुधा पत्ते आदि हरे भागों को खाते हैं। यदि ध्यान न रक्खा जाय तो कोमल पौधों को बिलकुल ही खा जाते हैं। इनके अण्डे जमीन में दिये जाते हैं। बाल्यावस्था से वृद्धावस्था तक बराबर हानि पहुँचाते ही रहते हैं। अण्डों का नाश खेतों की जुताई से और कीट का नाश आन्तरिक विष से करना चाहिए। जब तक

इनके पर नहीं आते ये फुदकते रहते हैं। ऐसे अवसर पर यदि कपड़े की जाली पौधों पर घुमाई जाय तो उसमें फुदकनेवाले कीट आसानी से पकड़े जा सकते हैं।

तितलियाँ और पतंग (Butterflies and Moths) :—इस जाति के कुछ कीट ऐसे होते हैं जो दिन में बाहर निकलते हैं और कुछ ऐसे होते हैं जो रात्रि में ही बाहर आते हैं। विशेषतः तरुण कीट में यह भिन्नता पायी जाती है। दिन में दिन वाले (तितिलियाँ) और रात्रि में रात्रि वाले (पतंग) इधर उधर उड़ते रहते हैं और नर मादा के मेल के पश्चात् पौधों पर या उनके निकट ज़मीन में अण्डे दे देते हैं जिनसे बाल कीट निकलकर पौधों पर धावा करते हैं। इस जाति के बाल कीट ही अपरोक्ष रूप से हानि पहुँचाते हैं। तरुण कीट की एक तो आयु कम होती है दूसरे वे सिर्फ फूलों का रस चूसते हैं इससे हानि नहीं होती परन्तु वे अण्डे देकर हानिकर्ता बाल कीट की संख्या बढ़ाते हैं इसलिए परोक्षरूप से हानिकारक हैं। ये कीट बरसात के बाद विशेष हानि पहुँचाते हैं।

इनके नाश का उपाय यह है कि जब बहुत से बाल कीट एक ही पौधे पर पाये जायँ तो उस समय चुनवा कर मरवा डालना चाहिए ताकि वे फैलने न पावें। यदि बहुत फैले हुए हों तो आन्तरिक विष का प्रयोग करना चाहिए। तरुण कीट अण्डे न देने पावें इसलिए उनको रात्रि में रोशनी पर आकर्षित कर मार डालना चाहिए। इस जाति के बहुत से तरुण कीट रोशनी की

ओर बहुत आकर्षित होते हैं। तरकारियों की क्यारियों में कहीं कहीं चौड़े बर्तनों में थोड़ा पानी भर कर उस पर मिट्टी का तेल डालकर के रखना चाहिए। उन बर्तनों पर यदि रोशनी रक्खी जाय तो कीट आकर्षित होकर आते हैं और तेल में गिरकर मर जाते हैं। तितिलियाँ जो दिन में उड़ती हैं लेकिन रात्रि में नहीं आतीं उन्हें छोटी छोटी कपड़ों की जालियों में पकड़ सकते हैं। विशेषतः तितिलियाँ इतनी हानिकारक नहीं होतीं जितने पतंग होते हैं।

गोबरीले कीट की जाति वाले कीट (Beetles) :—इस जाति वाले बाल कीट और तरुण कीट दोनों ही हानि पहुँचाते हैं क्योंकि रूपान्तर होने पर भी इनके खान-पान की रीति नहीं बदलती। ये दोनों अवस्था में खाद्य पदार्थ को काटकर खाते हैं। शकरकन्द का घुन और पौधों की कठोर डण्डियों को छेदने वाले कीट इसी जाति के हैं। इस जाति के कीट पौधों की डण्डियों पर या ज़मीन में और कूड़ा कर्कट या गोबर में अण्डे देते हैं। अण्डों से निकलते ही बाल कीट भोजन की खोज में चल पड़ते हैं। जिन्हें पौधों की डण्डियों का या कन्द का भोजन करना होता है। वे कीट भोज्य पदार्थ पर या उसके निकट ही अण्डे देते हैं कि जिसमें उनके बाल कीट को शीघ्र ही भोजन प्राप्त हो जाय। डण्डियों के छेदने वाले जब उनमें प्रवेश करके भोजन करना प्रारम्भ करते हैं तो कुछ दिनों में पौधे या शाखाएँ मर जाती हैं। जब कोई पौधा या टहनी मरी हुई दिखे तो उसे चीर कर देखना

चाहिए और यदि उसमें से कीट निकले तो उसे जला देना चाहिए। जब बाल कीट के रूपपरिवर्तन का समय आता है तो वह उसी डण्डी में भोजन त्यागकर कोष बनाता है और रूपान्तर करता है। तरुण कीट कोमल पत्ते और फूलों की पंखड़ियों को खाते हैं। ऐसे कीट रोशनी की ओर आकर्षित करके मार दिये जा सकते हैं।

दीमक (White ants) :—इनका जीवन बड़ा रहस्य-मय है। ये झुण्ड बनाकर रहती हैं। इस झुण्ड में एक मादा होती है वही बहुत से अण्डे देती रहती है। वह इतनी मोटी हो जाती है कि उसके लिए चलना फिरना कठिन हो जाता है। वह एक ही स्थान पर बैठी हुई अण्डे दिया करती है। कीट वैज्ञानिक इसे रानी के नाम से सम्बोधित करते हैं। इसके महल में कुछ नर ऐसे रहते हैं जिन्हें भोजन करने और प्रजोत्पत्ति के सिवाय कोई काम नहीं करना पड़ता। इन नरों के मेल से रानी अण्डे देती है। एक रानी करीब तीन साल तक अण्डे देती रहती है। उसके बाद दूसरी रानी उसका स्थान ले लेती है। अण्डों में से जो कीट निकलते हैं उसमें बहुत से मज़दूर और कुछ सैनिक होते हैं। थोड़े से प्रजा उत्पन्न करने वाले नर और कुछ मादिनें होती हैं। जब इन नर मादिनों के पर आ जाते हैं तो वे बाहर निकलते हैं और दूसरे स्थान में अपना साम्राज्य स्थापित करते हैं। ये बहुधा बरसात में बाहर निकलते हैं और दूसरे स्थान में पहुँचने के पहले ही बहुत से मेंढक, चमगादड़ और छिपकली आदि के

भक्ष्य बन जाते हैं। मज़दूर और सैनिकों का कार्य, रानी, उसके प्रेमी और बच्चों की सेवा तथा रक्षा का है। वे उनके लिए ये भोजन लाते हैं, महल बनाते हैं और रानी के पास से अण्डों को दूर ले जाकर अपने नगर के किसी सुरक्षित भाग में रख कर उनका पालन करते हैं। मज़दूर दल के व्यक्ति तरकारियों को हानि पहुँचाते हैं। सिर्फ़ इनका नाश करने से ही काम नहीं चल सकता। प्रयत्न ऐसा होना चाहिए कि जिसमें इनके नगर को खोद कर रानी मार दी जाय या नगर में विषैली वायु भर दी जाय कि जिससे सब के सब मर जायँ

लाही, मोला (Aphis) :—इस जाति के कीट छोटे छोटे होते हैं जो चँवली, सरसों आदि में लग जाते हैं और जब बहुत हो जाते हैं तो फलियों पर इतने घने दिखलायी पड़ते हैं कि फलियाँ बिलकुल ढक जाती हैं। ये रस चूसकर खाते हैं। बहुधा जाड़े के दिनों में जब थोड़ी वृष्टि हो जाती है और बादलों से आसमान घिर जाता है तो इनकी उत्पत्ति बहुत हो जाती है। इनके नाश के लिए पौधों पर सूखी या मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छिड़कते रहना चाहिए कि जिससे तरी कम हो जाय और वे बढ़ने न पावें। तम्बाकू का काढ़ा भी इन कीटों को मारने के लिए उत्तम होता है। इनका शत्रु एक कीट, सोन पांखरा (Lady-bird beetle) होता है। यह कीट गोबरीले कीट की जाति का होता है। तरुण कीट बड़ी रहर या देशी मटर इतना बड़ा होता है। पर चमकीले सुनहरी रंग के जिन पर छः काले

काले धब्बे भी होते हैं। जहाँ लाही का आक्रमण दिखलाई दे वहाँ थोड़े से सोन पांखरों को लाकर छोड़ देना चाहिये, फिर ये शीघ्र प्रजोत्पत्ति कर अपना कार्य सँभाल लेते हैं। लेसविंग फ्लाई (Lacewing fly) और सिरफस फ्लाई (Syrphus fly) नाम के दो और शत्रु होते हैं। दोनों के बाल कीट लाही का रस चूसकर उसका नाश करते हैं। पहला लाही के कीट का रस चूस कर उनके खोखलों को पीठ पर लादे फिरता है। दूसरा दृष्टिहीन होने के कारण लाही को टटोल कर रस चूसता है।

खटमल की जाति के कीट (Bugs) :—इस जाति के कुछ कीट होते हैं जो पौधों का रस चूसते हैं। इनसे कुछ विशेष हानि नहीं होती लेकिन यदि अधिक संख्या में होकर हानि करते दिखलाई दें तो चुनवाकर इनका नाश करा दिया जा सकता है।

फल की मक्खी (Fruit fly) :—फूट आदि फलों में इसके बाल कीट बहुत पाये जाते हैं। मक्खी जाकर फलों के छिलकों में छेद करके अण्डे देती है। उनसे बाल कीट निकलकर अन्दर के गूदे से अपना पोषण करते हैं और जब रूपपरिवर्तन का समय आता है तो फल के बाहर निकल कर मिट्टी में कोष बनाते हैं और कुछ समयोपरान्त मक्खियों के रूप में निकल जाते हैं।

इनके नाश का एक मात्र उपाय यह है कि जिन फलों में ये पाये जायँ उन्हें जला देना चाहिए ताकि आगे इनकी वृद्धि न हो। मादा बहुधा बहुत पके हुए फलों पर ही अण्डे देती है इसलिए फल ज्यों ही पकते जायँ तोड़ते जाना चाहिए।

मुख्य मुख्य तरकारियों को हानि पहुँचाने वाले कीटः—

कन्द वाली फ़सलों में आलू और शकरकंद की खेती बहुतायत से होती है और इनको ही कीटों से अधिक हानि पहुँचती है। दूसरी फ़सलों पर विशेष आक्रमण नहीं होता।

यहाँ पर यह बतला देना अनुचित नहीं होगा कि कीटों के हिन्दी नाम स्थान स्थान में पृथक पृथक होते हैं और सब नाम यहाँ देना असम्भव है इसलिए अंग्रेज़ी नाम ही दिये जाते हैं। कीट के रूप रंग तथा उनके कर्तव्य के वर्णन से पाठकों को पहचानने में असुविधा न होगी। इनका स्थानीय नाम स्थानीय कृषकों से मालूम किया जा सकता है।

आलू के कीट :—

(१) पौधों को काट डालने वाला। (Greasy-surface Caterpillar) यह तितली की जाति वाला कीट है। इसके बाल कीट रात्रि में आकर पौधों को काट देते हैं। इनकी बाल्यावस्था लग-भग एक महीने तक रहती है। बाद में कोष में रूपान्तर होता है और कुछ दिनों में काले रंग के तरुण कीट निकल आते हैं। ये रात्रि में उड़ते रहते हैं। तरुण कीट का रोशनी से और बाल कीट का कटे हुए पौधों के नीचे की भूमि में खोजकर नाश किया जा सकता है। दिन में ये मिट्टी में छुपे रहते हैं और रात्रि में निकल आते हैं। किसी भोज्य पदार्थ में संखिया मिलाकर खेतों में रख देने से भी इनका नाश किया जा सकता है।

यह कीट चना, मटर, ख़सख़स, गोभी आदि पर भी पाया जाता है।

(२) पत्तों को हानि पहुँचाने वाले कीट :—

(Tobacco Caterpillar) यह कीट भी तितली की जाति का होता है जिसके बाल कीट आलू के पत्ते खाते हैं। तरुण कीट रात्रि को निकलता है। अण्डे पत्ते पर दिये जाते हैं और बहुत से इकट्ठे ही पाये जाते हैं सो चुनवा कर उनका नाश करा देना चाहिए। बाल कीट भी प्रारम्भ में इकट्ठे ही पाये जाते हैं इससे सरलता से चुनवा दिये जा सकते हैं।

यह कीट गोभी, चना, मटर शकरकन्द आदि पर भी पाया जाता है।

(३) (Epilachna) यह गोबरीले कीट की जाति का पीले रंग का कीट होता है। इसकी पीठ पर २८ काले धब्बे रहते हैं। इसके बाल कीट और तरुण कीट दोनों ही पत्ते खाते हैं। अण्डे पत्तों पर पाये जाते हैं। ये सभी अवस्था में आसानी से चुने जा सकते हैं। करेला, खीरा, बैंगन आदि के पत्ते भी इसके भोज्य हैं।

गोदाम में हानि पहुँचाने वाला कीट :—

(४) (Potato Moth) :—यह आलू का पक्का शत्रु है। खेत में भी यह कुछ हानि पहुँचाता है। गोदाम में तो गोदाम के गोदाम इसके प्रवेश से नष्ट हो जाते हैं। यह आलू को काट कर उसमें प्रवेश कर जाता है जिससे बाद में आलू सड़ जाते हैं।

यह कीट भी तितली की जाति का होता है। बाल कीट सफ़ेद रंग और काले मुँह का क़रीब एक जौ के बराबर लम्बा होता है। इसकी मादा आलू की आँखों में अण्डे देती है। बाल कीट दस पन्द्रह दिन तक आलू के अन्दर ही रहता है। पूर्ण बाढ़ के बाद रूपान्तर बाहर निकल कर करता है। तरुण कीट फिर दूसरे आलू पर अण्डे दे देते हैं। खेतों में मादा आलू पर अण्डे देने न पाये इसलिए यदि कहीं आलू खुला हुआ दिखलाई दे तो उसे मिट्टी से ढक देना चाहिए। फ़सल को उठा लेने के बाद आलू को अच्छे हवादार मकान में किसी सूखे पदार्थ से ढक कर रखना चाहिए कि जिसमें मादा आलू पर अण्डे न दे सके। इसके लिए बालू अच्छी समझी गयी है परन्तु लेखक के प्रयोग में लकड़ी के कोयले का चूर्ण * और भी अच्छा पाया गया है। बीज वाले आलू यदि कोयले के चूर्ण में रक्खे जायँ तो वे सिर्फ़ अच्छे ही नहीं रहते बल्कि उनके लगाने से पैदावार भी विशेष होती है। इनके रखने की रीति आलू के वर्णन में दी गयी है।

आलू का चालान बहुधा बोरों में होता है। ऐसे बोरे जिनके आलू में कीट हुए हों उन्हें गरम पानी में डुबाकर फिर आलू भरने चाहिएँ। नहीं तो बोरों में लगे हुए अण्डे से कीट निकल कर नये आलू में लग जायँगे। आलू के भरे हुए गोदाम कार्बन-बाइ-सलफाइड से भी कीटरहित किये जा सकते हैं। पेट्रोल भी

---

* *Storage of Potatoes by N. D. Vyas L. Ag, Agricultural Journal of India, Vol. XXV, Part V, Sept. 1930, pp. 408-416.*

इस कार्य के लिए काम में लाया जा सकता है। रुई को पेट्रोल में भिगो कर तश्तरियों में जगह जगह रख देते हैं। कार्बन-बाई-सलफाइड और पेट्रोल का उपयोग बड़ी सावधानी से करना चाहिए। दोनों तुरन्त आग पकड़ लेते हैं। जलती हुई बत्ती या आग पास में नहीं आने देनी चाहिए।

शकरकंद के कीट :—

(१) दीमक :—पृष्ठ ८५

(२) शकरकंद का घुन :—यह कीट नीले रंग का और चमकीला होता है। लम्बाई में जौ के बराबर होता है और आकार अनाज के घुन जैसा ही होता है। मादा कंद को काट कर उसमें छेद करके अण्डे देती है। बहुधा एक छेद में एक ही अण्डा दिया जाता है जिसमें से बाल कीट निकल कर कंद को खाता रहता है। पूर्ण बाढ़ के पश्चात् रूपान्तर कंद में ही होता है।

इससे बचाने के लिए खेतों में जो कहीं कंद मिट्टी से बाहर निकल आयें तो उनको ढक देना चाहिए। जिस कंद में कीट मिले उसे तो जलाही देना चाहिए।

पत्ते खाने वाले कीट :—

(३) Tobacco caterpillar—पृष्ठ ८९

(४) Bihar Hairy-caterpillar :—यह कीट तितली की जाति का होता है। पूरा बढ़ा हुआ बाल कीट डेढ़ इञ्च लम्बा

मुँह और दुम की तरफ़ कुछ काला और बीच में पीले रंग का होता है। इसके शरीर पर बहुत से बाल होते हैं। तरुण कीट रात्रि में उड़ने वाला क़रीब एक इञ्च लम्बा भूरे रंग का होता है। पत्तों के नीचे की ओर मादा अण्डे देती है। एक एक मादा चार चार सौ से एक हज़ार तक अण्डे देती है जिनसे बाल कीट निकल कर पत्तों पर धावा करते हैं। रूपान्तर मिट्टी में होता है। ये कीट अधिक न फैलने पावें इसलिए बाल कीट जो प्रारम्भ में इकट्ठे पाये जाते हैं उन्हें चुनवाकर मिट्टी में गड़वा देना चाहिए। यदि प्रारम्भ में नष्ट न कराये जायँ तो फिर इनसे फ़सल को बचाना बहुत कठिन हो जाता है।

(५) Orange banded Amsacta :—यह कीट तितली की जाति का होता है। इसकी मादा सैकड़ों अण्डे पत्तों पर देती है जिनसे बाल कीट निकल कर पत्तों पर धावा करते हैं। पूर्ण बाढ़ पाया हुआ बाल कीट डेढ़ इञ्च लम्बा बालदार होता है। रूपान्तर मिट्टी में होता है। इसके बाल कीट भी प्रारम्भ में एक ही साथ पाये जाते हैं सो उन्हें चुनवा कर मिट्टी में गाड़ देना चाहिए।

प्याज़, लहसुन आदि को हानि पहुँचाने वाले कीट :—

इनको एक जाति के टिड्डे बहुत हानि पहुँचाते हैं। जब इनके पौधे बहुत छोटे होते हैं तब ये कीट उन्हें काट देते हैं। ये टिड्डे कपड़े की जाली में पकड़े जा सकते हैं।

पत्ती, डंडी और फूल वाली फ़सलों को हानि पहुँचाने वाले कीट

इस वर्ग की तरकारियों में गोभियों की खेती की ओर विशेष ध्यान देना पड़ता है। महँगी बिकने के कारण इनसे आय भी अच्छी होती है। इन्हें निम्न लिखित कीट हानि पहुँचाते हैं—

(१) Diamond Black moth.
(२) Indigo caterpillar.
(३) Tobacco caterpillar.
(४) Cabbage butterfly.
(५) Mustard sawfly.
(६) Greasy surface caterpillar.
(७) Aphis.
(८) Crickets.
(९) Surface grass-hoppers.

इनमें से पहले चार तितली की जाति के हैं। पहले का तरुण कीट लगभग एक इञ्च लम्बा भूरे रंग का होता है। मादा पत्तों के नीचे की ओर अण्डे देती है जिनमें से सात आठ दिन बाद बाल कीट निकल कर पहले पत्तों का ऊपरी भाग खाते हैं और बड़े होने पर पत्तों में छेद कर देते हैं। बाल कीट रूपान्तर के समय तक डेढ़ इञ्च लम्बे हो जाते हैं। ये हरे रंग के होते हैं। इनके दोनों छोर बीच के भाग से कुछ पतले होते हैं। पत्तों पर ही कोष बनाकर ये रूप बदलते हैं।

इनके नाश के लिए तम्बाकू का काढ़ा या मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख पत्तों पर छिड़कनी चाहिए।

(२) Indigo caterpillar :—इस कीट की मादा पत्तों पर लगभग २५० अण्डे देती है जो बालों से ढके रहते हैं। अण्डे देने के दो तीन दिन बाद बाल कीट निकल कर सुबह शाम पत्ते खाते हैं और दोपहर को छुपे रहते हैं। पन्द्रह दिन के बाद रूपान्तर के लिए मिट्टी में कोष बनाते हैं। जिनमें से काले धब्बे वाले तरुण कीट निकलते हैं। अण्डे और बाल कीट को चुनवाकर गड़वा देने से इनसे फ़सल बचायी जा सकती है।

(३) Tobacco caterpillar—पृष्ठ ८९

उपरोक्त तीनों कीट रात्रि में उड़ते हैं इसलिए रोशनी पर आकर्षित करके भी मारे जा सकते हैं।

(४) गोभी की तितली (Cabbage buttrfly) :—इसका बाल कीट फूल और बँधा गोभी के पत्ते खाता है। तरुण तितली सफ़ेद पर वाली होती है जिन पर दो दो धब्बे होते हैं। यह दिन में उड़ती रहती है और पत्तों पर अण्डे दे देती है। बाल कीट हरे रंग के काले सिर वाले होते हैं। ये दो सप्ताह के बाद कोष बनाकर एक सप्ताह में तितली के रूप में निकल आते हैं।

पत्तों पर तम्बाकू का काढ़ा छिड़कते रहने तथा बाल कीट को चुनवाते रहने से बहुत कुछ बचाव हो सकता है।

(५) काली इल्ली (Mustard sawfly) :—इसके बाल

कीट सरसों, गोभी, मूली आदि के पत्तों को हानि पहुँचाते हैं। यह मक्खी काले और पीले रंग की होती है। पर काले रंग के होते हैं। यह दिन में इधर उधर खेतों में उड़ती रहती है। मादा पत्तों को चीरकर उनमें अण्डे देती है। अण्डों से एक सप्ताह में बाल कीट निकल कर सुबह शाम पत्ते खाते हैं। दोपहर के समय ये मिट्टी में छुप जाते हैं। पन्द्रह बीस दिन बाद मिट्टी के कोष में इनका रूपान्तर होता है। दस बारह दिन में कोष से मक्खी निकल आती है।

चूने की बुकनी या मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छिड़कते रहने से बहुत कुछ बचाव हो सकता है। पौधों के नीचे की मिट्टी में खोजने से बाल कीट भी मिल जाते हैं जिन्हें मरवा डालना चाहिए।

(६) Greasy surface caterpillar (पृष्ठ ८८)

(७) Aphis (पृष्ठ ८६)

(८) Large Brown cricket भूरा टिड्डा :—यह पत्ते और डंडी को काट देता है और ज़मीन में छेद करके रहता है। ये कीट रात्रि में बाहर निकलते हैं और दिन में मिट्टी में छेद करके छिपे रहते हैं। पानी में थोड़ा सा मिट्टी का तेल मिला कर यदि वह पानी इनके छेद में डाला जाय तो वे तुरन्त बाहर निकल आते हैं और पकड़े जा सकते हैं। अन्य वनस्पति के हरे पौधों को विष के घोल में भिगो कर खेतों में रखने से ये कीट उन्हें खाकर मर जाते हैं।

(९) Surface grass-hoppers—मिट्टी के रंग के छोटे छोटे टिड्डे भी गोभियाँ और अन्य तरकारियों को हानि पहुँचाते हैं। ऐसे कीट कपड़े की जाली में पकड़ कर मारे जा सकते हैं।

फलीदार पौधों को हानि पहुँचाने वाले कीट :—

(१) Greasy surface caterpillar पृष्ठ ८८
(२) Indigo caterpillar पृष्ठ ९४
(३) Tobacco caterpillar पृष्ठ ८९
(४) Bihar hairy caterpillar पृष्ठ ९१
(५) Gram caterpillar
(६) Cram semi-looper

इनमें से पहले चार का वर्णन पहले हो चुका है। पाँचवे और छठे कीट भी तितली की जाति के हैं। इनके बाल कीट चने को विशेष हानि पहुँचाते हैं। इनसे मटर और टमाटर को भी कुछ हानि पहुँचती है।

पाँचवाँ कीट चने के फलों में छेद करके अन्दर का दाना खा जाता है। मादा पत्ते, फूल और फलों पर एक एक करके अण्डे देती है जिनमें से तीन चार दिन में बाल कीट निकल कर पहले पत्ते खाते हैं और फिर फलों पर धावा करते हैं। रूपान्तर के समय तक बाल कीट डेढ़ इञ्च लम्बे हो जाते हैं। हाथ से चुनने के सिवाय इनके नाश की दूसरी कोई युक्ति नहीं है।

छठवें कीट की मादा ४०० से ५०० अण्डे पत्तों पर देती जिनसे बालकीट निकल कर एक महीने तक पत्ते खाते हैं और

पत्तों का कोष बनाकर रूपान्तर करते हैं। बाल कीट हरे रंग के करीब डेढ़ इंच लम्बे होते हैं जिन पर सफेद लम्बी धारियाँ होती हैं।

मिट्टी के तेल में रस्से भिगोकर सुबह शाम तीन चार दिन तक फसल पर फिराने से कीट भाग जाते हैं।

फल वाली तरकारियों को हानि पहुँचाने वाले कीटः—

बैंगन के कीटः—

(१) आलू के पत्ते खाने वाला जैसा २८ धब्बे वाला (पृष्ठ ८९) कीट होता है वैसा ही यह बारह धब्बे वाला होता है। जीवन प्रणाली दोनों की समान है।

(२) Stem borer धड़ छेदने वाला कीट।

(३) Shoot and Fruit borer कोपल और फल छेदने वाला कीट।

ये दोनों तितली की जाति के हैं। पहले के आक्रमण से पेड़ मुर्झा जाते हैं। डण्डी में ही रूपान्तर करता है। दूसरा कीट कोंपलों को छेद कर उन्हें मुर्झा देता है और फल आने पर उनमें छेद कर उन्हें बिगाड़ देता है। फलों पर काले काले गहरे निशान दिखलाई दें तो समझना चाहिए कि यह इस कीट का ही कार्य्य है। बाल कीट लगभग दो सप्ताह तक फलों में रहकर बाहर निकल आता है और पौधे या जमीन पर कोष बनाकर रूपान्तर करता है।

सूखे पौधे, मुर्झायी हुई कोंपलें और कीट वाले फलों को जला देना चाहिए। इधर उधर फेंक देने से तरुण कीट निकल कर फिर अण्डे दे देते हैं।

कद्दू, तरोई, खेरा, फूट आदि के कीट-:—

इनके पत्ते खाने वाले २८ और १२ धब्बे वाले एपिलेकना (Epilachna पृष्ठ ८९) हैं। इसी जाति के लाल और काले रंग के दो और कीट होते हैं जिनके तरुण कीट क़रीब पाँच इंच लम्बे होते हैं। पौधों पर चूने की बुकनी और राख छिड़कते रहने से कुछ बचाव हो जाता है। बुझाये हुए चूने का चूर्ण और तम्बाकू का चूर्ण बराबर भाग में मिलाकर छिड़कने से भी लाभ होता है।

फलों को खाने वाले गोबरीले कीट की जाति के कुछ कीट होते हैं जो दूसरी फसलों के फूल भी खाते हैं। इनमें एक काली और पीली धारी वाला दूसरा भूरा और तीसरा हरा होता है। इनको छूने से इनके पाँव के जोड़ में से एक तरह का पीला तेल जैसा रस निकलता है जिसके बदन पर लग जाने से फोड़ा उठ आता है। इन्हें कहीं कहीं तेली कहते हैं।

फलों की मक्खी :—(पृष्ठ ८७) एक प्रकार की मक्खी भी फलों को बिगाड़ देती है।

कीट नाशक उपचार और औषधियाँ :—

कपड़े की थैली :—यह दो प्रकार की होती हैं, एक छोटी और दूसरी बड़ी। छोटी थैली उड़ने वाले कीटों के लिए अच्छी होती

है बड़ी से फुदकने वाले टिड्डे पकड़े जाते हैं। दोनों को कृषक स्वयम् बना सकते हैं।

छोटी थैली :—एक मोटे लोहे के तार का एक कुण्डल ऐसा बनाना चाहिए जिसका व्यास क़रीब नौ इञ्च से बारह इञ्च का हो। इस कुण्डल में जालीदार कपड़े की या पतले मलमल की थैली बनाकर सी देनी चाहिए। इसी में एक पतली लकड़ी की डण्डी करीब एक हाथ लम्बी लगा देनी चाहिए। उड़ती हुई तितली, भ्रमर आदि को पकड़ने के लिए झटके से हाथ ऐसा मारना चाहिए कि जाली हवा के झोंके से फूल जाय और मुँह की ओर से कीट उसमें फँस जाय। कीट के पकड़े जाने पर झट से हाथ मोड़ देना चाहिए कि जिसमें वह फिर बाहर न निकलने पाये।

बड़ी थैली :—इसके लिए बाँस का एक चौखटा ऐसा बनवाना चाहिए कि जिसका आकार चार फ़ीट लम्बा और दो फीट चौड़ा हो। लम्बाई वाले बाँसों में से एक बाँस इतना लम्बा होना चाहिए कि जिसके चौखटे के दोनों ओर एक एक फुट बाँस निकला रहे। फिर कपड़े की एक ऐसी थैली बनवानी चाहिए जिसका मुँह चौखटे के बराबर हो और वह चार पाँच फीट गहरी हो। इस जाल को चौखटे के साथ सी देना चाहिए। जिन खेतों में कीट पकड़ना हो उन खेतों पर इस जाल को ले जाकर दो मज़दूरों के हाथ में बड़े बाँस के दोनों सिरे पकड़वा कर उन्हें दौड़ाना चाहिए। हवा के वेग से थैली फूल जाती है और हल-

चल की वजह से कीट फुदक कर थैली में गिर जाते हैं। फिर एक ओर लेजाकर उन्हें मार डालना चाहिए।

औषधि छिड़कने का यंत्र :—इस यंत्र द्वारा महीन फुहार के रूप में औषधियों का घोल पौधों पर छिड़का जाता है। यह कार्य्य महीन छिद्र वाली पिचकारी से भी लिया जा सकता है।

मुख्य औषधियाँ :—

लेड क्रोमेट (Lead Chromate) :—यह एक आन्तरिक विष है जो पत्ते खाने वाले कीट का नाश करने के लिए अति उत्तम है। इसे छिड़का जाय तो यह पत्तों पर चिपक जाता है और जो कीट उन पत्तों को खाते हैं वे मर जाते हैं। एक मन पानी में एक छटाँक दवाई का घोल बनाना चाहिए। छिड़कने के लिए यंत्र या पिचकारी का उपयोग करना चाहिए।

क्रूड आयल इमलशन (Crude oil emulsion) :—रस चूसने वाले कीट के लिए यह उत्तम स्पर्शक विष है। यह मिट्टी के तेल और साबुन के मिश्रण का बना हुआ होता है। एक मन पानी में तीन पाव से एक सेर तक दवाई घोलना चाहिए। यह भी यंत्र या पिचकारी द्वारा महीन फुहार में कीटों पर छिड़का जा सकता है। दो छिड़काव से सब कीट मर जाते हैं।

तम्बाकू का काढ़ा :—एक सेर तम्बाकू दस सेर पानी में २४ घंटे तक भिगाकर रखना चाहिए या आधे घंटे तक उसे पानी में उबाल लेना चाहिए। फिर छानकर उस पानी में पाव भर साबुन

घोलकर अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। छिड़कते समय इस काढ़े में सात भाग जल और मिलाना चाहिए।

पायरेथ्रम चूर्ण (Pyrethrum Powder) :--बहुत से छोटे छोटे कीट के लिए पायरेथ्रम के फूल का चूर्ण भी अच्छा काम देता है। फूल पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में होते हैं।

Carbon-bi-sulphide :—इस विष का उपयोग बीज को कीट रहित करने के लिए किया जाता है। एक बर्तन में बीज रख कर उन पर यह औषधि डाल करके बर्तन को ऐसा बन्द करना चाहिए कि जिसमें हवा का आवागमन न हो। दो मन बीज के लिए एक छटाँक औषधि डालनी चाहिए। गोदामों को कीट रहित बनाने के लिए प्रति एक हजार घनफुट जगह के लिए दो सेर औषधि काम में लानी चाहिए। ध्यान रहे कि जब इस औषधि का प्रयोग किया जाय तो रोशनी या किसी प्रकार की आग पास में न हो क्योंकि यह बहुत जल्दी आग पकड़ लेती है। अधिक सावधानी के लिए ऐसा करना चाहिए कि औषधि देने के २४ घंटे पश्चात ढक्कन को थोड़ी देर के लिए खोल देना चाहिए ताकि फालतू गैस निकल जाय और आग पकड़ने का भय न रहे।

राल-तेल मिश्रण—ढाई भाग राल को एक भाग तीसी (अलसी) के तेल के साथ मिला कर उबलते हुए पानी में गरम करके इस मिश्रण को तख्तों पर लगाकर यदि तख्ते नर्सरी में गाड़ दिये जायँ तो जो छोटे छोटे कीट (Flea beetles) पौधों को हानि पहुँचाते हैं, वे इस चिपकने वाले पदार्थ पर चिपक कर मर

जाते हैं। राल के आग पकड़ने का भय रहता है इसलिए हमेशा उबलते हुए पानी में गरम करना चाहिए।

ज़मीन में रहने वाले कीट जो नये नये पौधों को काट देते हैं उनके लिए चौकड़-संखिया मिश्रण की गोलियाँ अच्छी होती हैं। एक सेर गेहूँ के आटे का चौकड़ लेकर उसमें क़रीब एक छटाँक संखिया मिला दिया जाय। बाद में थोड़ा सा चोआ या गुड़ मिला कर एक नीबू का रस डाल करके पानी से ऐसा गीला कर लेना चाहिए जिसमें गोलियाँ बन जायँ। गोलियों को कीड़े वाली ज़मीन पर रख दी जाय तो वे उन्हें खाकर मर जाते हैं।

कोठी या बँगलों के बागीचों की छोटी-छोटी क्यारियों में ऐसे कीट हानि पहुँचाते हुए नज़र आयें तो क्यारियों में थोड़ा सा चूना छिड़क कर उसे मिट्टी के साथ मिला देना चाहिए।

सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा होने वाली व्याधियाँ :--

ये व्याधियाँ कई प्रकार की होती हैं जिन्हें पहचानने के लिए यंत्रों की सहायता लेनी पड़ती है। जहाँ कहीं पौधों के पत्तों पर धब्बे दिखलायी दें या पौधे मुर्झाकर सूखने लगें या सड़ने लगें तो ऐसे पौधों को कृषि विभाग की प्रयोगशाला में भेजकर जाँच करवा लेनी चाहिए और वहाँ के विशारदों की सम्मति अनुसार व्याधि से बचाने के उपचार करने चाहिएँ।

कुछ साधारण व्याधियों का वर्णन तथा उनसे बचाने के उपचार यहाँ पर दिए जाते हैं।

कन्द वाली फसलों में आलू, अर्वी और अदरक को ऐसी व्याधियों से हानि विशेष पहुँचती है।

आलू में दो प्रकार की फंगस की बीमारी होती है। पहली पत्ते और पौधों को सुखा देती है जिससे आलू ठीक से नहीं बन पाते। दूसरी आलू और उनके पौधों की जड़ों को हानि पहुँचाती है। पहली व्याधि जब दिखलायी पड़े तो पत्तों पर बोर्डो मिक्सचर छिड़कने से लाभ होता है। दूसरी के लिए बोते समय आलू को फार्मेलिन में डुबोकर बोना चाहिए। आलू में बेक्टिरिया (एक किस्म के सूक्ष्म जन्तु) द्वारा भी एक व्याधि होती है जो पौधे और आलू दोनों को हानि पहुँचाती है। इस व्याधि वाले आलू यदि काटे जायँ तो उनमें भूरे रंग का चक्कर (ring disease) दिखलायी देता है। इससे बचाने के लिए बोते समय आलू को काटकर देख लेना चाहिए और अच्छे आलू ही बोना चाहिए। यह व्याधि बैंगन और टमाटर में भी पायी जाती है।

अर्वी के पत्तों को एक जाति की फंगस से हानि पहुँचती है। पत्तों पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्ते बिगड़ जाते हैं। व्याधि अधिक न फैलने पावे इसलिए व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

अदरक में भी एक तरह की फंगस लग जाती है जिससे पौधे सूख जाते हैं और अदरक सड़ जाता है। अधिक तरी से यह व्याधि होती है इसलिए जब यह व्याधि दिखलायी दे तो पानी

कुछ कम देना चाहिए। बीमारी वाले पौधों को उखाड़ कर जला ही देना चाहिए।

पत्ते वाली तरकारियों में सरसों और गोभियों को एक प्रकार की फंगस से हानि पहुँचती है। पत्ते और डंडियों पर काले काले धब्बे पड़ जाते हैं।

फल वाली तरकारियों में बैंगन, टमाटर और मिर्च को एक बेक्टिरिया वाली व्याधि होती है जिसका वर्णन ऊपर आलू की व्याधि में किया गया है।

टमाटर को एक राइप राट (Ripe-rot) नाम की फंगस से भी हानि पहुँचती है। फलों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं और फल बिगड़ जाते हैं। व्याधिग्रस्त पौधों को जला देना चाहिए जिसमें व्याधि अधिक फैलने न पाये।

फंगस की व्याधियाँ तरी के अधिक होने से जल्दी फैलती हैं। नर्सरी में बहुत से पौधे इसी से मर जाते हैं इसलिए यदि पौधे मरते दिखें तो पानी कम देना चाहिए।

औषधियाँ :—

बोर्डो मिक्सचर :—एक बड़े मिट्टी के बर्तन में बीस सेर पानी भरकर उसमें आधा सेर तूतिया (Copper Sulphate) एक मोटे कपड़े में बाँध कर छोड़ देना चाहिए जिसमें वह अच्छी तरह से घुल जाय। फिर एक दूसरे बर्तन में क़रीब पाँच छटाँक अच्छा चूना लेकर उसे धीरे धीरे पानी में बुझाना चाहिए जिसमें अच्छा गाढ़ा घोल हो जाय। इस घोल में पानी डालकर तूतिये के जल के

बराबर कर लेना चाहिए। जब यह ठण्डा हो जाय तो दोनों को एक बर्तन में डाल कर अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। इस मिश्रण की जाँच के लिए उसमें चाकू या लोहे का छुरा डालकर देखना चाहिए। यदि उस पर ताँबे जैसा रंग जम जाय तो थोड़ा थोड़ा चूना मिलाते रहना चाहिए। जब ताँबे का जमना बन्द हो जाय तो समझना चाहिए कि वह अब उपयोग के योग्य हो गया।

चूना-गंधक घोल :—बुझा हुआ चूना एक छटाँक और एक छटाँक गंधक का पानी से गाढ़ा घोल बनाकर उसे ढाई सेर पानी में डाल दो और खूब हिलाओ। यह औषधि भी फंगस की व्याधियों के लिए उत्तम होती है।

फार्मेलिन का मिश्रण :—एक छटाँक फार्मेलिन को ३० सेर पानी में मिलाकर उसमें घण्टे डेढ़ घण्टे तक आलू डुबोना चाहिए।

पारे का नमक (Mercuric Chloride)—एक मन पानी में आधी छटाँक दवाई डालनी चाहिए। शकरकन्द और आलू को इसमें डुबो कर बोना ठीक होता है। इस विष से बीज भी जन्तु रहित किये जा सकते हैं। इसका घोल धातु के बर्तन में नहीं बनाना चाहिए क्योंकि धातु को खा जाता है। लकड़ी या मिट्टी के बर्तन में बनाना चाहिए।

यह विष बड़ा ज़हरीला होता है इसलिए इसे छूने के बाद हाथ खूब अच्छी तरह से धोना चाहिए।

पाला :—

सर्दी के दिनों में कभी कभी रात को वातावरण का तापमान

बहुत घट जाता है और पाला गिरने लगता है जिससे कई तरका-रियाँ मर जाती हैं और उनके फल बेस्वाद हो जाते हैं ।

पाले का अनुमान दिन के वातावरण से किया जा सकता है। जब सर्दी के दिनों में बहुत जोर की ठण्डी हवा चले तब समझना चाहिए कि पाले की सम्भावना है। ऐसी सूरत में निम्न लिखित उपचार की ओर ध्यान देना चाहिए।

जब पौधे नर्सरी में हों अथवा बहुमूल्य तरकारियाँ क्यारियों में हों तो उन पर बड़े २ पत्ते, चटाइयाँ अथवा फूस की टट्टियों से छाया कर देनी चाहिए। बड़े-बड़े खेतों में जहाँ ऐसा करना असम्भव है वहाँ पर खेतों को दिन में सींच देना चाहिए। पानी में यह गुण होता है कि वह एक बार गरम होने से जल्दी ठण्डा नहीं होता और जब रात को वातावरण का ताप परिमाण पाला जमने जितना गिरता है उस वक्त सींचे हुए खेतों में उतना नहीं गिरता और फसल पाले से बच जाती है।

इसके सिवाय रात को यदि खेतों में धूआँ कर दिया जाय तो उससे भी कुछ बचत हो जाती है। धूआँ जब खेतों पर मंडराता रहता है तो पाला नहीं जमने पाता। कुछ पत्ते या घास जगह-जगह इकट्ठा करके उस पर थोड़ा सा पानी छींट देना चाहिए और बाद में आग लगा देनी चाहिए। पाले की मार बहुधा रात्रि के तीसरे-चौथे प्रहर में होती है उस वक्त तक धूआँ हो जाय इसलिए आग मध्य रात्रि या उससे कुछ समय पहले लगानी चाहिए।

प्रकरण ६

तरकारियों का विक्रय

तरकारी की खेती वालों को इस विषय का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए। तरकारी पैदा करने वाला चाहे जितनी अच्छी तरकारी भले ही पैदा कर ले परन्तु यदि विक्रय की रीति में निपुण न हुआ तो उसे अपने परिश्रम का यथार्थ पुरस्कार नहीं मिल सकता। इस कार्य में बहुत चतुराई की आवश्यकता है।

अनाज की खेती वाला मनुष्य कभी भी और कहीं भी जहाँ अधिक से अधिक मूल्य प्राप्त किया जा सके अनाज बेच सकता है परन्तु तरकारियाँ तो तैयार होने पर निकट के बाजार में ही बेचनी पड़ती हैं। अनाज सब एक साथ तैयार हो जाता है और एक ही साथ बेच भी दिया जा सकता है परन्तु तरकारियाँ तो ज्यों ज्यों तैयार होती हैं बेचनी ही पड़ती हैं इसलिए उन्हें इस रीति से बेचना चाहिए कि जिसमें अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

तरकारियाँ चार प्रकार से बेची जा सकती हैं :—

(१) खेतों में खड़ी फ़सल का बेचना।

(२) अपनी ओर से बाजार में पहुँचाना और वहाँ पर किसी थोकबन्द व्यापारी के हाथ बेचना।

(३) स्वयम् अपनी दूकान खोलकर अपने आदमी द्वारा बिकवाना।

(४) सहकारी मण्डल जिसके सदस्य स्वयम् भी हों उसके द्वारा बिकवाना।

प्रथम रीति अनुसार यदि फ़सल खेत में ही बेची जा सके तो अच्छा ही है। इस प्रकार से बेचने में आय तो अवश्य कुछ कम होती है परन्तु तरकारियों के छाँटने (Grading) और उन्हें बाज़ार तक भेजने के झंझट से छूट जाते हैं।

दूसरी रीति यदि बेचने के लिए काम में लायी जाय तो यह ध्यान रखना चाहिए कि तरकारियाँ अच्छी और ताज़ी हालत में बाज़ार तक पहुँचायी जायँ। रास्ते में फूटने टूटने या एक दूसरी से घिस कर बिगड़ने न पावें।

तीसरी रीति से बेचने में कुछ विशेष परिश्रम करना पड़ता है। इसमें तरकारियों की श्रेणियाँ बनाकर बेचना चाहिए। उत्तम श्रेणी में सुन्दर आकार और अच्छे रंग वाली होनी चाहिए। मध्यम में उससे हलकी और कनिष्ठ में सब प्रकार बचा हुआ माल रक्खा जा सकता है। बाज़ार में कई प्रकार के ग्राहक आते हैं—बहुत से लक्ष्मीवान् भाव का विचार न करके ताज़ी और सुन्दर दिखने वाली तरकारियाँ ही पसन्द करते हैं। उनके मन आकर्षित करने के लिए सुन्दर स्वच्छ तरकारियों को सजाकर रखना चाहिए। मध्यम श्रेणी वाले मनुष्य सिर्फ़ ताज़ी का ही विचार रखते हैं। उनका काम मध्यम श्रेणी की तरकारियों से

चल जाता है ग़रीबों को तीसरी श्रेणी से ही सन्तुष्ट होना पड़ता है। दूकान पर जो व्यक्ति तरकारी बेचने के लिए बिठाया जाय वह बड़ा भरोसे वाला, मधुर भाषी और चतुर होना चाहिए। अच्छा व्यापारी अपने भाषण से ही ग्राहकों को आकर्षित कर लेता है और कुछ न कुछ माल उनके हाथ बेच ही लेता है। जो तरकारियाँ सजा कर रक्खी जायँ उन पर धूल वग़ैरह न जमने पाये इसलिए उन्हें झाड़ते रहना चाहिए। जिन तरकारियों पर पानी छिड़कने की आवश्यकता हो उन पर पानी छिड़कते रहना चाहिए, नहीं तो वे मुर्झाने लग जाती हैं।

बहुत से लोग तरकारियों को खरीदते समय उन्हें मोड़ते हैं, दबाते हैं और लौकी और खीरा जैसी तरकारी में तो नाखून भी गाड़ देते हैं। ऐसी क्रियाएँ तरकारियों के लिए ही नहीं मनुष्यों के स्वास्थ्य के लिए भी अहितकारी होती हैं सो बेचने वाले को ध्यान रखना चाहिए कि खरीदने वाले ऐसा न करें।

चौथी रीति से बेचने में यह लाभ होता है कि बाज़ार का भाव सहकारी मण्डल के हाथ रहता है। यकायक चढ़ने या गिरने नहीं पाता। तरकारी पैदा करने वाले को किसी प्रकार बेचने की चिन्ता नहीं रहती। उसे सिर्फ़ इतना ध्यान रखना पड़ता है कि कौन से बाज़ार में किस प्रकार की तरकारी की माँग है। उसी माँग के अनुसार वह पैदा करता है। जब माल मंडल के पास पहुँच जाता है तो वहाँ यथेष्ट मूल्य पर बिक जाता है।

हर एक व्यवसाय में सच्चे व्यवहार की बड़ी आवश्यकता है। जो व्यक्ति उचित मूल्य पर अच्छा माल बेचता है उसकी प्रतिष्ठा जम जाती है इसलिए तरकारी के व्यवसायियों को भी अपनी प्रतिष्ठा जमा लेनी चाहिए।

तरकारियाँ बाज़ार तक पहुँचाने के लिए यदि बाज़ार निकट हुआ तो मज़दूर या बैलगाड़ी से पहुँचायी जा सकती हैं। दूर भेजने के लिए नौका या रेलगाड़ी का आसरा लेना पड़ता है। टोकरियाँ, बोरे या लकड़ी के सन्दूक जिस किसी में तरकारियाँ रक्खी जायँ इस रीति से रखनी चाहिए कि उनमें हवा लगती रहे और वे एक दूसरी से रगड़ खाकर बिगड़ें नहीं। रेल में गोभी जैसी कोमल तरकारियों को हवादार ठंडे डिब्बों में भेजना चाहिए। जिन डिब्बों में हवा का आवागमन न हो ऐसे डिब्बों में बन्द कर देने से ढेर की ढेर तरकारियाँ बिगड़ जाती हैं स्वास्थ्यरक्षक विभागवाले उन्हें बाज़ारों में न बिकने दे कर नष्ट कर देते हैं। कलकत्ते आदि शहरों में ऐसे दृश्य कितने ही बार देखने में आते हैं।

जब तरकारियाँ बाहर भेजनी हों तो बड़ी सावधानी से भेजनी चाहिएँ। टमाटर, खरबूज़े आदि को छोटी टोकरियों में या लकड़ी के हवादार सन्दूकों में, गोभियाँ टोकरियों में, आलू, शकरकन्द आदि बोरों में, कद्दू वगैरह वैसे ही थोड़े से खर पतवार में रखकर गाड़ियों में भेजना चाहिए। तरकारियों को बन्द करते समय धो धुला कर साफ कर देनी चाहिए कि

जिससे वे चमकती रहें और गंदी न दिखें। बाजारों में आलू, शकरकंद आदि के बोरों को गाड़ियों से उतारते समय मज़ूर अनाज के बोरों की भाँति पटक देते हैं। ऐसा करने से उनके छिलके निकल जाते हैं। वे दिखने में ही सिर्फ बुरे नहीं मालूम पड़ते वरन् उनकी अधिक समय तक ठहरने की शक्ति भी नष्ट हो जाती है। बहुत से लोग बोरों पर बैठ कर इनसे आसन और कुर्सियों का काम लेते हैं। उन्हीं पर बैठकर निरर्थक बातें किया करते हैं। बार बार उन बोरों पर बैठने-उठने और चढ़ने-उतरने से भी तरकारियों को हानि पहुँचती है इसका भी ध्यान रखना चाहिए।

तरकारियों को सम्हाल कर रखने की विधि :—

तरकारियाँ यदि जल्दी न बिकें या अन्य किसी कारण से कुछ समय तक रखनी पड़ें तो उनको इस रीति से रखना चाहिए कि वे बिगड़ने न पावें। बहुत-सी तरकारियाँ विशेषतः कंद वाली ऐसी होती हैं कि उन्हें एक ही समय पर खोद कर रखना पड़ता है। ऐसी तरकारियाँ यदि उठा लेने के पश्चात् कुछ समय तक रख ली जायँ और अच्छा भाव आने पर बेची जायँ तो अधिक लाभ होता है।

निम्न लिखित बातों की ओर ध्यान रखने से कुछ समय तक तरकारियाँ अच्छी तरह से रह सकती हैं।

(१) वे ऐसी होनी चाहिएँ कि पूर्ण पकने पर या कुछ समय पहले उठायी गयी हों।

(२) उनमें किसी प्रकार व्याधि के जन्तु न हों।

(३) उनमें कीटादि शत्रु या अन्य किसी तरह से हानि पहुँची हुई न हो।

(४) स्वच्छ हवा और प्रमाणित तरी तथा उचित ताप परिमाण में उन्हें रखनी चाहिए। तरी और ताप परिमाण तरकारी की जाति पर निर्भर है इसलिए कोई एक नियम नहीं बनाया जा सकता। चुकन्दर, गाजर, शलजम इत्यादि ठंडे और तरी वाले वातावरण में अच्छे रहते हैं। गोभी, प्याज़ वगैरह के लिए ठण्डा और सूखा वातावरण चाहिए। शकरकंद, कद्दू आदि सूखे और गरम वातावरण में अच्छे रहते हैं। ताप परिमाण और तरी प्रत्येक तरकारी के लिये पृथक २ होती है। इच्छा अनुसार तरी और ताप परिमाण रखने के लिए बरफ से ठण्डे रक्खे जाने वाले गोदाम होते हैं। परन्तु इनमें रखने में व्यय बहुत पड़ता है। सर्वसाधारण इनका उपयोग नहीं कर सकते। रईसों के यहाँ इनका प्रबन्ध हो सकता है।

तरकारियों में हवा का हेरफेर होता रहे इसलिए ज़मीन पर न रखकर हवादार मकानों में मचानों पर फैलाकर रखनी चाहिए। ऐसे मकानों में चूहे और कीट से बचाने का ध्यान चाहिए। मचानों के खम्भों पर टीन के टुकड़े काट कर इस तरह से लगा देना चाहिए कि उनका ढाल नीचे की ओर हो और वे खुले हुए छातानुमा दिखलायी दें। ऐसा करने से

चूहे इनपर नहीं चढ़ सकेंगे। चूहों से बचाने के लिए मचानों के आसपास तार की जाली भी लगा दी जा सकती है।

मचान के अभाव में हवा के आवागमन के लिए निम्न-लिखित युक्ति काम में लायी जा सकती है

ज़मीन में क़रीब ६ इञ्च गहरी और एक फुट चौड़ी दो नालियाँ एक दूसरी को काटती हुई बनाकर उनपर लकड़ी और घास रख कर उस पर तरकारियाँ रखनी चाहिए। ऐसा करने से भी कुछ समय तक तरकारियाँ अच्छी तरह से रह जाती हैं। बंधा गोभी को कुछ समय तक रखना हो तो सिर नीचे और धड़ ऊपर करके रखना चाहिए।

तरकारियों को सुखाकर रखना* :—

जहाँ हरी तरकारियाँ साधारण मूल्य पर बराबर मिलती रहती हैं वहाँ सूखी तरकारियों की आवश्यकता नहीं होती परन्तु कई स्थानों में मोसम में तो हरी तरकारियाँ बहुत ही सस्ती बिक जाती हैं पर ग़ैर मोसम में मिलती ह नहीं, ऐसे स्थानों पर तर-कारियाँ सुखाकर रख ली जाँय तो अच्छा काम देती हैं। व्यव-साय की दृष्टि से भी तरकारियाँ सुखाना कई तरह से लाभप्रद है।

(१) मोसम में सस्ती तरकारियाँ खरादकर सुखा ली जाँय तो मँहगाई के वक्त अथवा उनके अभाव में बहुत सस्तो पड़ती हैं।

---

* श्रीमती व्यास के प्रयोगों के आधार पर।

(२) सूखी तरकारियाँ हरी की अपेक्षा बहुत कम जगह घेरती हैं। वजन में तरकारी की जाति अनुसार १५ से २५ शतांश तक रह जाती है। बाहर भेजने के लिए जहाँ हरी तरकारियों के लिए ठण्डे रहने वाले डिब्बे तथा एक्सप्रेस गाड़ियों की जरूरत होती है वहाँ सूखी तरकारियाँ माल के डिब्बों में मालगाड़ी से भेजी जा सकती हैं। इन सब कारणों से बहुत कम व्यय में उनका स्थानान्तर हो जाता है।

(३) लड़ाई के मैदानों में फौज के उपयोग के लिए सूखी तरकारियों की माँग बहुत होती है। द्वितीय विश्व-व्यापी युद्ध में सुखायी हुई तरकारियाँ भेजने के लिए हमारे देश में तरकारियाँ सुखाने के छोटे बड़े कई कारखाने खुले। ऐसे कारखानों में विशेषत: आलू सुखाये जाते थे परन्तु दूसरी भी कई तरकारियाँ हैं जो स्वास्थ्य के विचार से आलू की अपेक्षा अधिक गुणकारी हैं और आसानी से सुखायी जा सकती हैं। यदि उचित रीति से प्रचार किया जाय तो दूसरी सुखायी हुई तरकारियों की माँग भी बढ़ सकती है।

हमारे देश में धूप इतनी अधिक और तेज होती है कि कई तरकारियाँ आसानी से सुखायी जा सकती हैं और कई घरों में सुखाकर रक्खी भी जाती हैं। साग अर्थात् जिन तरकारियों के पत्ते काम में लाये जाते हैं वे साधारणत: साफ़ करके उनके छोटे छोटे टुकड़े करके धूप में सुखा सकते हैं। मेथी, खसखस, चने की सूखी हुई साग, हरी तरकारी के अभाव में अच्छा काम देती

है। भिन्डी को गोल काट कर आसानी से सुखा सकते हैं। ग्वार की समूची फली और चँवली तथा मटर के हरे दाने भी सुखा कर रख सकते हैं। मटर के दाने, थोड़ा सा नमक और सोडा (पाँच सेर पानी में एक दो तोला) पानी में डालकर उस पानी में चार पाँच मिनट के लिए उबाल कर सुखाकर के रक्खे जायँ तो उनका हरा रंग भी बना रहता है और स्वाद भी उत्तम हो जाता है। अच्छी युक्ति यह होगी कि मलमल के कपड़े में मटर के दाने बाँधकर उसे उबलते हुए पानी में चार पाँच मिनट के लिए छोड़ दिया जाय और बाद में निकालकर दाने सुखा लिए जायँ। चुकन्दर, आलू इत्यादि को पतले पतले काट कर थोड़ी देर पानी में उबालकर सुखाना चाहिए। गोभी के फूल के छोटे छोटे टुकड़ों के हार बना कर चार पाँच मिनट के लिए नमक और सोडे के पानी में उबाल कर सुखाये जायँ तो वे भी अच्छा काम देते हैं। उनमें थोड़ा-सा स्वाद परिवर्तन अवश्य हो जाता है, परन्तु फिर भी तरकारी अच्छी बन जाती है।

नमक और सोडा के पानी में उबालने का यह अभिप्राय होता है कि उबालने से तरकारियों के ऊपर के कोष जो कठोर होते हैं वे मुलायम हो जाते हैं या टूट जाते हैं और अन्दर के कोषों तक धूप की गर्मी जल्दी पहुँच जाती है और तरकारियाँ जल्दी सूख जाती हैं। नमक से उनके टिकने की शक्ति बढ़ जाती है और सोडे से उनके रंग में विशेष परिवर्तन नहीं होता।

तरकारियों को जल्दी सुखाने के लिए धूप के सिवाय कुछ

कृत्रिम उपचार भी किये जाते हैं। आलमारी* जैसे कुछ चौखटे धातु के बनाये जाते हैं जिनमें तरकारियाँ रखकर नीचे हलकी-सी आँच पहुँचायी जाती है। ऐसा करने से तरकारियाँ जल्दी सूख जाती हैं और उनका रंग भी बना रहता है।

जब बहुत बड़े पैमाने पर काम करना होता है तो उसके लिए आवश्यकतानुसार लम्बे-चौड़े सुखाने के घर बनाये जाते हैं जिनमें कृत्रिम गर्म हवा से तरकारियाँ सुखायी जाती हैं। साधारणत: १० फीट लम्बा-चौड़ा और आठ फीट ऊँचा कमरा ठीक होगा। ऐसे कमरों में लकड़ी के चौखटों (Racks) पर, तरकारी रक्खी हुई चलनियाँ पर्तवार लगा दी जाती हैं। कमरे की हवा कृत्रिम गर्मी से गर्म की जाती है जिससे तरकारियाँ जल्द सूख

---

* अलमारियाँ बनाने में कुछ खर्च विशेष पड़ता है ऐसी सूरत में निम्न लिखित युक्ति अधिक सस्ती और उपयोगी सिद्ध हुई है। मिट्टी के तेल के डिब्बे को काम में लाया जा सकता है। डिब्बे का ऊपर का मुँह खोल दिया जाता है। पेंदी से दो इञ्च की ऊँचाई पर चारों ओर चार चार छेद कर दिये जाते हैं। टीन में एक इञ्च बालू भर दी जाती है और टीन रसोई बन ने के पश्चात् जो आँच रहती है उस पर चढ़ा दिया जाता है। टीन के अ दर उपरोक्त रीति से तैयार की हुई तरकारिय चलनी या जालीदार चौखटे पर रख दी जाती हैं और वे जल्दी सूख जाती हैं। बालू रखने से लाभ यह होता है कि आँच चारों ओर बराबर पहुँचती है। बालू से कुछ ऊपर जो चार चार छेद होते हैं उनके द्वारा बाहर की हवा आकर गर्म हवा को ऊपर ढकेलती है जिससे तरकारियाँ सूख जाती हैं। ऐसी युक्ति खास कर सर्दी के दिनों में होने वाली तरकारियों का सुखाने में बड़े काम की है।

जाती हैं। तैयार चौखटे न हों तो निम्न लिखित युक्ति से भी काम चलाया जा सकता है।

उपर्युक्त नाप वाले कमरे के बीचो बीच तीन चार इञ्च मोटी लकड़ी के चार खम्भे एक दूसरे से एक तरफ तीन फीट की दूरी पर व दूसरी तरफ जिधर चलने फिरने का रास्ता हो उधर चार फीट की दूरी पर, गाड़ने चाहिए। इन्हीं खम्भों की सीध पर चारों दीवालों के पास चार और चारों कोनों में चार खम्भे गाड़ने चाहिए।

इस प्रकार जो खम्भे गाड़े जायँगे उनमें के दो खम्भे दरवाजे की दोनों बाजू पर होंगे। इन खम्भों से सामने की दीवाल वाले खम्भों तक चारों खम्भों पर लम्बे बाँस कीलों से लगवा देने चाहिए। जमीन से दो फीट की ऊँचाई छोड़कर बांस लगाने चाहिए और बाद में छः इञ्च की दूरी पर लगाते जाने चाहिए इस प्रकार से दस ग्यारह बाँस लगाने चाहिए। उसी भांति इन बाँसों के सामने दीवाल वाले खम्भों पर भी बाँस लगाने चाहिए। इस प्रकार लगाने से दरवाजे से सामने की दीवाल तक चार फीट चौड़ा मार्ग चलने फिरने के लिए छूट जायगा। दोनों तरफ के लगे हुए बाँसों पर तरकारी वाली चलनियाँ लगा कर तरकारियाँ सुखायी जा सकेंगी। दरवाजे की दोनों बाजू पर एक एक तह में छः छः चलनियाँ लग सकेंगी और प्रत्येक कमरे में ऐसे ग्यारह तह होंगे सो कुल ६६ चलनियों पर माल सुखाया जा सकेगा।

चलनियाँ :—चलनियों का आकार सुविधानुसार बनाया जा

सकता है परन्तु साधारणतः ३ × ६ फ़ीट का आकार ठीक होगा। चलनियाँ काफ़ी मज़बूत हों इसलिए उनके चौखटे एक इञ्च मोटी लकड़ी के होने चाहिए और चलनियाँ (गेल्वेनाईज़्ड) तार की होनी चाहिए ताकि ज़ंग न लगे।

कमरे की हवा को गर्म करना :--

कमरे की हवा निम्न लिखित युक्ति से गर्म की जा सकती है।

दरवाज़े की बाज़ू पर एक भट्टी बनानी चाहिए जिसमें लकड़ी या पत्थर का कोयला जलाया जा सके। इस भट्टी का दूसरा मुँह एक फुट व्यास के लोहे की चद्दर के बने हुए नल में खुलना चाहिए ताकि भट्टी की आँच और गरम हवा नल में जाती रहे। यह नल क़रीब नौ फ़ीट लम्बा होना चाहिए। ऐसे ही नौ नौ फ़ीट लम्बे तीन टुकड़े और होने चाहिए और तीन टुकड़े कोने वाले ऐसे होने चाहिए जिनसे दो नलों के मुँह मिलाये जा सकें। भट्टी के सामने वाले कोने में पहले व दूसरे नल के मुँह उससे अगले कोने में दूसरे तीसरे के व उससे अगले में तीसरे व चौथे नल के मुंह मिलाये जा सकें। चौथे नल का एक मुंह छत के ऊपर दरवाज़े के पास भट्टी की दूसरी तरफ़ निकाल देना चाहिए ताकि नलवाली हवा कमरे की हवा को गर्म करती हुई बाहर निकल जाय। इन नलों की गर्मी का कुछ हिस्सा फ़र्श की ज़मीन में नहीं चला जाय इसलिए इन्हें फ़र्श से आठ नौ इञ्च ऊपर रखना चाहिए। जगह जगह ईंटें रख कर उनपर नल रखने से ऐसा हो

जायगा। नलों में जब काजल वगैरह जम जाय तो इन्हें खोलकर साफ कर लेने चाहिए। जहाँ से गर्म हवा प्रवेश करती है वह नल बहुत गर्म हो जाता है। उससे ठीक ऊपर दो चार चलनियाँ नहीं रखनी चाहिए वरना सब्जियाँ जल जायँगी।

कमरे की हवा चलती रहे इसलिए छत के नजदीक दीवाल में रोशनदान जैसी खिड़कियाँ होनी चाहिए जो आवश्यकतानुसार खोली जा सकें। कमरे में तरकारियाँ सूखने के लिए रखने के बाद दरवाजा बन्द कर दिया जाता है इसलिए हवा के प्रवेश के लिए फर्श के नजदीक बगल की दीवालों में दो दो खिड़कियाँ रख देनी चाहिए जिनको कम ज्यादा खोलने से हवा का आगमन आवश्यकतानुसार किया जा सके। चूँकि पृथक पृथक तरकारियों के सुखाने के लिये तापमान अलग अलग होता है कमरे में तापमापक यंत्र (Thermometer) भी लगाना चाहिए। ऐसा तापमापक बाहर से पढ़ा जा सके इसके लिए इसे एक छोटी सी काच की खिड़की जो दीवाल में बनायी हुई हो उसमें लगाना चाहिए।

तापमान :—तरकारियों को सुखाने का तापमान उनकी जाति के अनुसार ६० से ८० शतांश (°C) होना चहिए। ८० से ऊपर होने से तरकारियों का रङ्ग बदल जाता है और उनका स्वाद भी नष्ट हो जाता है। कमरे में प्रवेश करती हुई हवा का तापमान ८० तथा बाहर निकलती हुई का ६० शतांश हो तो अच्छा होगा। हवा के आने व निकलने के रास्ते की खिड़कियों को कम ज्यादा खोलकर यह तापमान ज्यादे कम किया जा सकता है।

सुखाने का समय :—तरकारियों की जाति अनुसार व उनकी तैयारी की क्रियानुसार दो ढाई घंटे से लेकर सात आठ घंटे में तरकारियाँ सूख जाती हैं, कोमल पत्ते वाली जल्दी सूख जाती हैं और कंद वाली को बहुत समय लगता है।

सूखी हुई तरकारियों में ८ शतांश* से अधिक पानी नहीं रहना चाहिए। अधिक पानी रहने से वे बिगड़ जाती हैं और अधिक दिनों तक नहीं टिकतीं।

सुखाने के बाद तरकारियाँ बन्द बर्तनों में रखनी चाहिए जिसमें हवा की नमी न पहुँच सके। बर्तनों के मुँह मोम या मिट्टी से बन्द किये जा सकते हैं। जब व्यवसाय के लिए भेजना हो तो टीन में बन्द करके उनके मुँह झलवा देना चाहिए।

चूँकि सुखाई हुई तरकारियों की माँग बढ़ती जा रही है मुख्य मुख्य तरकारियों को सुखाने की रीति का विशेष वर्णन तरकारियों के बयान में दिया गया है।

---

*पानी की मात्रा जानने की युक्ति :—थोड़ी सी सूखी हुई तरकारी यदि वज़न करके २४ घंटे तक १०० शतांश तापमान पर रक्खी जाय और बाद में वज़न किया जाय तो जो वज़न घटेगा वह पानी होगा।

प्रकरण १०

तरकारियों का वर्गीकरण (Classification of Vegetables)

तरकारियों का वर्गीकरण कई तरह से हो सकता है परन्तु साधारण तौर पर चार प्रकार से किया जा सकता है।

(१) आयु अनुसार :—

(क) वार्षिक :—वे तरकारियाँ जिनके जीवन का कर्तव्य एक ही वर्ष में समाप्त हो जाय। ऐसी तरकारियाँ बीज से पैदा होकर नये बीज छोड़कर एक ही साल में अपनी जीवनचर्या समाप्त कर लेती हैं, जैसे मटर, मेथी, ककड़ी आदि।

(ख) द्विवार्षिक :—वे तरकारियाँ जिनमें पहले वर्ष में सिर्फ़ पत्ते और शाखाएँ हों और दूसरे वर्ष में फल और बीज आवें। जैसे प्याज।

(ग) बहुवार्षिक जो एक बार लगायी जाँय और कई वर्षों तक तरकारियाँ देती रहें। जैसे एसपेरेगस, कच्चू, सूरन आदि।

(२) ऋतु अनुसार :—जिस ऋतु में जो तरकारी होती है उसी अनुसार उसका नामकरण हो सकता है। जैसे बरसाती तरकारियाँ, ज़ाड़े की तरकारियाँ।

(३) वनस्पति शास्त्रानुसार :—इस प्रकार के वर्ग-निर्माण से कुछ अंश तक पौधों की प्रकृति का ज्ञान हो जाता है। उन्हें किस प्रकार के खाद से विशेष लाभ होगा इसका भी कुछ अनुमान किया जा सकता है। तरकारियों के वैज्ञानिक नाम तरकारियों के वर्णन में दिए गए हैं और सामूहिक वर्गीकरण परिशिष्ट भाग में दिया गया है।

(४) पौधों के अंगों के उपयोगानुसार :—

तरकारी की खेती वालों के लिए इस प्रकार का वर्ग-निर्माण अच्छा होता है। इससे किन किन फसलों के लिए किस किस प्रकार की जुताई, सिंचाई तथा खाद की आवश्यकता होगी इसका अनुमान आसानी से किया जा सकता है। उदाहरणार्थ जिन तरकारियों की जड़ें और कन्द काम में आते हैं उनके लिए गहरी जुताई और स्फुर तथा पोटाश के खाद की आवश्यकता होगी। गोबर का खाद इनसे पहले वाली फसल को देना ठीक होता है। इनको देने से तरकारियों की कोमलता कुछ कम हो जाती है। इसी भाँति जिनके पत्ते की बाढ़ अधिक बढ़ाना हो उनके लिए नत्रजन का खाद काम में लाना चाहिए। फल और बीज वाली के लिए स्फुर और नत्रजन की आवश्यकता होती है। जिनकी लताएँ काम में आती हों या जिन्हें टट्टियों पर चढ़ाना हो कि जिससे फल अच्छे आवें तो उनके लिए सहारे का प्रबन्ध करने का अनुमान पहले ही किया जा सकता है। इसलिए इस पुस्तक में वर्ग-निर्माण इसी चौथी रीति अनुसार किया गया है।

वर्गानुसार तरकारियों की सूची :—

(१) वे तरकारियाँ जिनकी जड़ें काम में लायी जाती हैं।

(१) गाजर Carrot, (२) मूली Radish, (३) शलजम Turnip, (४) चुकन्दर Beet, (५) पारस्निप Parsnip, (६) साल्सीफ़ायी Salsify, (७) रूटेबागा Rutabaga और (८) स्किरेट् Skirret.

(२) वे तरकारियाँ जिनके धड़ या शाखाएँ काम में लायी जाती हैं।

अधिकांश मनुष्यों को निम्न लिखित तरकारियाँ जड़ें हैं ऐसा मालूम होता है परन्तु यथार्थ में ऐसा नहीं है। वनस्पति शास्त्रानुसार ये रूपान्तरित धड़ या शाखाएँ हैं।

(१) आलू Potatoes, (२) शक्करकन्द Sweet potatoes, (३) अर्वी Arum, (४) गराडू Yams, (५) रतालू Yams, (६) सुथनी Kidney shaped yams, (७) सूरन Elephant's foot, (८) अरारूट Arrow-root, (९) कच्चू Artichoke (Jerusalem), (१०) हल्दी Turmeric, (११) अदरक Ginger, (१२) ऐसपेरेगस Asparagus और (१३) गाँठ गोभी Knol khol.

(३) वे तरकारियाँ जिनके पत्ते और कोमल डंडियाँ काम में लायी जाती हैं।

(१) प्याज़ Onion, (२) लहसुन Garlic, (३) लीक Leek, (४) शैलट Shallot, (५) शाईव Chive, (६)

सीबाल Cibol, (७) पार्सली Parsley, (८) सेलेरी Celery, (९) सलाद Lettuce, (१०) कशनी Chicory, (११) शेरविल Chervil, (१२) क्रेस Cress, (१३) कॉर्न सलाद Corn salad, (१४) एण्डाईव Endive, (१५) कार्डून Cardoon, (१६) रूबर्ब Rhubarb, (१७) चार्ड Chard, (१८) औरेक Orach, (१९) कोलार्ड्स Collards, (२०) डेन्डेलियन Dandelion, (२१) बन्धा गोभी Cabbage, (२२) चीनी गोभी Chinese cabbage, (२३) ब्रुसेल्स स्प्राउट्स Brussels sprouts, (२४) केल Kale, (२५) मेथी Fenugreek, (२६) खिसारी Khesari, (२७) कुसुम Safflower, (२८) सरसों Mustard, (२९) सरसों सफेद Mustard white, (३०) राई Rai, (३१) पालक Spinach, (३२) पालक खट्टा Sorrel, (३३) बथुआ Bathua, (३४) लाल साग Lal sag, (३५) मरसा साग Marsa sag, (३६) चौलाई Chaulai, (३७) राजगिरा, रामदाना Rajgira, (३८) लूणिया, कुलफा साग Purslane, (३९) खसखस Poppy, (४०) पोई Malabar nigt shade, (४१) सौंफ Aniseed, (४२) सौंफ बड़ी Fennel, (४३) धनिया Coriander और (४४) पोदीना Mint.

(४) वे तरकारियाँ जिनके फल की डण्डी या फूल काम में लाये जाते हैं ।

(१) फूल गोभी Cauliflower, (२) ब्रोकोली Broccoli,

(३) ग्लोब आर्टिचोक Globe artichoke और (४) पटुआ Roselle.

(५) वे तरकारियाँ जिनके फलों का उपयोग किया जाता है।

(१) परवल Parwal, (२) टमाटर Tomatoes, (३) बैंगन Brinjal, (४) भिंडी Ladies fingers, (५) मिर्च Chillies, (६) मोगरी Mogri, (७) कद्दू Pumpkin, (८) कद्दू विलायती Marrow, (९) स्क्वेश Squash, (१०) भूरा कद्दू White gourd, (११) लौकी (आल) Bottle gourd, (१२) चिचड़ा Snake gourd, (१३) तरोई Sponge gourd, (१४) घिया तरोई Cylindrical gourd, (१५) करेला Bitter gourd, १६ उच्चे Ucche, (१७) कुन्दरू, तिल कौड़ Kundru, (१८) चथैल, किंकोड़ा Chathail, (१९) फूट Cucumber, (२०) खारा ककड़ी Cucumber, (२१) गोल खीरा Cucumber, (२२ रेती ककड़ी Cucumber, (२३) खरबूजा Melon, (२४) तरबूज़ Water melons और (२५) दिल पसन्द, टिन्डा टिन्डसी Dilpasand.

(६) (क) दलहन की तरकारियाँ जिनकी फलियाँ काम में लायी जाती हैं।

(१) चँवली Cowpea, (२ ग्वार [illegible] , ३ सेम, बालोर Sem, (४) चौकोनिया सेम, [illegible] ब्राड बान Broad

bean, (६) फ्रेंच बीन French bean, (७) स्कारलेट रनर बीन Scarlet runner bean, (८) लाइमा बीन Lima bean, (९) बकला बीन Velvet bean, (१०) उदा सेम Uda sem और (११) कमच Kamach.

(ख) दलहन की वे तरकारियाँ जिनके सिर्फ बीज ही काम में लाए जाते हैं।

(१) मटर Peas, (२) किराओ Kirao, (३) चना Gram, (४) सोय बीन Soybean और (५) रहर, तूर Tur.

(७) अन्य तरकारियाँ और मसाले :—

(१) मक्का Maize, (२) सिंघाड़ा Water-nut, (३) धरती छत्र Mushrooms, (४) केला Plantain, (५) पपीता, पपैया Papaya, (६) सहजन Drumstick, (७) ज़ीरा Cumin, (८) स्याह ज़ीरा Carraway, (९) सोआ Dill, (१०) अजवाइन Ajwan, (११) लौंग Clove, (१२) काली मिर्च Pepper, (१३) दालचीनी Cinnamon, (१४) तेजपात Tejpat, (१५) इलायची छोटी Cardamoms, (१६) इलायची बड़ी Cardamoms, (१७) सिसरी सेज Sage, (१८) सेलेरिएक Celeriac, (१९) लेवेन्डर Lavender, (२०) सेवारी Savory, (२१) उदो Udo, (२२) ओका Oca, (२३) ओका क्विना Oca quina और (२४) सोलेनम कॉमरसोनी Solanum Commersoni.

प्रकरण ११

वे तरकारियाँ जिनकी जड़ें काम में लायी जाती हैं

गाजर Carrot *Dacus carota*

इसका प्राचीन स्थान काश्मीर और पश्चिमीय हिमालय माना गया है। वहीं से इसका विस्तार अन्य स्थानों में हुआ है। कुछ दिनों से यहाँ पर विलायती गाजर की खेती भी होने लगी है। देशी गाजर बैंगनी या लाल रंग की और विलायती गुलाबी या नारंगी रंग की होती है। देशी की अपेक्षा विलायती गाजर लम्बी और पतली होती है। देशी में गर्मी सहन करने की शक्ति विशेष होती है। कहीं कहीं यह किसी भी ऋतु में पैदा की जा सकती है। यह एक ऐसी फ़सल है कि थोड़ी सी सिंचाई से जल्दी तैयार हो जाती है। देशी गाजरों में कच्छ की गाजर अच्छी मानी गयी है।

गाजर का पौधा एक फुट से दो फीट ऊँचा होता है। जड़ मूली के समान ज़मीन में बैठती है और कुछ ऊपर भी निकल आती है। ऊपर निकला हुआ भाग कुछ हरा हो जाता है। गाजर साधारणतः चार पाँच इञ्च लम्बी और एक छटाँक से चार छटाँक तक वज़न में होती है।

जमीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट जमीन अच्छी होती है परन्तु खाद और सिंचाई के आधार पर यह दुमट और मटियार-दुमट में भी हो सकती है। मटियार मिट्टी इसके लिए ठीक नहीं होती। दुमट या मटियार-दुमट में लगाना हो तो पारियों पर और बलुआ-दुमट में क्यारियों में लगाना चाहिए इसलिए खेत की अन्तिम जुताई के पश्चात् पारियाँ या क्यारिया बना लेनी चाहिए। छोटी जाति की गाजर के लिए पारियाँ बारह इञ्च की दूरी पर और बड़ी के लिए अट्ठारह इञ्च की दूरी पर होनी चाहिए। क्यारियाँ सुविधानुसार लम्बी चौड़ी हो सकती हैं। समतल भूमि में आठ दस फीट चौड़ी और दस पन्द्रह फ़ीट लम्बी ठीक होती है। गोबर का खाद इससे पहले वाला फ़सल को देना चाहिए ताकि गाजरें आकार में अच्छी होवें। गाजर को पोटाश के खाद से विशेष लाभ होता है इसलिए पोटाश पूर्ती अन्य खाद न हो तो राख ही खेतों में डालनी ठीक होती है।

बोना :—गाजर के बीज सीधे खेतों में बोये जाते हैं। एक सेर से डेढ़ सेर बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। बम्बई प्रान्त में यह खरफ़ और रबी दोनों ऋतुओं में बोयी जाती है। गुजरात में श्रावण से कार्तिक (जुलाई से अक्टूबर) तक कभी भी इसे बो सकते हैं। उत्तरीय भारत में भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से नवम्बर) तक बोयी जाती है। पहाड़ों पर

गर्मी के प्रारम्भ में लगाना चाहिए। पंक्तियों में एक फुट से डेढ़ फुट का अन्तर रखना ठीक होता है।

निंदाई और सिंचाई:—गाजर के अंकुर बहुत देर से निकलते हैं। क़रीब क़रीब दस पन्द्रह दिन लग जाते हैं और कुछ दिनों तक पौधे धीरे धीरे बढ़ते हैं इसलिए निंदाई का बहुत विचार रखना चाहिए कि जिससें घासपात नहीं बढ़ने पाये। निंदाई के समय कुछ पौधे उखाड़ दिये जाते हैं और उनमें पाँच छः इञ्च का अन्तर कर दिया जाता है। गाजर के लिए अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। अच्छी तरी वाली भूमि में देशी गाजर बिना सिंचाई के ही तैयार हो जाती है। जहाँ तरी कम हो वहाँ पीछे जाकर कुछ पानी देना पड़ता है सो आवश्यकतानुसार देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी:—बलुआ-दुमट में तीन चार महीने में और भारी मिट्टी में चार पाँच महीने में तैयार हो जाती है। जब गाजर का सिर क़रीब डेढ़ इञ्च मोटा हो जाय तो उन्हें उखाड़ सकते हैं। उखाड़ने के पश्चात् साफ़ धुलवाकर बाज़ार में भेजना चाहिए। यदि जल्दी न बिके और कुछ दिनों तक रखना पड़े तो ठण्डे हवादार मकान में रख सकते हैं। बालू के अन्दर रक्खी जाय तो भी अच्छी रहती है।

बीज की तैयारी:—दूसरी फ़सल बोने के लिए बीज तैयार करना हो तो पुष्ट गाजरों को खोद कर उनके नीचे का कुछ भाग काट डालना चाहिए और ऊपरी भाग को फिर से अच्छी

खाद दी हुई उपजाऊ ज़मीन में लगा देना चाहिए। इन लगाये हुये पौधों से जड़ें फूट जाती हैं और वे जल्दी लग भी जाते हैं। इनमें जो फल आवे उनसे बीज निकाल कर सुखा करके बन्द बर्तनों में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—गाजर वैसे ही धोकर खायी जाती है। इसमें तर पदार्थ की मात्रा कम होती है इसलिए घी या दूध और चीनी के साथ उबालकर खाते हैं। इसका मुरब्बा भी बनाया जाता है और तरकारी भी अच्छी बनती है। गर्मी के दिनों में इसके हलुवे के सेवन से तरावट रहती है। गाजर सुखाना हो तो इसके छोटे-छोटे टुकड़े कर दो शतांश नमक के घोल में तीन चार मिनट तक उबाल कर सुखाना चाहिए। यदि कृत्रिम गर्म हवा में सुखायी जाय तो उसका ताप परिमाण ७५ शतांश (75°c) के लगभग होना चाहिए। यह पित्त, कफ, बवासीर, संग्रहणी और बादी का नाश करती है। बढ़ी हुई तिल्ली और दस्तों में भी इसका उपयोग अच्छा होता है। इसकी पुल्टिस से ख़राब से ख़राब घाव अच्छा हो जाता है।

मूली Radish *Raphanus sativus*

मूली का पौधा लगभग डेढ़ दो फीट ऊँचा होता है। गाजर के समान इसकी जड़ भी ज़मीन में बैठती है। यह दो प्रकार की होती है। एक लम्बी दूसरी छोटी। साधारण देशी मूली आठ दस इञ्च लम्बी और डेढ़ दो इञ्च मोटी होती है। जौनपूर की मूली अच्छी, मुलायम, एक हाथ से भी विशेष लम्बी और क़रीब तीन

चार इञ्च मोटी होती है। देशी मूली का रंग सफ़ेद होता है। विलायती बैंगनी रंग की होती है और देशी की अपेक्षा कुछ छोटी होती है। यह कुछ कोमल और स्वादिष्ट भी विशेष होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। खाद इससे पहले वाली फ़सल को ही देना ठीक होता है क्योंकि ऐसा करने से इसकी जड़ें कोमल बनी रहती हैं। यदि इसी फ़सल को देना हो तो बहुत ही सड़ा हुआ गोबर का खाद क़रीब २०० मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना चाहिए। इसे बहुधा क्यारियों में बोते हैं इसलिए अंतिम जुताई के बाद क्यारियाँ बनवा लेनी चाहिए। कहीं कहीं नालियों में बोकर फिर पौधों पर मिट्टी भी चढ़ाते रहते हैं।

बोना :—गाजर की भांति इसके बीज सीधे खेतों में ही बोये जाते हैं। बीज क़रीब एक इञ्च गहरे बोना चाहिए। आषाढ़ से पौष तक इसके बोने का समय है परन्तु अधिकतर आश्विन से मार्गशीर्ष (सेप्टेम्बर से नवेम्बर) तक बोयी जाती है। सिंचाई और खाद के आधार पर गर्मी में भी बो सकते हैं। पहाड़ों पर फाल्गुन चैत्र (फेब्रुअरी-मार्च) में ही बोना चाहिए। बाज़ार में अच्छी नर्म मूलियाँ बहुत दिनों तक पहुँचायी जा सकें इसलिए दस पन्द्रह दिनों के अन्तर पर नयी नयी क्यारियाँ बोते रहना चाहिए। प्रति एकड़ चार पाँच सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—इसकी निंदाई भी जल्दी जल्दी करनी

चाहिए क्योंकि इसके पौधे भी धीरे धीरे बढ़ते हैं। देरी करने से अन्य जंगली पौधे बढ़कर इसकी बाढ़ रोकते हैं। निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उनमें चार से छः इञ्च का अन्तर कर देना चाहिए। इससे कम अन्तर रखने से पत्तों की बाढ़ विशेष हो जाती है और मूलियाँ ठीक से नहीं बन पातीं। अच्छी तरी वाली ज़मीन में मूली बिना सिंचाई के हो सकती है परन्तु जहाँ तरी कम हो वहाँ गर्मी में बोयी जाय तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी:—बोने के समय से डेढ़ महीने में पत्ते, दो महीने में जड़ें और क़रीब ढाई महीने में फल उपयोग के योग्य हो जाते हैं। गाजर की भाँति मूली को उखाड़ने के बाद अधिक दिनों तक नहीं रख सकते इसलिए बाज़ार की माँग के अनुसार उखाड़ना चाहिए। पौधे हाथ से खींचकर भली भाँति उखाड़े जा सकते हैं।

बीज की तैयारी:—बीज के लिए कार्तिक की बोयी हुई मूली अच्छी होती है। अच्छे स्वस्थ पौधों को उखाड़ कर उनकी जड़ के नीचे का कुछ भाग और ऊपर के पत्ते, काट कर तीन तीन फीट की दूरी पर अच्छी उपजाऊ ज़मीन में लगा देना चाहिए। लगाने के कुछ ही दिन बाद नये पत्ते निकल आते हैं और रोपी हुई मूली जड़ें भी फेंक देती हैं जिनसे पौधों का पोषण होता है। इन पौधों में जब फलियाँ आ जाती हैं तो अच्छी बड़ी फलियाँ रखकर छोटी की तरकारी बनायी जा सकती है। जब फलियाँ

पक जायँ तो बीज निकाल कर अच्छी तरह से सुखाने के पश्चात् बन्द बर्तनों में रख देना चाहिए।

उपयोग और गुण :—मूली की जड़ें, पत्ते और फल तीनों की तरकारी बनायी जाती है। जब जड़ और पत्ते काम में लाये जायँ तो उनमें फल नहीं आने देना चाहिए क्योंकि फलों के आने से जड़ और पत्तों की कोमलता नष्ट हो जाती है। मूली कच्ची भी खायी जाती है और इसका अचार भी बनाया जाता है।

पत्तों का साग पाचक, हलका और गर्म होता है। जड़ की तरकारी पाचक, गर्म और स्वर को उत्तम करने वाली होती है। ज्वर, कंठ-रोग और नेत्रों को भी इससे लाभ पहुँचता है। अर्श-रोग में भी इसका उपयोग अच्छा होता है।

शलजम, शलगम Turnip *Brassica rapa*

इसकी खेती इसकी जड़ों के लिए की जाती है परन्तु कुछ लोग पत्तों का भी उपयोग करते हैं। पौधा मूली के पौधे जैसा होता है परन्तु जड़ मूली की जड़ के समान लम्बी नहीं होती। वह गोल लट्टू के आकार की होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन, इसके लिए अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। भारी मिट्टी में पारियों पर और हलकी में क्यारियों में लगाना ठीक होता है इसलिए अन्तिम जुताई के बाद क्यारियाँ या पारियाँ बना लेनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना अच्छा होता है परन्तु यदि ऐसा

नहीं किया गया हो तो २०० मन के लगभग सड़ा हुआ गोबर का खाद देना चाहिए। कृत्रिम खाद देना हो तो नत्रजन और स्फुर के खाद का उपयोग करना ठीक होता है। अन्य जड़दार फ़सलों के समान इसके लिए पोटाश की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

बोना :—डेढ़ सेर से दो सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए। बीज छींट कर भी बोये जा सकते हैं परन्तु पंक्तियों में बोना अच्छा होता है। एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति के बीच का अन्तर एक फुट होना चाहिए। बीज बोने का समय श्रावण-भाद्रपद (जुलाई-अगस्त) है। बाद में बोने से शलजम ठीक नहीं बैठते। बाहर से आये हुए बीज आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टूबर) तक भी बोये जा सकते हैं। बीज पाव इञ्च से आधे इञ्च गहरे बोना चाहिए। पहाड़ों पर चैत्र से ज्येष्ठ तक बो सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय कुछ पौधों को उखाड़ कर दूसरों का अन्तर निर्माण करना चाहिए। एक पौधे से दूसरा पौधा छः इञ्च की दूरी पर होना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से ढाई तीन महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। पैदावार २५० से ३०० मन तक हो जाती है। शलजम कुछ दिनों के लिए रखना हो तो पत्तों का थोड़ा सा भाग जड़ों के साथ छोड़ देना चाहिए। महीन जड़ें जो मोटी जड़ शलजम के साथ लगी रहती हैं उन्हें भी जड़ से पृथक नहीं करनी चाहिए। ऐसे शलजम को ठंडे मकानों में मचानों पर कुछ समय के लिए रख सकते हैं।

बीज की तैयारी :—मूली के बीज की भाँति इसके भी बीज तैयार किये जा सकते हैं परन्तु ये सब जगह नहीं हो सकते। पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में ही हो सकते हैं।

उपयोग और गुण :—विशेषतः इसकी जड़ ही तरकारी के लिए काम में लायी जाती है परन्तु कोमल पत्तों की भी तरकारी बनायी जा सकती है। यदि सुखाना हो तो गाजर की भाँति सुखाना चाहिए। शलजम की तरकारी क्षुधावर्धक और वीर्य्य-वर्धक होती है। खाँसी में भी इससे लाभ पहुँचता है।

चुकन्दर Beet *Beta vulgaris*

इसकी खेती इसकी जड़ के लिए की जाती है। भारतवर्ष में इसका आगमन हाल ही में हुआ है इसलिए यहाँ पर इसकी खेती का प्रचार विशेष रूप से नहीं हुआ। अधिकतर अंगरेज लोग ही इसका उपयोग करते हैं। इसका पौधा दो फीट ऊँचा होता है। जड़ गाजर की भाँति भूमि में बैठती है जो लम्बी और गोली ऐसी दो प्रकार की होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—अच्छे और कोमल चुक़न्दर बलुआ ज़मीन में होते हैं। भूमि की जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। बरसात में बोये जाने वाले के लिए पारियाँ और बाद में बोये जानेवाले के लिए क्यारियाँ तैयार करवानी चाहिएँ। खाद इससे पहली फ़सल को ही देना ठीक होता है। इसी फ़सल को दिया जाय तो जड़ों की कोमलता और सुन्दरता दोनों नष्ट हो जाती हैं। एक सुन्दर जड़ न रह कर वह फूट जाती है।

हो सके तो कृत्रिम खाद के रूप में बीस सेर नत्रजन, तीस सेर स्फुर और पचास सेर पोटाश प्रति एकड़ पहुँचे, इतना खाद दे देना चाहिए।

बोना :—एक एकड़ के लिए क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। इन्हें एक इञ्च गहरे बोना चाहिए। पंक्ति बारह से पन्द्रह इञ्च की दूरी पर होनी चाहिए। भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से अक्टूबर) तक इसके बीज बोये जा सकते हैं। पहाड़ों पर चैत्र-वैशाख (फेब्रुअरी-मार्च) में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय जब पौधे दो दो इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उनकी छँटती करनी चाहिए। पौधे से पौधा चार इञ्च से छः इञ्च की दूरी पर होना चाहिए। बरसात वाली फ़सल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। जिस ज़मीन में तरी कम हो उसमें देर से बोयी जाने वाली फ़सल को आवश्यकतानुसार सींचना चाहिए। निंदाई के समय पौधों की जड़ों पर मिट्टी भी चढ़ाते रहना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से ढाई तीन महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। जब जड़ें एक इञ्च से डेढ़ इञ्च मोटी हो जायँ तब उखाड़ना चाहिए। इससे मोटी हो जाने पर वे तरकारी के योग्य नहीं रहतीं। इसकी पैदावार चालीस पचास मन के क़रीब हो जाती है। कुछ दिनों तक इन्हें रखना हो तो ठंडे हवादार मकान में शलजम की भाँति यानी ऊपर के पत्ते आधे काटकर और महीन जड़ों को मोटी जड़ से पृथक नहीं कर के

रखना चाहिए। राख, बालू या मिट्टी में भी इन्हें रख सकते हैं। जब इनमें रक्खे जायँ तो जड़ों की ढेरी पर थोड़ी राख, बालू या मिट्टी डालने के पश्चात् एक तह सूखी घास का देकर ऊपर से फिर मिट्टी से ढकना चाहिए।

दूसरी फ़सल के लिए बीज गाजर के बीज की भाँति तैयार किये जा सकते हैं, परन्तु चुक़न्दर भी सब जगह नहीं फलते इसलिए जहाँ न फले वहाँ अन्य स्थानों से ही बीज मँगवाना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसकी जड़ और पत्ते तरकारी बनाने के काम में लाये जाते हैं। सिरके में अचार भी अच्छा बनता है। दूसरी तरकारियों के साथ इसकी तरकारी बनायी जाय तो उनमें इसका रंग आ जाता है जिसे कुछ लोग पसन्द करते हैं। इसकी तरकारी और अचार के उपयोग से पाचन शक्ति तीव्र होती है। अन्य देशों में विशेषतः जर्मनी और रूस में ऐसी जातियों के चुक़न्दर जिनमें पन्द्रह बीस शतांश चीनी रहती है उनसे चीनी बनायी जाती है।

पारस्निप Parsnip *Pastinaca sativa*

इसकी खेती इसकी जड़ के लिए की जाती है। इसका भी विस्तार अभी भारतवर्ष में नहीं हुआ है। इसकी फ़सल बहुत देर से तैयार होती है और माँग भी विशेष नहीं होती इसलिए भारत में इसे आदर मिलने की आशा भी कम है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। हलकी बलुआ ज़मीन में यह अच्छा

नहीं होता। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। गोबर के खाद के सिवाय बोने के प्रथम एक मन प्रति एकड़ के हिसाब से एमोनियम सलफ़ेट मिट्टी में मिला देना चाहिए। अन्तिम छँटाई के बाद भी इतना ही फिर दे देना चाहिए।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसे बोते हैं। डेढ़ सेर से दो सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए। बीज क्यारियों में आधे इञ्च गहरे बोये जाते हैं। पंक्तियाँ डेढ़ डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिएँ। पहाड़ों पर यह गर्मी में ही बोया जाता है।

निंदाई और सिंचाई :—इसके बीज बहुत देर से अंकुर फेंकते हैं। लगभग एक महीना लग जाता है और बाद में बाढ़ भी बहुत धीरे धीरे होती है इसलिए निंदाई की ओर पूरा लक्ष्य रखना चाहिए। जब पौधे दो इञ्च के क़रीब बढ़ जायँ तो छँटती का कार्य्य प्रारम्भ होना चाहिए। पौधे से पौधे का अन्तर पाँच छः इञ्च का ठीक होता है। इसकी फ़सल बहुत देर से तैयार होती है इसलिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से क़रीब छः महीने बाद फ़सल तैयार होती है। इसके भी बीज सब जगह नहीं हो सकते इसलिए बाहर से मँगवाकर ही बोना चाहिए।

उपयोग :—इसकी जड़ तरकारी के लिए काम में लायी जाती है। काटकर पकाने की अपेक्षा समूची जड़ उबालना अच्छा होता है। इसका स्वाद कुछ मीठा होता है।

सॉल्सीफाई Salsify *Tragopogon porrifolius*

इसका भी विस्तार अभी भारतवर्ष में विशेष रूप से नहीं हुआ है परन्तु फिर भी कहीं कहीं बागीचों में इसे स्थान मिल जाता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद पारस्निप में जिस रीति से दिया जाता है उसी भाँति देना चाहिए।

बोना :—चार सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति में बारह से पन्द्रह इञ्च का अन्तर ठीक होता है। बीज आधे इञ्च गहरे बोने चाहिए। बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है। पहाड़ों पर गर्मी में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके छः इञ्च से नौ इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। इसकी फ़सल भी देर से आती है इसलिए आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से छः महीने में फ़सल तैयार होती है। फ़सल उठाने के बाद बालू में कुछ समय के लिए रख सकते हैं।

उपयोग :—जड़ों को छील कर उनकी तरकारी बनायी जाती है।

रुटाबागा Rutabaga *Brassica napobrassica*

इसकी खेती इसकी जड़ के लिए की जाती है जिसकी तर-

कारी बनायी जाती है। यह शलजम जैसा ही होता है अन्तर यह होता है कि शलजम के पत्ते हरे और खुरदरे होते हैं और इसके साफ और कुछ नीले रंग के होते हैं। खेती शलजम की खेती के समान ही होती है। बोने के समय से चार पाँच महीने में फ़सल तैयार हो जाती है।

स्किरेट Skirret *Sium sisarum*

इसकी जड़ एक न होकर बहुत सी होती हैं और उनके गुच्छे के गुच्छे बैठते हैं। जड़ें मीठी और भूरे रंग की होती हैं। खेती सॉल्सीफ़ाई की खेती के समान होनी चाहिए। बीज से पैदा करना हो तो बीज नर्सरी में गिरा कर जब पौधे दो इञ्च ऊँचे हो जायँ तब खेतों में लगा देना चाहिए। इसे खूँटी से अर्थात् पौधे के नीचे के तने को जड़ सहित चीर कर लगा करके भी पैदा कर सकते हैं। फ़सल, चार पाँच महीने में तैयार होती है। कुछ दिन रखना हो तो खेत में ही रख सकते हैं।

उपयोग :—जड़ों का अन्तःसार जो सफेद रंग का होता है उसकी तरकारी बनायी जती है।

—

प्रकरण १२

वे तरकारियाँ जिनके धड़ या शाखाएँ काम में लायी जाती हैं।

आलू Potatoes *Solanum tuberosum*

आलू का प्राचीन निवास स्थान पेरू और चीली (दक्षिण अमेरिका) माना गया है। वहीं से इसका विस्तार सब जगह हुआ है। आलू की कई जातियाँ हैं। जिन जातियों का आदर भारत ने किया है वे भी कई हैं परन्तु सब दो भागों में विभाजित की जा सकती हैं। एक वे जो समतल भूमि में होती हैं और दूसरी वे जो पहाड़ों पर ही अच्छी होती हैं। पहाड़ों पर से बीज मँगवाकर मैदानों में लगाये जायं तो एक दो फ़सल ठीक होती है। पहाड़ी आलू दूसरे आलू की अपेक्षा जल्दी पकते हैं। उबालने पर ये जल्दी फूट जाते हैं और तोड़ने पर दाना बिखर जाता है। इनके स्वाद में भी कुछ भिन्नता होती है। आमतौर पर अच्छे आलू वे माने जाते हैं जिनका छिलका साफ़ हो, जिनकी आँखें गहरी न हों, जो बड़े, लम्बे और गोल हों, जिनका गूदा सफ़ेद हो और जो उबालने पर यदि तोड़े जायें तो जल्दी से बिखर जायें। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो पहाड़ी की अपेक्षा समतल भूमि में होने वाले आलू ज्यादा पसन्द करते हैं। समतल भूमि में होने

वाले आलू में लाल आलू पटना के आस पास के और सफेद आलू फरुखाबाद के अच्छे होते हैं।

आलू के पौधे की बाढ़ भूमि की उर्वरा शक्ति, खाद और आलू की जाति पर निर्भर है। अच्छी ज़मीन में समतल भूमि पर होने वाले आलू का पौधा दो फीट ऊँचा होकर इधर उधर अपनी टहनियाँ गिरा देता है। कमज़ोर मिट्टी में इनकी बाढ़ एक फुट तक होती है। जहाँ से पोधे की शाखाएँ फूटती हैं वहीं से सफेद सफेद सी जड़ों के समान शाखाएँ (बह) निकलती हैं वे ज़मीन में दबा दी जाती हैं। उन्हीं के मुँह पर आलू बैठते हैं। पहाड़ी आलू का पौधा छोटा होता है। इसका फैलाव विशेष नहीं होता। पौधे की जड़ के निकट ही आलू के गुच्छे बैठते हैं इससे इन पर विशेष मिट्टी नहीं चढ़ानी पड़ती। पौधे से पौधे का अन्तर भी कम रक्खा जाता है।

ज़मीन, जुताई और खादः—आलू क़रीब क़रीब सब प्रकार की मिट्टी में पैदा किये जा सकते हैं परन्तु दुमट और कछार भूमि अच्छी होती है। खेतों की जुताई कम से कम छः इञ्च गहरी और अच्छी होनी चाहिए। ढाई सौ से तीन सौ मन तक अच्छे सड़े हुए गोबर का खाद देना चाहिए। यदि कम सड़ा हुआ हो तो वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में डालना चाहिए ताकि बरसात में अच्छी तरह सड़ जाय। हड्डियों का सड़ा हुआ खाद गोबर के खाद के साथ डालना भी अच्छा होता है। क़रीब तीन मन हड्डी प्रति एकड़ पहुँचे इतना खाद डालना चाहिए। राख से भी इसको

लाभ पहुँचता है। गोबर का खाद कम हो तो नत्रजन पूर्ति कृत्रिम खाद भी दिये जा सकते हैं। यदि गोबर के खाद की मात्रा आधी डाली जाय तो क़रीब बीस सेर से पचीस सेर नत्रजन पहुँचे इतना कृत्रिम खाद या खली का खाद देना चाहिए। मेरे लगातार चार साल के प्रयोगों में अन्य खादों की अपेक्षा सरसों की खली का खाद इसके लिए बहुत ही लाभप्रद सिद्ध हुआ। गोबर के खाद के अभाव में क़रीब १० मन खली डालनी चाहिए। जिस पंक्ति में आलू लगाए जायँ उसी की मिट्टी में खली का चूरा मिलाते जाकर आलू लगाते जाना चाहिए।

बोना:—आलू के लिए सदा आलू ही लगाये जाते हैं। सिर्फ वैज्ञानिक प्रयोग के लिए जब दो जाति के मेल से तीसरी जाति पैदा करनी होती है तब बीज पैदा करते हैं। समतल भूमि में आलू आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में लगाये जाते हैं। पहाड़ों पर माघ-फाल्गुन (फेब्रुअरी-मार्च) में लगाते हैं और फिर अषाढ़ (जून) में भी लगाते हैं ऐसी कहीं कहीं दो फसलें ली जाती हैं। बम्बई प्रान्त में भी कहीं कहीं दो फसलें लेते हैं। आलू लगाने के लिए यदि छोटे हुए तो समूचे और यदि बड़े हुए तो काटकर टुकड़े लगाना चाहिए। बड़ी सुपारी या अण्डे के आकार के आलू लगाना ठीक होता है। इनसे बड़े हों तो टुकड़े करके लगाना चाहिए। बीज के लिए यदि देरी से बोयी गयी फ़सल के आलू रक्खे जायँगे तो उत्तम होगा। ऐसे आलू तैयार होने पर छोटे रहेंगे जिन्हें काटना नहीं पड़ेगा और वे टिकने में

भी अच्छे होंगे। बड़ी सुपारी से छोटे आलू भी लगा सकते हैं परन्तु ऐसा करने से फ़सल कुछ कमज़ोर होती है। आलू को दो तीन इञ्च गहरे बोना चाहिए। पहाड़ी आलू के लिए पंक्ति से पंक्ति डेढ़ फुट और पौधे से पौधा छः इञ्च से नौ इञ्च की दूरी पर होना चाहिए। दूसरे आलू के लिए अच्छी उपजाऊ ज़मीन में पंक्तियों में ढाई फ़ीट का और पौधों में नौ इञ्च से बारह इञ्च का अन्तर ठीक होता है। कमज़ोर भूमि में पंक्तियाँ दो फ़ीट के अन्तर पर और पौधे छः इञ्च से नौ इञ्च के अन्तर पर होना चाहिए। आलू के आकार और रोपने की दूरी पर बीज का वज़न निर्भर है। बारह मन से बीस मन आलू प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। पहाड़ी आलू जब मैदान में लगाना हो तो सर्दी पड़ने लगे तब लगाना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई:—निंदाई के समय जब पौधे आलू बैठने वाली सफेद शाखाएँ बाहर फेंकने लगें तब उन पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया जाय तो वे फिर पत्ते फेंक देती हैं और आलू बैठने नहीं पाते। पहाड़ी आलू में दो बार और दूसरे में तीन चार बार मिट्टी चढ़ानी पड़ती है। बहुत से स्थानों में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती और बहुत से ऐसे भी हैं जहाँ बिना सिंचाई के आलू हो नहीं सकते इसलिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल का तैयारी:—आलू की फसल चार पाँच महीने में तैयार हो जाती है। जब पत्ते पीले पड़ने लगें तब समझना

चाहिए कि अब आलू तैयार हो गये। कुछ लोग जब पौधे सूख जाते हैं तब निकालते हैं। जो आलू बीज के लिए रक्खे जायँ उन्हें जरा जल्दी से उठा लेना चाहिए। जब पौधे पीले पड़ जायँ लेकिन पूरे न सूखें तब उठा लेना चाहिए। देरी से उठाने से आलू का छिलका कहीं कहीं फट जाता है और उसमें व्याधि के जन्तु घुस जाते हैं जिससे आलू सड़ जाते हैं—अधिक दिनों तक नहीं ठहरते। समतल भूमि में फेब्रुअरी के अन्त में यानी फाल्गुन के प्रारम्भ में ही उठा लेना चाहिए। आलू की पैदावार पचास मन से ढाई सौ मन तक हो जाती है।

बीज के लिए आलू सुरक्षित रखने की युक्ति:—आलू की खेती वालों के लिए यह विषय बड़ा ही महत्व का है क्योंकि आलू सड़ते बहुत हैं। पचास शतांश से पचहत्तर शतांश तक सड़ना तो साधारण बात है। कभी कभी इससे भी अधिक हानि पहुँचती है। आलू को कीट और सूक्ष्म जन्तु दोनों ही हानि पहुँचाते हैं। उनसे बचाने के लिए पत्थर के कोयले की सूखी हुई राख या लकड़ी के कोयले का चूर्ण काम में लाना चाहिए। कोयले के चूर्ण में रक्खे हुए आलू के लगाने से पैदावार* भी विशेष होती है।

देवदार की लकड़ी के सन्दूकों में बीज के आलू इस भाँति रखना चाहिए कि आलू बीच में रहे और उनके चारों ओर एक

---

* Ibid पृ० ९०

एक इञ्च पर्त कोयले के चूर्ण का आ जाय। कुछ चूर्ण आलू भरते समय उनके ऊपर भी डालते रहना चाहिए। फिर उन्हें बन्द करके ठण्डे हवादार मकान में रखना ठीक होता है। इस प्रकार से रक्खे हुए आलू की बीच में देख भाल नहीं करनी पड़ती। बोने के समय पर ही खोलना चाहिए और खोलने पर शीघ्र ही बो देना चाहिए। प्रत्येक सन्दूक लम्बी चौड़ी चाहे जितनी हो परन्तु ऊँचाई में आठ नौ इञ्च के क़रीब होनी चाहिए जिसमें आलू की तह छः इञ्च से मोटी न हो। कोयले के चूर्ण में पक्की फर्श पर भी आलू भली भाँति रक्खे जा सकते हैं। उस हालत में जालीदार तार से ढकने पड़ते हैं जिसमें चूहे हानि नहीं पहुँचाएँ। इस तरह से रखने से सन्दूकों का ख़र्च बच जाता है।

उपयोग और गुण :—ऐसा बिरला ही होगा जो आलू का उपयोग तरकारी के लिए नहीं जानता हो। अन्य व्यवसाय के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। इसका चूर्ण (Starch) अरारूट आदि के चूर्ण के बदले में काम में लाया जाता है। इसी चूर्ण से गोंद भी बनाया जाता है। इसकी तरकारियाँ भी कई प्रकार की बनती हैं। अन्य तरकारियों को स्वादिष्ट करने के लिए भी उनके साथ इसे मिला देते हैं। इसकी तरकारी सूखी, बलदायक, वीर्य्यवर्धक और कुछ अग्निदीपक होती है। दुबले पतले व्यक्तियों के लिए इनका उपयोग अच्छा माना गया है। आवश्यकता से अधिक मोटे व्यक्तियों को इनका सेवन बहुत कम करना चाहिए।

गेहूँ की कमी* को पूरा करने में भी आलू से अच्छी मदद मिल जाती है। एक सेर गेहूँ के आटे में पाव भर उबाले हुए आलू मिला कर रोटी बनायी जाय तो वह बड़ी मुलायम और स्वादिष्ट बनती है। पता नहीं लगता कि आटे में आलू मिलाया गया है।

आलू का सुखाना :—युद्ध में सैनिकों को सब्जी सूखी ही उपलब्ध हो सकती है इसकी वजह से सूखे आलू की माँग बहुत बढ़ जाती है। निम्न लिखित रीति से ऐसे आलू तैयार किये जा सकते हैं। अच्छे बड़े बड़े आलू धुलवाकर उन्हें छिलवा लेना चाहिए बाद में पाव इञ्च मोटाई के टुकड़े कर उन्हें पानी में डालते जाना चाहिए। जब काफ़ी हो जायँ तो उन्हें ५ मिनिट के लिए उबलते हुए पानी में छोड़ कर निकाल करके चलनियों पर फैलाकर सुखाना चाहिए। सुखाने वाले कमरे का तापमान ६५ से ७० शतांश होना चाहिए। सूखे हुए आलू सफ़ेद या हलके पीले रंग के अच्छे माने जाते हैं।

आलू के लच्छे :—अच्छे बड़े आलू धोकर छील करके उनके लच्छे कद्दूकस से बना लिए जायँ। बाद में उन्हें दो मिनट तक उबलते हुए पानी में डाल कर निकाल करके सुखा लेना चाहिए। सूखे हुए लच्छों को जब चाहो घी में तल लो। घी में डालते ही तुरन्त फूल जाते हैं। बाद में नमक और मसाला छिड़क देने से बड़े स्वादिष्ट बन जाते हैं।

---

* श्रीमती व्यास—"भोजन की समस्या में आलू का स्थान" हिन्दुस्तान ६ मार्च १९४७ ई०।

आलू के पापड़ :—

कद्दूकस में निकाले हुए आलू के लच्छे जब पानी में धोये जाते हैं तो कुछ पदार्थ धुल कर पानी में चला जाता है। यदि उस पानी को थोड़ी देर रक्खा जाय तो कुछ दानेदार चिकना पदार्थ नीचे बैठ जाता है। इस पदार्थ को प्राप्त करने के लिए ऊपर का पानी धीरे से बहा देना चाहिए।

कारखानों में जहाँ आलू के टुकड़े सुखाये जाते हैं और पानी में उबाले जाते हैं तो वहाँ भी ऐसा पदार्थ वृथा चला जाता है जो लगभग पाँच छः शतांश के होता है। वर्तमान अन्न संकट के समय ऐसे पदार्थ का सदुपयोग करने के लिए श्रीमती व्यास ने कुछ प्रयोग किये तो अन्य पदार्थों की अपेक्षा पापड़* बड़े अच्छे बने। उसी प्रयोग के आधार पर निम्न लिखित व्योरा दिया गया है।

जिस पानी में धुले हुए लच्छे दो मिनिट तक उबाले जाते हैं उसमें भी कुछ पदार्थ रह जाता है। ऐसे पानी में दो तीन बार के लच्छे उबाले जायँ तो उसमें धुला हुआ पदार्थ कुछ अधिक हो जाता है। ऐसे पानी में जो पदार्थ लच्छे धोने के पानी में जम जाता है उसे डाल कर उबाला जाय तो चार पाँच मिनिट में वह सब पानी गाढ़ा लेई के समान हो जाता है। इसमें आवश्यकतानुसार नमक, जीरा और मसाला मिला कर कपड़े पर सुखा लेना

---

* श्रीमती व्यास—'आलू सुखाने की घरेलू युक्ति' हिन्दुस्तान, फरवरी ६, १९४७ ई०।

चाहिए। चारपाई या चौकी पर कपड़ा रख कर उस पर जगह जगह चम्मच से उबाला हुआ गाढ़ा पदार्थ डाला जाय तो वह फैल कर कपड़े पर सूख जायगा। सूख जाने पर कपड़े पर नीचे की तरफ से थोड़ा थोड़ा पानी छींट कर पापड़ कपड़े से छुड़ा लें। ऐसे पापड़ का रंग कुछ मैला सा नज़र आता है परन्तु जब तले जाते हैं तो वे बिलकुल सफ़ेद हो जाते हैं और साबूदाने के पापड़ जैसे बन जाते हैं। दस सेर आलू से डेढ़ सेर से कुछ अधिक लच्छे और आधा सेर से कुछ अधिक पापड़ बन जाते हैं। संख्या में २०० तक होंगे।

शकरक़न्द, अलुआ Sweet Potatoes *Ipomea batatas*

इसकी जन्मभूमि अमेरिका है। वहीं से इसका फैलाव अन्य स्थानों में हुआ है। इसकी दो जातियाँ हैं। एक सफेद दूसरी लाल। सफेद की अपेक्षा लाल शकरकन्द अधिक मीठा होता है। शकरकन्द की लताएँ ज़मीन पर फैली रहती हैं और लगभग आठ दस फीट तक फैल जाती हैं। जिस जगह लता लगायी जाती है वहीं शकरकन्द बैठते हैं। यदि जुताई अच्छी हुई तो कन्द आठ दस इञ्च लम्बे और सीधे होते हैं। कम जुताई वाला कठोर ज़मीन में छोटे रह कर मुड़ जाते हैं। इसकी एक जाति लङ्का में ऐसी होती है जिसमें शकरकन्द के गुच्छे के गुच्छे बैठते हैं। वहाँ से लाकर बम्बई प्रान्त में उसका प्रचार किया जा रहा है।

शकरकन्द की खेती से विशेष लाभ यह होता है कि ज़मीन सुधर जाती है। इसकी लता ऐसी घनी फैल जाती है कि खर

पतबार जमने ही नहीं पाते। इसके सिवाय इसके खोदने के लिए आठ दस इञ्च मिट्टी खोदनी पड़ती है जिससे खेतों की जुताई अच्छी हो जाती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह हर प्रकार की मिट्टी में हो जाता है परन्तु बलुआ या बलुआ-दुमट मिट्टी बहुत अच्छी होती है क्योंकि उसमें कन्द को बनने और बढ़ने में आसानी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। गोबर का सड़ा हुआ खाद दो सौ से ढाई सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए। राख से भी इसको लाभ पहुँचता है। गोबर के खाद की कमी कृत्रिम खाद द्वारा भी पूरी की जा सकती है।

बोना :—इसके लगाने के लिए इसकी लताएं लगायी जाती हैं। लताओं के ऊपरी भाग के टुकड़े क़रीब एक हाथ काट कर एक एक हाथ की दूरी पर पांच छः इञ्च गहरे लगाये जाते हैं। कहीं कहीं इसकी दो फसलें होती हैं। बिहार में पहली फ़सल के लिए आश्विन (सेप्टेम्बर) में और दूसरी के लिए माघ (जनवरी) में लगाते हैं। आश्विन वाला मार्गशीर्ष और पौष तक तैयार होता है और माघ-फाल्गुन तक चलता है। माघ वाला जेष्ठ-आषाढ़ में तैयार होता है। कहीं कहीं बरसात और जाड़े में भी लगाते हैं। गुजरात में जाड़े में लगाया जाता है। कोनकन में बरसात और जाड़ा दोनों मौसम में लगाते हैं।

अमेरिका में कंद ही गाड़ कर नर्सरी में उनसे निकले हुए पौधे तैयार किये जाते हैं। जब पौधे तीन चार इञ्च ऊंचे हो जाते

हैं तो उन्हें लगा देते हैं। जहाँ लगाने के लिए लता न मिले वहाँ इस युक्ति से काम चल सकता है।

निंदाई और सिंचाई :—जब तक लता से ज़मीन ढकने नहीं पाती तब तक निंदाई करनी पड़ती है। उसके ढक जाने पर खर पतवार जमने नहीं पाते। सिंचाई की आवश्यकता सब जगह नहीं होती परन्तु जहाँ ज़रूरत हो वहाँ करनी चाहिए। इसकी लता बड़ी कोमल होती है जिसे पाले से बड़ी हानि पहुँचती है। इससे बचाने के लिए जिन दिनों में पाला गिरने की सम्भावना हो उन दिनों में रात को घास या चटाइयों से लताओं को ढककर रखनी चाहिए। यह कार्य समूची फ़सल के लिए तो नहीं किया जा सकता परन्तु जो लताएँ रोपने के लिए रक्खी जायँ उन्हें अवश्य ढकनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—जब भूमि फटने लगे और पत्ते सूखने लगें तब समझना चाहिए कि फ़सल उठाने योग्य हो गयी है। कुछ लोग इसे एक साथ खोद लेते हैं और कुछ खेतों में छोड़ कर आवश्यकतानुसार खोदते रहते हैं। तैयार हो जाने पर भी शकरकन्द एक दो महीने तक खेतों में रहने दिये जा सकते हैं। एक साथ जो फ़सल उठा लीं जाती है उसे कुछ दिनों तक सम्हालकर रखना पड़ता है। उसके लिए यह देखना चाहिये कि शकरकन्द अच्छे पके हुए हों। दो एक कन्द यदि काटकर छोड़ दिये जायँ और उनके काटे हुए भाग जल्दी से सूख जायँ तो समझना चाहिए कि फ़सल उठाने योग्य हो गयी।

जिनमें कच्चावट होती है उनके काटे हुए छोर जल्दी नहीं सूखते और सूखने पर काले पड़ जाते हैं। तैयार फ़सल गर्म और सूखे वातावरण में अच्छी रहती है। फ़सल खोदने के लिए हल से खेत जोत कर कन्द चुनवा लिए जाते हैं। थोड़ी ज़मीन में होने से मज़दूरों से भी खुदवा सकते हैं। पैदावार एक सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती है।

दूसरी फ़सल के लिए लताएँ पैदा करना :—

आश्विन वाली फ़सल से माघ में रोपी जाने वाली फ़सल के लिए लताएँ काट लेते हैं और माघ में लगायी हुई लताओं से काट कर आषाढ़ में थोड़ी सी भूमि में लगा देते हैं जो आश्विन तक तैयार हो जाती है। फिर उन्हें उस स्थान से हटा कर जिन खेतों में लगाना होता है वहाँ लगा देते हैं। कहीं कहीं गर्मी में पानी दे कर फ़सल को वैसे ही छोड़ देते हैं जिससे कन्द जमीन में सड़ जाते हैं और लताएँ लगी रहती हैं। इन्हें काट कर समय आने पर खेतों में लगा देते हैं।

उपयोग और गुण :—कन्द को वैसे ही उबालकर खाते हैं। कुछ स्थानों में ग़रीब व्यक्तियों के लिए एक समय का मुख्य आहार इसी का होता है। तरकारी, हलुवा आदि के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। सुखा कर के आटा भी बना सकते हैं जिसे फलाहार के काम में लाते हैं। शकरकंद को उबाल कर उनका छिलका हटा देना चाहिए। बाद में गोल गोल टुकड़े काटकर सुखा सकते हैं। कृत्रिम गर्म हवा में सुखाना हो तो

तापक्रम ७२ से ८० शतांश तक होना चाहिए। कोमल पत्तों की तरकारी बनायी जा सकती है। पत्तियाँ पशुओं को खिलायी जाती हैं। शकरकंद भारी, गर्म, बलदायक और कुछ दस्तावर होते हैं।

अर्वी घुइयाँ Arum *Colocasia antiquorum*

इसकी खेती कंद और पत्ते दोनों के लिए की जाती है। इसके पत्ते चिकने और बहुत बड़े होते हैं। पत्तों की डंडी भी डेढ़ दो फीट लम्बी होती है। इसकी कई जातियाँ होती हैं। इसके जैसी ही एक जंगली अर्वी होती है जिसकी तरकारी नहीं बनायी जाती।

ज़मीन, जुताई और खाद :—देहातों में जलाशयों के आस पास तथा घरों के निकट में इसे लगा देते हैं। वहीं यह बढ़ती रहती है। खेतों में लगाने के लिए ज़मीन की जुताई अच्छी तरह से करके दो दो फीट की दूरी पर नालियाँ बना लेनी चाहिए। इसे क्यारियों में भी लगा सकते हैं। यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। परन्तु बलुआ-दुमट और दुमट-मिट्टी अच्छी होती है। जब भारी मिट्टी में लगाई जाय तो पारियों पर ही लगाना चाहिए। डेढ़ सौ से दो सौ मन तक सड़ा हुआ खाद इसके लिए ठीक होता है।

बोना :—वर्षा के प्रारम्भ में यानी आषाढ़ (जून) महीने में इसकी गाँठें लगायी जाती हैं। एक एकड़ के लिए छोटी बड़ी अर्वी के अनुसार तीस से चालीस मन बीज (अर्वी) की आवश्यकता होती है। गाँठों को एक एक फुट की दूरी पर और तीन

तीन इञ्च गहरी लगानी चाहिए। यदि क्यारियों में लगायी जायँ तो पंक्तियाँ दो फीट और पौधे एक फुट की दूरी पर होने चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय ज्यों ज्यों पौधे बढ़ते जायँ उन पर मिट्टी चढ़ाते जाना चाहिए। इसके लिए सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से दो तीन महीने बाद से ही पत्ते उपयोग के योग्य हो जाते हैं। ज्यों ज्यों पत्ते पुराने होते जायँ उन्हें डंडी सहित तोड़कर बेच देना चाहिए। चार पाँच महीने बाद अर्वी भी खोदकर काम में लायी जा सकती है परन्तु पूरी फ़सल पौष-माघ तक तैयार होती है। इसकी पैदावार क़रीब तीन सौ मन तक हो जाती है।

इसे कुछ दिनों के लिए रखना हो या बीज के लिए रखना हो तो सूखे वतावरण वाले हवादार मकान में मचान पर रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके पत्ते तरकारी और पकौड़ी आदि बनाने के लिए काम में लाये जाते हैं। बहुत से लोग पत्तों का उपयोग न करके सिर्फ पत्तों की डंडी की ही तरकारी बनाते हैं। कन्द की तरकारी सब लोग खाते हैं। यह बल-दायक, चिकनी और भारी होती है। पत्ते की डंडी के रस से बहता हुआ खून बन्द हो जाता है। घाव भी इससे जल्दी अच्छा होता है। अर्वी का रस दस्तावर होता है। भमरी (बर्रे) आदि

जिस जगह पर डङ्क मार दे उस जगह पर इसके लगाने से आराम पहुँचाता है।

गराड़ू फर Yams *Dioscorea alata var. globosa etc.*

रतालू Yams *Dioscorea alata var. purpurea*

इनकी खेती इनके कन्द के लिए ही की जाती है जो कई जाति के होते हैं। साधारण तौर पर इनके दो विभाग किए जा सकते हैं। गराड़ और दूसरे रतालू। इनमें भिन्नता यह होती है कि छीलने पर गराड़ू सफेद निकलते हैं और रतालू लाल या बैंगनी रंग के होते हैं। पहले की अपेक्षा दूसरा कुछ मँहगा बिकता है और स्वाद में भी कुछ अच्छा होता है। गराड़ू गोल और लम्बे ऐसे दो प्रकार के होते हैं। रतालू बहुधा लम्बे ही होते हैं। गोल गराड़ू का व्यास क़रीब छः इञ्च का होता है। इनकी बेल बहुत लम्बी होती है जो ज़मीन पर छोड़ दी जा सकती है या इसे मचानों पर भी चढ़ा सकते हैं। मचानों पर चढ़ाना पौधों के लिए विशेष हितकर होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन इनके लिए अच्छी होती है। जुताई खूब गहरी होनी चाहिए क्योंकि जितनी गहरी जुताई होगी कन्द उतना ही अच्छा बैठेगा। इनके लिए कुछ कम सड़ा हुआ खाद भी हानिकारक नहीं होता। गोबर, पत्ते, घास-पात इत्यादि सब काम में लाये जा सकते हैं। खाद क़रीब दो सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब

से देना चाहिए। अन्तिम जुताई के बाद खेतों में तीन तीन फ़ीट की दूरी पर अठारह इञ्च गहरी और दो दो फीट चौड़ी नालियाँ बनवा कर उनमें खाद भरवा देना चाहिए। फिर खाद पर मिट्टी डाल देनी चाहिए। इन्हीं नालियों में गराड़ू लगाए जाते हैं।

बोना :—प्रति एकड़ दस मन से पन्द्रह मन बीज लगता है। इसके लिए कन्द के टुकड़े लगाये जाते हैं। व्यय कम करना हो तो कन्द के ऊपरी भाग को काट कर भी लगा सकते हैं और बाक़ी के कन्द बेच सकते हैं। कहीं कहीं रोपने के पहले कन्द को घास में दबा कर भी अंकुर फिंकवाये जाते हैं। ऐसा करने से पौधे जल्दी बढ़ते हैं। रोपने का समय चैत्र-वैशाख से आषाढ़ (मार्च से जून-जुलाई) तक है। पौधे से पौधा तीन फीट की दूरी पर लगाना चाहिए। लगाने के बाद कुछ दिनों के लिए घास या पत्तों से ढक कर रखना चाहिए ताकि यदि पहले से अंकुरित न हो तो शीघ्र अंकुर फेंक दें।

निंदाई और सिंचाई :—घास-पात निकालते समय शाखाओं को मचान पर चढ़ाने का या कम से कम उठा कर देख लेने का प्रबन्ध करना चाहिए क्योंकि यदि ऐसा न किया जाय तो बीच बीच में भी वे जड़ें फेंक देती हैं और उस स्थान पर छोटे छोटे कन्द बैठ जाते हैं। चीन देशवाले शाखाओं को मिट्टी पर ही फैलने देते हैं और उनपर जगह जगह मिट्टी चढ़ा देते हैं। ऐसा करने से गराड़ू बहुत बैठते हैं परन्तु छोटे होते हैं। गर्मी के दिनों में सिंचाई की आवश्यकता होती है उस समय पानी देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—पत्तों के पीले पड़ने और सूखने से फ़सल की तैयारी का अनुमान किया जाता है। माघ-फाल्गुन तक फ़सल खोदी जाती है। खोदते समय यह देखना चाहिए कि कन्द कटने न पाये। यदि कट जाय तो उस भाग पर चूना या राख छिड़क देनी चाहिए। ऐसा करने से कटा हुआ भाग जल्दी सूख जाता है और उस जगह से कन्द बिगड़ने नहीं पाते। कुछ दिनों तक रखना हो तो स्वस्थ कन्द ठंडे हवादार वातावरण में रक्खे जा सकते हैं। पैदावार लगभग दो सौ मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण :—कन्द को छीलकर उनकी तरकारी बनायी जाती है। इसकी तरकारी अग्निदीपक और रूखी होती है। बवासीर और कफ़ वालों के लिए लाभप्रद होती है।

सुथनी Kidney-shaped yams

Dioscorea fasciculata

इसकी खेती इसके कन्द के लिए की जाती है जो पौधों के धड़ के निकट पहाड़ी आलू की भाँति बैठते हैं। पौधा आठ नौ इञ्च ऊँचा होता है और आलू की भाँति ज़मीन पर गिरा रहता है। आकार में सुथनी अण्डे जैसी होती है। अनजान व्यक्ति को सुथनी छोटे आलू ही जान पड़ते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दूमट ज़मीन

इसके लिए अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए और खाद डेढ़ सौ मन के क़रीब देना चाहिए।

बोना :—वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मे) में सुथनी खेतों में लगायी जाती है। प्रति एकड़ बारह मन कन्द की आवश्यकता होती है। पौधे से पौधे का अन्तर एक फुट का होना चाहिए इसलिए इतनी दूरी पर कन्द लगाना चाहिए। इसे सीधी खेत में ही लगा देते हैं। क्यारियाँ इत्यादि बनाने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि यह बहुधा बिना सिंचाई के ही पैदा की जाती है। जहाँ सिंचाई देना पड़े वहाँ क्यारियों में लगा सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और जहाँ आवश्यकता हो वहाँ सिंचाई होनी चाहिए। पौधों पर मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती परन्तु यदि कुछ चढ़ायी जा सके तो अच्छा ही है।

फ़सल की तैयारी :—मार्गशीर्ष से माघ तक फ़सल खोदकर काम में लायी जाती है। पैदावार डेढ़ सौ से दो सौ मन तक हो जाती है। दूसरी फ़सल बोने के लिए चुनी हुई सुथनी को मचानों पर हवादार मकानों में रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—कन्द उबाल कर शकरकन्द की भाँति खाये जाते हैं। शकरकन्द से यह कम मीठी होती है। इसकी तरकारी भी बनायी जा सकती है। बहुत से स्थानों में ग़रीब लोग एक समय इसी का भोजन करते हैं। यह रूखी, भारी, कुछ देर से पचने वाली परन्तु बलदायक होती है।

सूरन, ओल Elephant's Foot

Amorphophallus campanulatus

इसकी खेती गुजरात में विशेष होती है। अच्छा सूरन लगातार चार साल के परिश्रम से तैयार होता है। एक एक गाँठ दस दस सेर के अन्दाज़ की हो जाती है। पौधा धड़ रहित और बड़े बड़े पत्ते कटे हुए होते हैं। पत्तों की डंडियाँ बड़ी लम्बी होती हैं जिससे पौधों की ऊँचाई तीन चार फीट की दिखलायी देती है। गाँठ का व्यास एक फुट के क़रीब होता है और आकार हाथी के पाँव का होता है। सम्भव है इसी से इसका नाम Elephant's foot रक्खा गया हो।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद ढाई सौ मन के क़रीब देना ठीक होता है। इसके लिए हरा खाद भी दिया जा सकता है। सूरन के लगाने के साथ साथ सन के बीज छींट दिये जाते हैं और जब सन के पौधे ढाई फीट ऊँचे हो जाते हैं तो उखाड़कर गाड़ देते हैं। प्रथम वर्ष की अपेक्षा दूसरे, तीसरे और चौथे साल की फ़सल को खाद कुछ अधिक देना चाहिए।

बोना :—अच्छे बड़े सूरन के चारों ओर छोटी छोटी पाँच सात गाँठें निकल आती हैं वे ही लगाई जाती हैं। इनका वज़न लगभग एक छटांक के होता है। पहले साल जेठ (मे) में ये गाँठें बारह फीट लम्बी और छः फीट चौड़ी क्यारियों में लगाई जाती

है। गाँठ से गाँठ का अन्तर एक फुट रक्खा जाता है। लगाने के पश्चात् पानी देकर उन्हें पत्तों से ढक देते हैं। वर्षा के प्रारम्भ तक तीन चार बार पानी देना पड़ता है और उसके बाद भी आवश्यकतानुसार दिया जाता है। यह फ़सल पौष (दिसम्बर) तक तैयार होती है। जब पत्ते सूख जाते हैं तो गाँठें खोदकर हवादार मकान में रख ली जाती हैं। इस गाँठों का वज़न दो तीन छटाँक तक हो जाता है। दूसरे साल जेष्ठ मास में फिर ये गाँठें लगाई जाती हैं। इस समय गाँठों के लगाने का अन्तर कुछ बढ़ाकर पन्द्रह से अठारह इञ्च का कर दिया जाता है। ये गाँठें आगामी पौष तक आठ दस छटांक तक वज़न में हो जाती हैं। इन्हें फिर तीसरे जेष्ठ में दो दो फीट की दूरी पर लगा देते हैं। माघ तक वे ढाई ढाई सेर के अन्दाज़ की हो जाती हैं। इनमें से बड़ी बिकने जैसी बेच दी जाती हैं और दूसरी फिर चौथे जेष्ठ में लगा दी जाती हैं जिन्हें माघ में खोदकर बेचते हैं। इस समय ये गाँठें साढ़े तीन फीट से चार फीट की दूरी पर लगायी जाती हैं। जब ये सूरन की गाँठें खोदी जाती हैं तो उस समय तक एक एक गाँठ का वज़न आठ दस सेर के लगभग हो जाता है।

निंदाई और सिंचाई:—आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—अच्छी फ़सल चौथे साल में तैयार होती है परन्तु तीसरे साल में भी तरकारी के लिए काम में लाते हैं। एक एकड़ से क़रीब पाँच सौ मन सूरन प्राप्त किया जा सकता है।

उपयोग और गुण :—कन्द की तरकारी बनायी जाती है। आलू की भाँति उबालकर भी मसाले के साथ इसे खाते हैं। यह रुचिकारक, कफनाशक और अग्निवर्धक होती है। इससे भी अर्श रोग वालों को लाभ पहुँचता है। इसका अचार भी बनाया जाता है।

अरारूट Arrow-root *Maranta arundinacea*

इसकी खेती इसके कन्द के लिए की जाती है। इसके पौधे का धड़ बहुत छोटा होता है और पत्ते बड़े बड़े होते हैं। प्राचीन काल में तीर से लगे हुए घावों पर इसका उपयोग किया जाता था इसी से सम्भव है इसका अंग्रेज़ी नाम ऍरो-रूट रक्खा गया हो।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद ढाई सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होता है।

बोना :—आषाढ़ (जून) में इसकी गाँठें लगायी जाती हैं। एक एकड़ के लिए क़रीब बीस मन गाँठों की आवश्यकता होती है। पौधे से पौधा एक फुट से डेढ़ फुट की दूरी पर लगाना चाहिए। गाँठें लगाते समय इन्हें चार इञ्च गहरी गाड़नी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों पर कुछ मिट्टी चढ़ानी चाहिए और सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए। फूल ज्यों ही आते जायँ तोड़ते रहना चाहिए जिसमें पौधों की शक्ति कन्द की बनावट में लगी रहे।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से आठ दस महीने में फ़सल तैयार होती है। पत्तों का मुर्झाना फ़सल की तैयारी दर्शा देता है। पैदावार दो सौ मन तक हो जाती है जिसमें से पन्द्रह बीस शतांश तक अरारूट चूर्ण प्राप्त किया जा सकता है।

उपयोग और गुण :—गाँठों की तरकारी बनायी जा सकती है। इनसे चूर्ण भी प्राप्त किया जाता है जिससे बिसकुट आदि बनाते हैं। अशक्त, व्याधि से उठे हुए मनुष्यों के लिए इसका सेवन अच्छा होता है। यह हलका और जल्दी पचने वाला होता है।

कचू Juresalem Artichoke *Helianthus tuberosus*

इसकी खेती इसके कन्द के लिए की जाती है जो आलू की भाँति ज़मीन में बैठते हैं। पौधे पाँच छः फीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद:—इसके लिए दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए और खाद दो सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए। गोबर के खाद की कमी कृत्रिम खाद से पूरी की जा सकती है। राख से भी इसको लाभ पहुँचता है।

बोना :—इसके बोने का समय फाल्गुन से आषाढ़ (मार्च से जून) तक है। यदि सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध हो तो जल्दी ही लगा देना चाहिए और नहीं तो असाढ़ में लगाना ठीक होता है। छोटे कच्चू समूचे और बड़ों के टुकड़े लगाना चाहिए। प्रत्येक टुकड़े में कम से कम तीन आँख होनी चाहिए। पंक्तियों

में ढाई से तीन और कच्चू से कच्चू में एक एक फुट का अन्तर रखना ठीक होता है। इन्हें तीन चार इञ्च गहरे लगाना चाहिए। एक एकड़ के लिए पाँच छः मन कच्चू की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय जब पौधे एक फुट की ऊँचाई के हो जायँ तो उनपर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। जब ये चार पाँच फीट ऊँचे हो जाते हैं तो उनमें फूल की डंडियाँ निकल आती हैं जिन्हें तोड़ डालनी चाहिए ताकि पौधों की शक्ति उनके बनाने में नष्ट न हो और वह कन्द की बनावट में लगी रहे। सिंचाई आवश्यकता अनुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—इसकी फ़सल छः सात महीने में तैयार होती है जिसे आवश्यकतानुसार खोद कर काम में लाना चाहिए। कुछ दिनों के लिए रखना हो तो बालू के अन्दर ठंडे हवादार मकान में रख सकते हैं। बीज वाले कन्द भी इसी रीति से रखना चाहिए। इसकी पैदावार क़रीब सौ मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण :—आलू की भांति उबालकर और छील करके तरकारी बनायी जाती है। वह अच्छी स्वादिष्ट और आलू की अपेक्षा अधिक पौष्टिक और जल्दी पचने वाली होती है।

निर्बल व्याधि से उठे हुए मनुष्यों के लिए यह अच्छी होती है। कच्चू को आग में भूँज कर भी खाते हैं।

हल्दी Turmeric *Curcuma longa*

इसकी खेती इसकी गाँठों के लिए की जाती है जिनके चूर्ण

से तरकारियाँ स्वादिष्ट और रंगीन हो जाती हैं। भारतवर्ष में शायद ही कोई ऐसा होगा जो बिना हल्दी की दाल या तरकारी खाता हो। प्रत्येक गृह में इसकी आवश्यकता होती है। इसका पौधा करीब दो फीट ऊँचा होता है।

जमीन जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद दो सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होता है। अन्तिम जुताई के बाद पारियाँ और नालियाँ बना लेनी चाहिए। पारियों में डेढ़ से दो फीट का अन्तर रखना ठीक होता है। इसे कहीं कहीं क्यारियों में भी लगाते हैं। जहाँ सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती ऐसे ही खेतों में लगा देनी चाहिए। क्यारियाँ या पारियाँ बनाने की कोई आवश्यकता नहीं।

बोना :—वर्षा के आरम्भ में आषाढ़ (जून) महीने में इसकी गाँठें लगायी जाती हैं। उपरोक्त रीति से यदि पारियाँ बनायी हों तो उनपर एक एक फुट के अन्तर पर लगाना चाहिए। यदि क्यारियों में बोना हो तो पंक्ति डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। एक एकड़ के लिए दस बारह मन गाँठें लगाई जाती हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों पर थोड़ी मिट्टी चढ़ानी चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—माघ फाल्गुन तक फसल तैयार हो जाती

है। जब ऊपर के पत्ते सूख कर गिर जायँ तब हल्दी को खोद लेना चाहिए। पैदावार करीब बीस पचीस मन सूखी हल्दी हो जाती है।

दूसरी फ़सल लगाने के लिए हल्दी की गाँठों को रखना :— इसके लिए जमीन में गड्ढा खोदकर ठंडे हवादार मकान में चुनी हुई हल्दी की गाँठें गाड़ देनी चाहिए। गढ़ा डेढ़ दो फीट गहरा और आवश्यकता अनुसार लम्बा चौड़ा हो सकता है। ऊपर कम से कम छः इञ्च मिट्टी की तह होनी चाहिए। हल्दी और मिट्टी के बीच में एक पतली तह हल्दी के पत्तों की दे देनी चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसका चूर्ण तरकारियों और दाल इत्यादि भोज्य पदार्थों में रंग लाने और उन्हें स्वादिष्ट करने के लिए काम में लाया जाता है। इससे कपड़े भी रंगे जाते हैं। यह कफ़-नाशक, बादी हटाने वाला और खून को साफ करने वाला होता है। गर्म जल के साथ सेवन करने से पेट का दर्द शीघ्र मिट जाता है। तेल के साथ मिला करके इससे उपटन का काम लेते हैं। कुछ चर्म-रोगों के लिए भी इसका प्रयोग अच्छा होता है। हड्डी को जोड़ने, घाव भरने, और शरीर के रंग को साफ करने के गुण भी इसमें हैं। बिच्छू के काटे हुए भाग को इसका धुँआ दिया जाय तो कुछ आराम पहुँचता है। Hysteric fits (एक प्रकार की मूर्छा) में भी इससे लाभ होता है।

बाजार में जो हल्दी मिलती है वह सूखी होती है। इसे निम्न लिखित रीति से तैयार करते हैं। खेत से उठायी हुई हल्दी को पानी के साथ उबालकर पकाते हैं और जब पक जाती है तब किसी टाट या बोरे के टुकड़े से घिस कर छिलका निकाल देते हैं और फिर अच्छी तरह से सुखा कर बेच देते हैं। दूसरी रीति से तैयार करने के लिए हल्दी को मिट्टी के मटकों में भरकर उनका मुँह बन्द कर देते हैं और फिर उन्हें गरम करते हैं। हल्दी अपनी भाफ से ही पक जाती है। ऐसी हल्दी को भी सुखाकर के छिलका रहित कर लेते हैं।

मद्रास के कृषि विभाग ने एक ऐसी मशीन निकाली है जिससे हल्दी जल्दी साफ हो जाती है। इसमें जालीदार लोहे (Expanded metal) का एक ढोल होता है जिसमें उबाली और सुखायी हुई हल्दी डाल दी जाती है। यह ढोल अपनी धुरी पर घुमाया जाता है। ऐसा करने से हल्दी का छिलका अलग होकर जाली में से नीचे गिर जाता है और साफ हल्दी ढोल में रह जाती है। एक घंटे में लगभग तीन मन हल्दी साफ कर दी जाती है।

अदरक Ginger *Zingiber officinalis*

इसका पौधा एक फुट से डेढ़ फुट तक ऊँचा पतले पत्तों वाला होता है। अदरक की गाँठ ज़मीन में बैठती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिये दुमट या बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब के डालना ठीक

होता है। बढ़ते हुए पौधों को निंदाई के समय कुछ एरंडी की खली का खाद दिया जा सके तो वह भी लाभप्रद होता है। जहाँ पानी देना पड़े वहाँ क्यारियों में लगाना चाहिए।

बोना :—इसके लिए अदरक के छोटे छोटे टुकड़े लगाये जाते हैं। पंक्ति से पंक्ति एक फुट और टुकड़े से टुकड़ा आठ नौ इञ्च की दूरी पर लगाना चाहिए। प्रत्येक टुकड़े में दो तीन आँखें होनी चाहिए। एक एकड़ के लिए दस बारह मन अदरक लगाया जाता है। लगाने के पश्चात् जब तक अंकुरित न हो जाय पत्तों से ढककर रखना चाहिए। इसके लगाने का समय वर्षा ऋतु का प्रारम्भ आषाढ़ (जून) मास है परन्तु कुछ लोग कुछ समय पहले भी लगा देते हैं ऐसी स्थिति में सिंचाई अवश्य करनी होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय कुछ मिट्टी चढ़ानी चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—माघ-फाल्गुन तक फ़सल तैयार हो जाती है परन्तु थोड़े बहुत उपयोग के लिए पहले भी खोद सकते हैं। इसकी पैदावार प्रति एकड़ यदि अच्छा जम जाय तो सौ से डेढ़ सौ मन तक हो जाती है।

दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो अथवा वैसे ही कुछ दिनों के लिए अदरक को रखना हो तो हल्दी की भांति रख सकते हैं। इसके लिए कभी कभी ढेरी को खोलकर देख लेना चाहिए। जब ढेरी गरम मालूम हो तो अदरक को खोल कर दो चार रोज़ के लिए हवा में फैलाकर फिर बन्द कर देना चाहिए।

हल्दी के लिए गड्ढा डेढ़ दो फीट गहरा होता है, लेकिन इसके लिए सिर्फ़ एक फ़ुट गहरा ही ठीक होता है।

उपयोग और गुण :—तरकारियाँ और चटनियाँ इससे स्वादिष्ट की जाती हैं। नीबू के रस के साथ आचार भी बनाया जाता है। यह गर्म, बादी हरने वाला, कफनाशक होता है। सर्दी, बुखार, खाँसी इत्यादि रोगों में इसका सेवन अच्छा होता है।

सोंठ बनाना :—सोंठ अदरक से ही बनायी जाती है। इसके बनाने की कई रीतियाँ हैं जिनमें की एक सरल रीति निम्न लिखित है।

इसके लिए पूर्ण परिपक्व गाँठें लेनी चाहिएँ ऐसी गाँठों से लगभग बीस शतांश सोंठ प्राप्त की जा सकती है। पहले चुनी हुई गाँठें साफ़ धोकर पानी में डाली जाती हैं और जब छिलका ठीक से गल जाता है तो मिट्टी के बर्तन के टुकड़ों से घिसकर निकाल दिया जाता है। फिर धोकर के तीन चार दिन तक हवा में सुखाते हैं। इसके बाद हाथ से घिस कर कुछ और छिलके निकाल दिये जाते हैं। फिर और दो चार दिन सुखा करके दो तीन घंटे के लिए पानी में डालते हैं और जब गल जाता है तो कुछ और छिलके निकालकर सुखा करके बेच देते हैं।

एसपेरेगस Asparagus *Asparagus officinalis*

इसकी खेती इसके डण्ठल (नव पल्लव) के लिए की जाती है। इसके पौधे छोटी छोटी पत्ती वाले तीन चार फ़ीट ऊँचे होते

हैं। इसके लगाने से दूसरे वर्ष बाद तरकारी के योग्य नये डण्ठल निकलते हैं। फूल छोटे छोटे हरे रंग के होते हैं और फल जंगली बेर या बड़ी मटर के दाने के बराबर लाल रंग के होते हैं जिनमें बहुत से बीज होते हैं। अंग्रेज़ लोग इसके डण्ठलों की तरकारी बहुत पसन्द करते हैं। भारतवर्ष में अभी इसका प्रचार विशेष नहीं हुआ है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में हो जाता है परन्तु बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। इसके लिए जुताई अच्छी गहरी होनी चाहिए। खाद भी इसे बहुत सा देना पड़ता है। गोबर, पत्ते, कूड़ा कर्कट इत्यादि मिला करके तीन सौ मन के लगभग देना चाहिए।

बोना :—जब जुताई अच्छी हो जाय तो आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसे बोना चाहिए। इसके बीज सीधे खेतों में बोये जा सकते हैं या नर्सरी में भी बो सकते हैं। नर्सरी में बोये जायँ तो आश्विन में बोकर कार्तिक या मार्गशीर्ष में जब पौधे तीन चार इञ्च ऊँचे हो जायँ तो खेतों में लगाना चाहिए। पौधे से पौधा एक फुट से डेढ़ फुट और पंक्ति से पंक्ति डेढ़ फुट के अन्तर पर होना चाहिए। लगाते समय समतल भूमि में लगाते हैं, बाद में जो मिट्टी चढ़ायी जाती है उससे पारियाँ और नालियाँ बन जाती हैं जिनमें पानी दिया जाता है। प्रति एकड़ ढाई सेर से तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। एक साल के पुराने पौधे भी खोदकर दूसरे स्थान में लगाये जा सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई के समय पौधों पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। प्रति वर्ष पौष में ऊपरी सूखी हुई टहनियों को काटकर फेंक देना चाहिए। कुछ लोग जैसे ही फल पक कर लाल हो जाते हैं शाखाओं को काट डालते हैं और उचित भी वही है। इनके काटने के बाद कुछ दिनों तक जड़ों को थोड़ी खोलकर रखना चाहिए। फिर खूब सड़े हुए गोबर के खाद के साथ दो मन प्रति एकड़ के हिसाब से सूपरफॉसफेट या हड्डी का चूर्ण देना चाहिए (कुछ नमक भी इसे देना ठीक होता है जिसे पानी में घोलकर दे सकते हैं। परन्तु नमक का नहीं देना ही अच्छा है क्योंकि इससे पहली दो एक फ़सल अच्छी आ जाती है। बाद में भूमि बिगड़ जाती है) बाद में मिट्टी चढ़ाकर पानी पूरा देना चाहिए। जिसमें चैत्र-वैशाख में नये डण्ठल निकल आवें।

फ़सल की तैयारी :—पहले दो साल तक इसके डण्ठल तरकारी के योग्य नही होते। तीसरे साल में थोड़े डण्ठल काम में लाये जा सकते हैं। चौथे साल से अच्छी फ़सल आने लगती है। एक बार लगा देने से दस बारह साल तक इसकी फ़सल आती रहती है। जब अच्छे मोटे डण्ठल चार पाँच इञ्च लम्बे निकल आवें तब उन्हें काटते रहना चाहिए। ये बहुत कोमल होते हैं इसलिए हाथ से मोड़कर झटके से तोड़े जा सकते हैं। भारी मिट्टी में उन्हें काटकर निकालना चाहिए। ये डंठल दो प्रकार के होते हैं। एक सफ़ेद दूसरे हरे। जिन डंठलों पर मिट्टी चढ़ी रहती है और जो घास-पात से ढककर रक्खे जाते हैं वे सफ़ेद हो जाते हैं और खुले

रहने वाले हरे हो जाते हैं। इसलिए जैसी माँग हो वैसे ही डण्ठल तैयार करना चाहिए। प्रत्येक वर्ष में आठ दस सप्ताह तक इसकी तरकारी मिल सकती है। बाज़ार में भेजने के पहले धोकर इनकी छँटती कर लेनी चाहिए। जो डण्ठल सीधे, अच्छे मोटे और व्याधि-रहित हों उन्हें उत्तम श्रेणी में और जो दबे हुए हों उन्हें मध्यम और टेढ़े मेढ़े को तीसरी श्रेणी में रखना चाहिए। डण्ठल आधे इञ्च से एक इञ्च मोटे हो सकते हैं। पैदावार प्रति एकड़ क़रीब पचास मन तक हो जाती है।

बीज रखना हो तो अच्छे फलों को चुन कर सुखा करके रख लेना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके डण्ठलों की तरकारी बनायी जाती है जो रुचिकारक, स्वादिष्ट और बलदायक होती है।

गाँठगोभी Knol Khol *Brassica oleracea var. gangylodes*

इसका पौधा लगभग एक फुट ऊँचा होता है। धड़ फूल कर मोटा हो जाता है उसी की तरकारी बनायी जाती है। मिट्टी के ऊपर यह शलजम के आकार की होती है। इसके फूले हुए धड़ पर थोड़े से पत्ते होते हैं। यह गोभी हरे और बैंगनी दो रंग की होती है। बैंगनी की अपेक्षा हरी अच्छी होती है। एक एक गोभी पाव भर से आधे सेर के अन्दाज़ की होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह दुमट और मटियार-दुमट में अच्छी होती है। भूमि की जुताई के समय क़रीब दो सौ मन

सड़ा हुआ खाद प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए। यह क्यारियों में लगायी जाती है इसलिए अन्तिम जुताई के बाद क्यारियाँ बना लेनी चाहिएँ।

बोना :—इसके बीज भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से अक्टोबर) तक नर्सरी में बोये जाते हैं और आश्विन-कार्तिक (अक्टोबर-नवम्बर) में लगाये जाते हैं। बहुत दिनों तक कोमल गोभियाँ प्राप्त होती रहें इसलिए नर्सरी में बीज एक सप्ताह से डेढ़ सप्ताह के अन्तर पर डालना चाहिए। उसी क्रमानुसार खेतों में भी लगाना चाहिए। नर्सरी में चार पाँच इञ्च की दूरी पर पंक्तियों में बीज बोना चाहिए। जब पौधे दो इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उन्हें खेतों में लगा सकते हैं। खेतों में पंक्तियाँ एक फ़ुट से पन्द्रह इञ्च की दूरी पर रखनी चाहिए।

इसके बीज सीधे खेतों में भी बोये जा सकते हैं। दो सेर से ढाई सेर बीज प्रति एकड़ बोना पड़ता है। यदि नर्सरी में बोया जाय तो एक सेर बीज काफ़ी होते हैं। पहाड़ों पर इसे गर्मी में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—खेत में बोयी गयी फ़सल के पौधों की छँटती निंदाई के समय करनी चाहिए। जब पौधों में तीन चार पत्ते आ जाँय तब छाँट देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—माघ-फाल्गुन में फ़सल तैयार हो जाती है। जब गोभियाँ छोटे छोटे बेल या शलजम के आकार की हो

उस समय तरकारी के योग्य होती हैं। बड़ी हो जाने पर उनकी कोमलता नष्ट हो जाती है और स्वाद भी बिगड़ जाता है। पैदावार सौ सवा सौ मन प्रति एकड़ तक हो जाती है।

बीज लेना :—इसके बीज सब जगह पैदा नहीं किये जा सकते। पहाड़ों पर ठण्डे स्थानों में हो सकते हैं। इसलिए बाहर से मँगवाकर ही बोना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके धड़ की तरकारी बनायी जाती है। पत्ते पशुओं को खिलाये जाते हैं। इसकी तरकारी दस्तावर होती है।

—

प्रकरण १२

वे तरकारियाँ जिनके पत्ते और डंडियाँ काम में लायी जाती हैं

प्याज़ Onions *Allium cepa*

प्याज़ दो जाति के होते हैं। एक लाल और दूसरे सफ़ेद छिलके वाले। बङ्गाल में एक जाति का प्याज़ और होता है जो बहुत छोटा लेकिन तेज़ होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह हर प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। इसकी जड़ें गहरी नहीं जातीं इसलिए जुताई गहरी नहीं करनी पड़ती। चार पाँच इञ्च गहरी जुताई काफ़ी होती है। गोबर का खाद इससे पहले वाली फ़सल को ही देना ठीक होता है। लेखक के प्रयोगों में प्याज़ के लिए सरसों की खली का खाद भी विशेष लाभप्रद सिद्ध हुआ है। लगभग दस मन खली प्रति एकड़ डालनी चाहिए। इसके लिए राख का खाद भी अच्छा होता है। दस बारह मन राख प्रति एकड़ के हिसाब से डालनी चाहिए। प्याज़ क्यारियों में लगाये जाते हैं इसलिए अन्तिम जुताई के बाद क्यारियाँ बना लेनी चाहिए।

बोना :—प्याज़ के बीज सीधे खेतों में भी बोये जा सकते हैं परन्तु पानी कम देना पड़े इस अभिप्राय से पहले नर्सरी में

बोना ही उत्तम है। इसमें नर्सरी की भूमि ऊँची नहीं की जाती। बीज क्यारियों में ही बोये जाते हैं। एक एकड़ के लिए ढाई सेर से तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। इसके लगाने का समय पृथक पृथक स्थानों में पृथक पृथक है। पहाड़ों पर फाल्गुन से जेष्ठ (फेब्रुअरी से मे) तक, बङ्गाल में भाद्रपद से मार्गशीर्ष (अगस्त से नवम्बर) तक, बिहार में अगहन-पौष (नवम्बर-दिसम्बर) से माघ-फाल्गुन (जनवरी-फेब्रुअरी) तक और बम्बई, मद्रास आदि में कार्तिक से पौष (अक्टूबर से दिसम्बर) तक है।

बीज नर्सरी में गिराने के पहले उसकी भूमि सींचकर मिट्टी में यथेष्ट तरी लायी जाती है। दो तीन दिन बाद उस मिट्टी को गोड़कर उसमें बीज छींट दिये जाते हैं। फिर उन्हें मिट्टी में मिला कर केला या और किसी पेड़ के पत्तों से ढकना ठीक होता है। ऐसा करने से गर्मी की वजह से बीज जल्दी अङ्कुर फेंक देते हैं। जब बीज अंकुरित हो जायँ तो पत्तों को हटा लेना चाहिए। फिर पानी देते रहने से छः सात सप्ताह में पौधे रोपने योग्य हो जाते हैं।

रोपते समय छोटी जाति वाले प्याज के पौधों को चार पाँच इञ्च की दूरी पर और बड़ी जाति वालों को छः छः इञ्च की दूरी पर लगाना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पौधों की जड़ें सीधी रहें और मुड़ने न पावें। उन्हें इतने ही गहरे रोपना चाहिए कि प्याज बनने वाला आधा भाग मिट्टी में और आधा बाहर रहे।

गुजरात में सूरत की तरफ छोटे छोटे प्याज़ भी लगाये जाते हैं जो सिंचाई से बड़े हो जाते हैं। ऐसे प्याज़ बीज से लगाये गये प्याज़ की अपेक्षा कम स्वादिष्ट होते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—रोपने के बाद पौधों को कुछ दिनों तक ध्यानपूर्वक देखते रहना चाहिए। जिन्हें कीट काट दें उनके स्थान पर नये पौधे लगा देना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के कुछ दिन बाद ज़मीन की पपड़ी तोड़ दी जाय तो पानी का बचाव और प्याज़ की बाढ़ अच्छी होती है। जाड़े के दिनों में आठ दस दिन और गर्मी के दिनों में छः सात दिन के अन्तर पर पानी देना चाहिए। प्याज़ में फूल आने लगे तो उन्हें तोड़ डालना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से छः सात महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। जब पत्ते सूखकर ज़मीन पर झुक जायँ तो समझना चाहिए कि प्याज़ उठाने योग्य हो गये। नित्य के उपयोग के किए पहले भी उखाड़ सकते हैं। उखाड़ने के पश्चात् सुखाकर हवादार मकान में फैलाकर रखना चाहिए। एक पर्त छः सात इञ्च से अधिक मोटी नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक दो पर्त के बीच में कम से कम दो इञ्च जगह हवा के लिए रखनी चाहिए। प्याज़ जब बाहर भेजना हो तो टोकरियों में भरकर भेजना ठीक होता है। इसकी पैदावार दो सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती है।

बीज के लिए प्याज़ लगाने की रीति :—जब प्याज़ की

फ़सल उठायी जाय उसी समय अच्छे अच्छे प्याज़ चुनकर रख लेना चाहिए। प्याज़ गोदाम में अंकुर फेंक देते हैं। इन अंकुरित प्याज़ को कार्तिक या मार्गशीर्ष में एक एक फ़ुट के अन्तर पर क्यारियों में लगा देना चाहिए। कुछ लोग प्याज़ के ऊपरी आधे भाग को काटकर फेंक देते हैं और नीचे के आधे भाग को लगाते हैं। लगाने के पश्चात् बराबर आवश्यकतानुसार पानी देते रहने से इनके बीज चैत्र-वैशाख तक तैयार हो जाते हैं। बीज सुखाकर ऐसे बर्तन में रखना चाहिए जिसमें हवा न लग सके क्योंकि हवा की तरी से ये बहुत जल्दी बिगड़ जाते हैं।

उपयोग और गुण :—प्याज़ से तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। ग़रीब लोग इसे कच्चा भी खाते हैं। यह पाचक, बलवर्द्धक, उत्तेजक, कफ़ और ज्वरनाशक, सरदी और खाँसी को कम करने वाला तथा अधिक पेशाब लाने वाला होता है। सिरके के साथ खाने से कँवल (Jaundice) रोग, बढ़ी हुई तिल्ली और बादी में लाभदायक होता है। स्कर्वी भी इसके सेवन से छूट जाती है। चीनी के साथ इसका रस खाया जाय तो खूनी बवासीर अच्छा होता है। कान के दर्द को रोकने के लिए भी इसका रस अच्छा माना गया है। हैज़े के दिनों में इसका उपयोग अच्छा होता है।

लहसुन Garlic *Allium sativum*

इसका पौधा प्याज़ के पौधे से कुछ छोटा होता है और लहसुन की गाँठ भी छोटी होती है। प्याज़ में जैसे छिलके की

पत्ती होती है वैसी इसमें नहीं होती। इसमें पत्र रूपान्तरित कलियाँ होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में हो जाता है। इसे अकेला बहुत कम बोते हैं। दूसरी फ़सल के साथ पारियों पर इधर उधर लगा देने से यह हो जाता है। यदि इसे ही लगाना हो तो प्याज़ के लिए जिस रीति से ज़मीन तैयार की जाती है उसी भांति इसके लिए भी करनी चाहिए। खाद इससे पहली फ़सल को ही देना ठीक होता है।

बोना :—इसके बोने का समय भाद्रपद-आश्विन (अगस्त-सेप्टेम्बर) है। पहाड़ों पर गर्मी में ही लगाना चाहिए। प्याज़ की भाँति इसके बीज नहीं बोये जाते और न नर्सरी की आवश्यकता होती है। यह सीधा खेतों में ही लगाया जाता है। लहसुन की कलियों को पृथक पृथक करके रोप देते हैं। मेथी, अफ़ीम, धनिया इत्यादि की क्यारियों की पारियों पर छः छः इञ्च की दूरी पर इसकी कलियाँ लगा दी जाती हैं। सिर्फ इसे ही लगाना हो तो छः छः इञ्च की दूरी पर लगा देना चाहिए। जहाँ पानी देने की आवश्यकता होती है वहाँ क्यारियों में लगाते हैं। एक एकड़ के लिए आठ दस मन कलियों की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—फाल्गुन-चैत्र तक फ़सल तैयार हो

जाती है। जब पत्ते सूखने लगें तब इसे खोद लेते हैं। इसकी पैदावार पचास से पचहत्तर मन प्रति एकड़ हो जाती है।

लहसुन को रखने की रीति :—जो लहसुन बाज़ार में भेजा जाता है उसे कुछ सुखाकर ऊपर के पत्ते काट डालते हैं और फिर बोरों में भरकर भेज देते हैं। बीज के लिए जो रक्खा जाय उसे पत्ते सहित रखना चाहिए। बहुत से लहसुन एक साथ लेकर उनके पत्ते गूँथ दिये जाते हैं और फिर वे हवादार मकान में लटका दिये जाते हैं। इस प्रकार से रक्खा हुआ लहसुन बहुत दिनों तक भली भाँति रह जाता है।

उपयोग और गुण :—तरकारियों और चटनियों को स्वादिष्ट करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। कई प्रकार की व्याधियों में यह औषधि का काम देता है। इसका तेल लकवा और बादी में काम आता है। बुखार, खाँसी, सरदी, पेट का दर्द इत्यादि रोगों पर भी लहसुन का उपयोग किया जाता है। सिरके के साथ खाने से गला साफ होता है। सरसों और नारियल के तेल के साथ लगाने से चर्म-रोग और कर्ण-रोग मिट जाते हैं। क़रीब क़रीब प्याज़ के सब गुण इसमें पाये जाते हैं।

लीक Leek *Allium Porrum*

इसकी खेती इसके पत्ते और धड़ के लिए की जाती है जिनसे तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। इसके पौधे क़रीब दो फीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। प्याज़ के लिए जिस प्रकार खेत तैयार किये जाते हैं उसी भाँति इसके लिए भी करना चाहिए। इस पर मिट्टी भी चढ़ायी जाती है इसलिए प्याज की अपेक्षा कुछ अधिक दूरी पर लगायी जाती है।

बोना :—इसके बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं और जब पौधे चार पाँच इञ्च ऊँचे हो जाते हैं तो क्यारियों में लगा देते हैं। बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है। पहाड़ों पर गर्मी में बोते हैं। क़रीब दो सेर बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है पौधे से पौधा छः इञ्च और पंक्तियाँ पन्द्रह से अठारह इञ्च की दूरी पर होनी चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के साथ साथ जब पौधे डेढ़ दो महीने के हो जायँ तब उन पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। मिट्टी चढ़ाने से पत्ते सफ़ेद बने रहते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—चैत्र-वैशाख (मार्च-एप्रिल) तक फ़सल तैयार हो जाती है।

उपयोग :—प्याज़ का जैसा उपयोग किया जाता है वैसा ही तरकारियों को स्वादिष्ट करने के लिए इसका उपयोग करते हैं।

शेलॉट Shallot *Allium ascolonicum*

लहसुन की भाँति इसमें भी कलियाँ होती हैं और इसकी खेती भी वैसे ही की जाती है। अफ़ग़ानिस्तान में यह बहुतायत

से पाया जाता है। वहाँ के लोग इसके पत्ते का भी उपयोग करते हैं। एक ही बार लगायी हुई फ़सल उसी स्थान में पचीस तीस साल तक रहती है और प्रतिवर्ष उससे तीन बार पत्ते काटे जाते हैं।

शाइव Chive *Allium schoenoprasum*

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है जिनसे तर-कारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। भारतवर्ष में यह अच्छी नहीं होती। विलायत में और विशेषतः स्कॉटलैंड में बहुतायत से होती है। प्याज़ से यह कुछ कम तेज़ होती है।

प्याज़ की भाँति ज़मीन तैयार करके इसकी खूँटी (पुराने पौधों को जड़ सहित चीरकर लगाना) लगायी जाती है। यह एक ही स्थान में चार पाँच साल तक रक्खी जाती है। पत्ते जैसे जैसे तैयार होते हैं काटकर काम में लाये जाते हैं।

सीवाल Welch onion *Allium fistulosum*

यह भी एक जाति का प्याज़ होता है जिसे बीज से या शाइव की भाँति खूँटी से पैदा करते हैं। एक बार लगाकर दो साल तक फ़सल लेते रहते हैं। इसके पत्ते जैसे जैसे तैयार होते हैं काम में लाये जाते हैं।

सलाद की फ़सलें

पार्सली, सेलेरी, लेट्यूस, शिकोरी, शेरविल, क्रेस, कान सलाद, एन्डाईव इत्यादि फ़सलें सलाद की फ़सलें कही जाती हैं।

अंग्रेज लोग इनसे सलाद बनाते हैं। सलाद एक प्रकार का अचार समझना चाहिए। कच्चे पत्तों को काटकर सिरका, नमक और कुछ मसालों के साथ वैसे ही उपयोग किया जाता है। अभी इनकी खेती भारतवर्ष में बहुतायत से नहीं होती। अंग्रेजों के निजी बाग़ीचों में इन्हें स्थान मिल जाता है।

अजमूद, पार्सली Parsely *Petroselinum hortense*

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में हो जाती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ सवा सौ मन डाल सकते हैं।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टूबर) में क्यारियों में इसके बीज बोये जाते हैं। पंक्ति से पंक्ति एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। बीज नर्सरी में भी बोये जा सकते हैं। और जब पौधे रोपने योग्य हो जायँ तो खेतों में लगा सकते हैं। प्रति एकड़ डेढ़ सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई:—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें चार चार इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—क़रीब चार महीने में पौधे उपयोग के योग्य हो जाते हैं। आवश्यकतानुसार पत्ते काटते जाना चाहिए।

उपयोग :—पत्तों से सलाद बनायी जाती है। अंग्रेजों की

टेबल पर भोज्य पदार्थों की सजावट के लिए भी इन्हें काम में लाते हैं। इनकी तरकारी भी बन सकती है, दूसरी तरकारियों को स्वादिष्ट करने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है।

सेलेरी Celery *Apium graveolens*

इसकी खेती इसकी डंडी के लिए की जाती है जो कोमल, मोटी और कुछ चरपरी होती है। यह दो प्रकार की होती है, एक लाल डंडी वाली और दूसरी सफेद डंडी वाली।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई साधारण गहरी परन्तु अच्छी महीन होनी चाहिए। खाद सौ सवा सौ मन डालना ठीक होता है।

बोना :—एक एकड़ के लिए तीन चार छटाँक बीज की आवश्यकता होती है। बीज पहले नर्सरी में आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टूबर) में बोकर जब पौधे तीन चार इञ्च ऊँचे हो जायँ तो खेतों में आठ नौ इञ्च की दूरी पर लगा देना चाहिए। पंक्तियों में तीन-चार फीट का अन्तर ठीक होता है। इसके बीज बहुत छोटे और पौधे बड़े कोमल होते हैं इसलिए नर्सरी में बहुत ध्यान रखना चाहिए। नर्सरी में बोने के प्रथम यदि बीज भिगोकर गीले कपड़े में गर्म स्थान में रक्खे जायँ तो वे जल्दी अंकुर फेंक देते हैं। अंकुरित हो जाने पर उन्हें नर्सरी में बोना चाहिए। भिगे हुए बीज एक दूसरे से चिपके हुए न रहें इसलिए उनमें राख मिला देना चाहिए कि जिससे पानी सूख जाय और बीज बिखर जायँ।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों पर की आस-पास की शाखाओं को तोड़ते रहना चाहिए। जब पौधे बढ़कर एक फुट ऊँचे हो जायँ तो नीचे के कुछ पुराने पत्ते तोड़ देना चाहिए और बाकी के पत्तों को एकट्ठे खड़े करके उनपर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। ज्यों ज्यों पत्ते बढ़ते जायँ हर सप्ताह में मिट्टी चढ़ाते जाना चाहिए। मिट्टी इस रीति से चढ़ायी जाय कि जिसमें पत्तों का थोड़ा सा भाग खुला रहे। पत्तों पर मिट्टी चढ़ाने का अभिप्राय यह होता है कि वे सफेद और मुलायम बने रहें। जहाँ गर्मी विशेष पड़ती है वहाँ पत्तों के सड़ जाने का भय रहता है। ऐसी जगह में लकड़ी के तख्ते या काग़ज़ के कूट पौधों के दोनों ओर बाँध दिये जाते हैं।

फ़सल की तैयारी :—ज्यों ज्यों डंडियाँ काम के योग्य होती जायँ तोड़कर काम में ले आना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके पत्ते की डंडी विशेषतः सलाद बनाने के काम में लायी जाती है। इसकी तरकारी भी बन सकती है। यह पाचक, दस्तावर और बल-वर्धक होती है। गठिया की शिकायत वालों को इसका सेवन करना चाहिए।

लेट्यूस Letttuce *Lactuca sativa*

सलाद बनाने के लिए इसके पत्तों की बहुत चाह रहती है। यह कई जाति की होती है, कुछ खुली हुई बन्धा गोभी के समान इसके पत्ते जमे हुए होते हैं। किसी किसी जाति में सब पत्ते खुले हुए होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। जुताई साधारण होनी चाहिए। खाद सवा सौ से डेढ़ सौ मन तक इसके लिए डालना चाहिए।

बोना :—डेढ़ सेर से दो सेर बीज प्रति एकड़ बोये जाते हैं। नर्सरी में बोकर भी पौधों को खेतों में लगा सकते हैं। बोने का समय आश्विन से मार्गशीर्ष (सेप्टेम्बर से दिसम्बर) तक है। पहाड़ों पर फाल्गुन से ज्येष्ठ (मार्च से मे) तक बोना चाहिए। पूना, बेंगलोर आदि स्थानों में गर्मी की ऋतु को छोड़कर कभी भी बो सकते हैं। जल्दी तैयार हो जाने वाली फ़सल को क्यारियों में चार पाँच इञ्च की दूरी पर बोना चाहिए। देर से होने वाली के लिए नौ इञ्च से एक फुट का अन्तर ठीक होता है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय ज्यों ज्यों पत्ते बढ़ते जायँ उनको एक साथ बाँधते रहना चाहिए जिसमें कोमल रहें। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—ज्यों ज्यों पौधे तैयार होते जायँ बड़ों को उखाड़कर छोटों को बढ़ने के लिए छोड़ देना चाहिए। घर-खर्च के लिए जैसे जैसे पौधे बढ़ते जायँ काम में लाये जा सकते हैं। जो फ़सल बेची जाय उसे पूरी तरह तैयार होने देना चाहिए। काटते समय नीचे के दो एक पत्ते छोड़कर काटना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके पत्ते सलाद बनाने के काम में लाये जाते हैं। इनकी तरकारी भी बनायी जाती है। यह ठण्डी और रक्त को साफ़ करने वाली होती है।

कशनी Chicory *Cichorium intybus*

इसकी खेती इसके पत्ते और जड़ दोनों के लिए की जाती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। ज़मीन की जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ मन के क़रीब डाल सकते हैं।

बोना :—आश्विन (सेप्टेम्बर) में इसके बीज खेतों में बोये जा सकते हैं। पहाड़ों पर गर्मी में बोना चाहिए। पंक्तियाँ बारह से पन्द्रह इञ्च की दूरी पर होनी चाहिए। एक एकड़ के लिए क़रीब दो सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें छः छः इञ्च के अन्तर पर कर देना चाहिए। पत्तों को सफ़ेद करने के लिए उन्हें गमले या अन्य किसी बर्तन से ढकना पड़ता है। ढकने के समय से दो सप्ताह में पत्ते सफ़ेद हो जाते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के तीन चार महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। तरकारी के लिए तो पहले भी काम में लायी जा सकती है परन्तु सलाद के लिए तैयार करने में कुछ समय अधिक लगता है।

उपयोग और गुण :—हरे पत्तों की तरकारी बनायी जाती है। सफ़ेद किये हुए पत्ते सलाद के काम में आते हैं। शिकारी पशुओं को भी खिलायी जाती है। जब पशुओं के लिए बोते हैं तो बीज

खेत में छींटकर बो दिए जाते हैं। पत्तों की सलाद बलदायक और ठण्डी होती है।

शेरविल Chervil *Anthricus cerefolium*

यह दो प्रकार की होती है। एक वह जिसके पत्ते काम में लाये जाते हैं और दूसरी वह जिसकी जड़ों का उपयोग किया जाता है। इन्हें भी कहीं कहीं निजी बाग़ीचों में स्थान मिल जाता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—पत्ते वाली के लिए दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जड़ वाली को बलुआ दुमट में लगानी चाहिए। ज़मीन की जुताई पहली के लिए पाँच छः इञ्च और दूसरी के लिए छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद एक सौ मन के लगभग देना ठीक होता है।

बोना :—पत्ते वाली शेरविल आश्विन से माघ (सेप्टेम्बर से जनवरी) तक लगायी जा सकती है। चूँकि छोटे छोटे पत्ते ही काम के योग्य रहते हैं, इसे पन्द्रह दिन के अन्तर पर थोड़ी थोड़ी बोनी चाहिए। ऐसा करने से कुछ समय तक यह चलती रहती है। जड़ वाली कार्तिक (अक्टोबर) में बोना चाहिए। दोनों के बीज छींटकर भी बो सकते हैं या पंक्तियों में भी लगा सकते हैं। क़रीब दो सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती की जाती है। उन्हें सात आठ इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—पत्ते वाली सात आठ सप्ताह में उपयोग के योग्य हो जाती है। दूसरी को कुछ समय अधिक लगता है।

उपयोग :—पहली जिसके पत्ते सलाद के काम में लाये जाते हैं उसे अन्य तरकारियों को स्वादिष्ट करने के लिए भी काम में लाते हैं। दूसरी की जड़ों का उपयोग किया जाता है। यह गाजर से कुछ छोटी और भूरे रंग की होती है। अन्दर का गूदा पीले रंग का होता है। स्वाद में यह शकरकन्द जैसी होती है।

क्रेस Cress *Lipidium sativum*

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो सकती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होता है।

बोना :—पहाड़ों पर गर्मी और बरसात में और अन्य स्थानों में कभी भी लगा सकते हैं। एक एकड़ के लिए क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। इसे क्यारियों में बोना ठीक होता है। पंक्ति से पंक्ति एक फुट के अन्तर पर रखनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों को छाँट कर उन्हें छः छः इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से तीन चार सप्ताह में पत्ते काटने योग्य हो जाते हैं।

उपयोग :—पत्तों की सलाद बनाई जाती है। अँग्रेज़ों की

टेबल पर भोज्य पदार्थों की सजावट के लिए भी ये काम में लाये जाते हैं। इनकी तरकारी भी बनायी जा सकती है।

कार्न सलाद Corn salad *Valerianella olitaria*

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए दुमट और मटियार दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद एक सौ मन के क़रीब देना ठीक होता है।

बोना :—बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है। पंक्तियाँ आठ नौ इञ्च की दूरी पर होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उनमें छः छः इञ्च का अन्तर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से सात आठ सप्ताह बाद इसके पत्ते उपयोग के योग्य हो जाते हैं। ज्यों ज्यों वे बड़े होते जायँ तोड़कर काम में लाये जा सकते हैं।

उपयोग :—पत्तों की सलाद बनाई जाती है। तरकारी के लिए भी इनका उपयोग किया जा सकता है।

एन्डाईव Endive *Cichorium endiva*

इसमें लेट्यूस की अपेक्षा शीत सहन करने की शक्ति अधिक होती है इसलिए जहाँ सर्दी विशेष पड़ती हो वहाँ भी इसकी खेती हो सकती है। यह दो प्रकार की होती है। एक के पत्ते छल्लेदार अर्थात् मुड़े हुए और दूसरी के चौड़े होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट ज़मीन में साधारण जुताई से यह हो जाती है। खाद एक सौ मन के क़रीब डालना चाहिए।

बोना :—कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बीज नर्सरी में डाले जाते हैं। जब तीन चार पत्ते निकल आवें तब क्यारियों में लगा देना चाहिए। पौधे से पौधा एक फुट की दूरी पर और पंक्तियों में भी उतना ही अन्तर होना चाहिए। एक एकड़ के लिये क़रीब डेढ़ सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पत्तों को सफ़ेद करने की क्रिया की ओर ध्यान देना चाहिए। जब पत्ते पूरे बढ़ जायँ तो उन्हें एक साथ मिलाकर बाँध देना चाहिए। कभी कभी बाँधकर सूखे घास से भी ढक देते हैं। मिट्टी के गमले या अन्य बर्तन से ढक देने से भी यह कार्य हो जाता है। दो तीन सप्ताह में अच्छी सफ़ेदी आ जाती है।

फ़सल की तैयारी :—रोपने के समय से सात आठ सप्ताह में फ़सल तैयार हो जाती है।

उपयोग और गुण :—इसका उपयोग बहुधा सलाद के लिए ही किया जाता है परन्तु तरकारी भी बनायी जा सकती है। इसके पत्ते और बीज ठण्डे और पित्तनाशक माने गये हैं। जड़, गरम, उत्तेजक और बुखार को हटाने वाली होती है।

कर्डून Cardoon *Cynara cardunculus*

इसकी खेती इसके पत्तों के बीच की डंडी (Midrid) के

लिए की जाती है। फ्रान्स वाले इसे बहुत पसन्द करते हैं। इसके पौधे चार पाँच फ़ीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए दुमट ज़मीन, साधारण जुताई और क़रीब एक सौ मन खाद होना चाहिए।

बोना :—बीज आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बो सकते हैं। पंक्तियाँ चार चार फीट के अन्तर पर होनी चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई के समय पौधों की छँटनी करके उन्हें एक एक फुट के अन्तर पर कर देना चाहिए। पौधों पर मिट्टी भी चढ़ायी जाती है। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—ज्यों ज्यों पत्ते बड़े होते जायँ काट कर उनकी डण्डी काम में लायी जा सकती है। कभी कभी पत्तों को सफ़ेद करने के लिए एक साथ बाँध देते हैं।

उपयोग :—पत्तों के बीच वाली डंडी का रसा बनाया जाता है। इसकी सलाद भी बनायी जा सकती है।

रूबर्ब, रेवन्द चीनी Rhubarb *Rheumrha ponticum*

इसकी खेती पत्तों की डंडी के लिए की जाती है जो भूमि की उर्वरा शक्ति अनुसार दो ढाई फ़ीट से लेकर पाँच छः फीट ऊँची हो जाती है। यह सिर्फ़ पहाड़ों पर ही हो सकता है और कई साल तक एक ही स्थान में रहता है इसलिए इसे एकान्त में ऐसी ही फ़सलों के निकट स्थान देना चाहिए जो कई साल तक

रहती हो। इसके पत्ते अर्वी की भाँति जमीन की सतह के निकट से ही निकलते है। फूल वाली डंडी चार पाँच फीट ऊँची हो जाती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन के लगभग देना ठीक होता है।

बोना :—इसे बीज से पैदा कर सकते हैं परन्तु बहुधा ज़मीन में होने वाले भाग (कन्द) को ही लगाते हैं जिसमें इसके गुण में परिवर्तन न हो। प्रत्येक टुकड़े में दो आँख होनी चाहिए। लगाते समय पंक्तियाँ चार फीट की दूरी पर और कन्द दो दो फीट की दूरी पर होने चाहिएँ। बीज से पैदा किया जाय तो प्रति एकड़ दो सेर बीज की आवश्यकता होती है। पहाड़ों पर फाल्गुन-चैत्र में लगाते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय फूल वाली डंडियों को तोड़ते रहना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—पौधे अच्छे शक्तिवान हो जायँ इसलिए दो साल तक पत्ते बिलकुल नहीं काटे जाते। तीसरे साल में कुछ काटे जाते हैं और बाद में मौसम पर दो-ढाई महीने तक पत्ते की डंडियाँ पकड़कर खींच ली जाती हैं।

उपयोग और गुण :—पत्तों की डंडियाँ चटनी, समोसे आदि बनाने के काम में लायी जाती हैं। ये कुछ दस्तावर होती हैं।

चार्ड Chard *Beta vulgaris Var. cicla*

इसके पत्ते और पत्तों की डंडियाँ दोनों काम में लाये जाते हैं। डंडी कोमल और मोटी होती है। पत्ते कुछ मुड़े हुए होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—साधारण जुताई और क़रीब एक सौ मन खाद से यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है।

बोना :—इसे आश्विन (सेप्टेम्बर) मास में डेढ़ डेढ़ फुट की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें एक एक फुट के अन्तर पर कर देना चाहिए। जो पौधे उखाड़े जायँ उनकी तरकारी बनायी जा सकती है। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ देनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—ज्यों ज्यों पौधे बढ़ते जायँ उनका उपयोग करते रहना चाहिए। बोने के समय से ढाई महीने में फ़सल उपयोग के योग्य हो जाती है।

उपयोग :—पत्ते और कोमल शाखाओं की तरकारी बनायी जाती है।

ओरेक Orach *Atriplex hortensis*

इसकी खेती इसके पत्तों और नव पल्लवों के लिए की जाती है। यह सफ़ेद, हरी और लाल ऐसी तीन रंग की होती है। लाल और सफ़ेद की अपेक्षा हरी की बाढ़ अच्छी होती है। इसके पौधे चार पाँच फ़ीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—साधारण जुताई और एक सौ मन खाद से यह हर प्रकार की ज़मीन में हो जाती है।

बोना :—आविश्न में बीज क्यारियों में बोये जाते हैं। पंक्ति से पंक्ति डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई:—निंदाई के समय पौधों की छँटती करते रहना चाहिए। अन्तिम छँटती के समय पौधों में एक एक फुट का अन्तर कर देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से दो ढाई महीने में फ़सल तैयार हो जाती है।

उपयोग :—पत्ते और नव पल्लव की तरकारी बनायी जाती है।

कोलार्ड्स Collards *Brassica oleracea Var. acephala*

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है जो एक गुच्छे के रूप में पौधे के सिर पर होते हैं। ये क़रीब-क़रीब केल जैसे होते हैं। बंधा गोभी की अपेक्षा इसमें गर्मी सहन करने की शक्ति अधिक रहती है। पौधे दो तीन फ़ीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट या दुमट जमीन इसके लिए अच्छी होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद दो सौ मन के करीब डालना ठीक होता है।

बोना :—आश्विन (सेप्टेम्बर) में बीज नर्सरी में डाल कर कार्तिक में पौधों को खेत में रोपना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति तीन

फ़ीट और पौधे से पौधा दो फ़ीट की दूरी पर होना चाहिए। प्रति एकड़ करीब तीन छटाँक बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—लगभग तीन चार महीने में फ़सल तैयार हो जाती है।

उपयोग :—पौधों के सिर पर जो पत्तों के गुच्छे बन जाते हैं उनकी तरकारी बनायी जाती है।

डेन्डेलियन Dandelion *Taraxacum officinale*

इसकी खेती पालक की खेती की भाँति होती है। इसके पत्ते भी बाँधकर या ढककर सफ़ेद किये जाते हैं। इसके लिए बलुआ जमीन अच्छी है। पौधे से पौधे का अन्तर एक फुट और पंक्तियाँ डेढ़ डेढ़ फुट की दूरी पर होनी चाहिएँ।

बँधा गोभी, करमकल्ला Cabbage

Brassica oleracea V

यह एक जाति की गोभी है जिसके पत्तों का उपयोग तरकारी के लिए किया जाता है। इसके पत्ते मुड़े हुए एक दूसरे पर पर्तवार जमे रहते हैं। यह दो प्रकार की होती है, एक जल्दी तैयार होने वाली और दूसरी देर से आने वाली। आकार में भी यह दो प्रकार की होती है, एक गोल और चपटी और दूसरी गोल और उलटे लट्टू के आकार की।

ज़मीन, जुताई और खाद :—जल्दी तैयार होने वाली के लिए बलुआ-दुमट और देर से तैयार होने वाली के लिए दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। भूमि की जुताई लगभग आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। रोपने के महीने डेढ़ महीने पहले ही अच्छा सड़ा हुआ गोबर का खाद लगभग तीन सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना चाहिए। इसके लिए पोटाश का खाद भी लाभदायक होता है जिसके लिए अन्य खाद न हो तो राख अवश्य देनी चाहिए। गोबर के खाद की कमी सड़ी हुई खली के खाद से पूरी की जा सकती है।

बोना :—भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से अक्टोबर) तक इसके बीज नर्सरी में डाले जाते हैं। पहाड़ों पर गर्मी में डालना चाहिए। पूना, बेंगलोर आदि स्थानों में भाद्रपद से माघ तक बीज डाल सकते हैं। दो तीन छटाँक बीज एक एकड़ के लिए काफ़ी होते हैं। एक छटाँक बीज पचास वर्ग फ़ीट की नर्सरी में डालना चाहिए। पाँच छः सप्ताह की बाढ़ के बाद पौधे खेतों में लगा सकते हैं। इन्हें थोड़ी सी ऊँची पारियों पर लगाना ठीक होता है। छोटी जाति वाली गोभियों के लिए पौधे से पौधा एक फ़ुट और पंक्ति से पंक्ति डेढ़ फ़ुट के अन्तर पर होनी चाहिए। बड़ी के लिए डेढ़ फ़ुट और दो फ़ीट का अन्तर ठीक होता है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की जड़ों पर थोड़ी मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। ऐसा करने से पानी देने की नालियाँ भी बन जाती हैं और पौधों को भी लाभ पहुँचता है।

फ़सल की तैयारी :—जल्दी तैयार होने वाली गोभी रोपने के समय से ढाई तीन महीने में तरकारी के योग्य हो जाती है। देर से होने वाली को चार पाँच महीने लगते हैं। पत्तों की गठन, उनके रंग तथा ऊपरी पत्तों के मोड़ से इनकी तैयारी जानी जा सकती है। कुछ दिनों तक इसकी तरकारी बराबर मिलती रहे इसलिए नर्सरी में बीज कुछ आगे पीछे डालना चाहिए। ऐसा करने से माघ से चैत्र तक इसकी तरकारी प्राप्त की जा सकती है। पैदावार डेढ़ सौ से ढाई सौ मन गोभी हो जाती है। यदि किसी कारण से कुछ दिनों तक रखना पड़े तो जड़ समेत उखाड़कर जड़ ऊपर और सिर नीचे करके रखना चाहिए। ऊपर से कुछ सूखी घास रखकर मिट्टी डाल देनी चाहिए।

बीज की तैयारी :—इसके बीज सब जगह नहीं तैयार किये जा सकते। पहाड़ों पर ठण्डे स्थानों में हो सकते हैं। चुनी हुई गोभियाँ जब काफी बढ़ जायँ तो उस स्थान से हटाकर दूसरी जगह अच्छी उपजाऊ ज़मीन में लगा देनी चाहिए। लग जाने पर ये फूट जाती हैं इसमें से पतली पतली शाखाएँ निकलती हैं जिनमें फूल और फ़ल आते हैं बीज बन्द बर्तन में नेफथलीन की गोलियों के साथ रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके पत्ते तरकारी के काम में लाये जाते हैं। सिरके के साथ अचार भी बनता है। पत्तों को महीन काटकर नमक के साथ बन्द बर्तन में रखने से वे कुछ समय तक सुरक्षित रह सकते हैं। हवा का आवागमन उस बर्तन में नहीं

होने देना चाहिए। जब आवश्यकता हो निकालकर धो करके तर-कारी बनायी जा सकती है। अंग्रेज़ लोग इस नमकीन पदार्थ को बिना पकाये ही खाते हैं। जो गोभियाँ कुछ कठोर हो जाती हैं वे पशुओं को खिलायी जा सकती हैं। इस गोभी की तरकारी रुचि-कारक, दस्तावर और स्वास्थ्यदायी होती है। इनके सेवन से स्कर्वी की व्याधि दूर होती है और कुछ चर्म-रोग भी मिट जाते हैं।

गोभी को सुखाकर रखना :—ऊपर के कुछ पत्ते अलग हटा देना चाहिए व बीच के पत्तों की कुट्टी करके एक मिनिट तक उब-लते हुए पानी में जिसमें १ शतांश सोडा पड़ा हो डालना चाहिए बाद में सुखा लेना चाहिए कृत्रिम गर्म हवा काम में लाना हो तो उसका ताप परिमाण ६० से ६५ शतांश तक होना चाहिए। सूखी हुई गोभी को जल्दी बर्तनों में बन्द कर देना चाहिए।

चीनी गोभी Chinese cabbage *Brassica chinensis*

इसकी खेती चीन में बहुत होती है। यह बँधा गोभी जैसी ही होती है परन्तु चपटी न होकर ऊँची और गोल होती है। बँधा गोभी की भाँति ही इसकी खेती भी की जा सकती है। इसके लिए ठण्डा जलवायु होना चाहिए इसलिए जाड़े में ही इसकी खेती हो सकती है। नर्सरी में इसके पौधों को बँधा गोभी की भाँति पाँच छः सप्ताह तक न रखकर सिर्फ़ चार सप्ताह तक ही रखते हैं। अच्छी उपजाऊ ज़मीन में लगायी जाय तो रोपने के समय से तीन महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। बँधा गोभी के जो उप-योग हो सकते हैं वे इसके भी किये जा सकते हैं।

ब्रुसेल्स स्प्राउट्स Brussels sprouts

Brassica oleracea, gemmifera

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है। विशेषतः अंग्रेज़ लोग ही इसका उपयोग करते हैं। बेलजियम में ब्रुसेल्स नगर के निकट इसकी खेती बहुत समय से होती है। सम्भव है इसी से इसका यह नाम पड़ा हो। इसे भी एक प्रकार का बँधा गोभी ही समझना चाहिए। इसमें बँधा गोभी की भाँति एक पौधे में एक गोभी नहीं बैठती परन्तु एक ऊँची डंडी होती है जिसके चारों ओर छोटी छोटी बहुत सी गोभियाँ बैठती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट, दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। भूमि की जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद ढाई सौ से तीन सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना चाहिए।

बोना :—बोने का समय भाद्रपद से कार्तिक (अगस्त से अक्टोबर) तक है। पहाड़ों पर गर्मी में बोना चाहिए। एक एकड़ के लिए दो तीन छटाँक बीज की आवश्यकता होती है। बीज पहले नर्सरी में गिराये जाते हैं। एक महीने के बाद पौधों को खेतों में लगा देना चाहिए। पौधे से पौधा दो फ़ीट और पंक्ति से पंक्ति दो फ़ीट से ढाई फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों पर थोड़ी मिट्टी चढ़ानी चाहिए। इस पर विशेष मिट्टी नहीं चढ़ायी जाती

क्योंकि छोटी छोटी गोभियाँ डंडी के नीचे के भाग पर ही अधिक बैठती हैं। मिट्टी चढ़ाने से जो नालियाँ बन जाती हैं उनमें पानी भरकर सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—गोभी की अपेक्षा यह कुछ देरी से तैयार होती है परन्तु गर्मी आने के पहले बिलकुल तैयार हो जाती है। फाल्गुन में यह तरकारी के योग्य रहती है। बंधा गोभी से इसकी पैदावार अधिक होती है। नीचे की गोभियाँ ज्यों ज्यों दो इञ्च मोटी होती जायँ तोड़ लेनी चाहिए। जैसे ही पत्ते कुछ पीले पड़ने लगें गोभियाँ तोड़ना प्रारम्भ करना चाहिए। जब सब गोभियाँ तोड़ ली जायँ तब ऊपर के पत्ते तोड़ सकते हैं। यदि पौधों से तोड़कर कुछ दिनों के लिए रक्खी जायँ तो ये ठहर जाती हैं। गोभी के स्वाद जैसा इनका स्वाद जल्दी नष्ट नहीं होता।

उपयोग और गुण :—बँधा गोभी की भाँति इसका भी अचार या तरकारी बनायी जा सकती है। गुण बँधा गोभी के समान ही हैं।

केल Kale *Brassica oleracea Var. acephala*

यह भी एक जाति की गोभी होती है जिसके पत्ते खुले और मुड़े हुए होते हैं, बँधा गोभी के पत्ते जैसे पर्तवार जमे हुए नहीं होते। इसकी खेती विलायत में बहुतायत से होती है। पत्तों को नर्म रखने और उनकी मोड़ के लिए बहुत सर्दी की आवश्यकता होती है इसलिए भारतवर्ष में पहाड़ों पर ही सकती

है। मैदान में लगाने से पत्ते कड़े हो जाते हैं और उनका स्वाद भी नष्ट हो जाता है। बँधा गोभी की अपेक्षा यह अधिक सरदी सहन कर सकती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है परन्तु बलुआ-दुमट इसके लिए अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहली फ़सल को अच्छा दिया हो तो इसे देने की आवश्यकता नहीं परन्तु यदि नहीं दिया हो तो ढाई सौ मन के लगभग देना ठीक होता है।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसके बीज नर्सरी में डालना चाहिए और जब पौधे तीन चार इञ्च ऊँचे हो जायँ तो दो दो फ़ीट के अन्तर पर खेतों में लगाना चाहिए। पहाड़ों पर फाल्गुन-चैत्र (फेब्रुअरी-मार्च) में लगाना चाहिए। प्रति एकड़ आठ दस छटाँक बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय इस पर भी मिट्टी चढ़ानी चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी:—रोपने के समय से तीन महीने में फ़सल तैयार हो जाती है। जब निज के उपयोग भर ही लगाय जाय तो ज्यों ज्यों ये तैयार होती जायँ काम में लाना चाहिए। जब बेचने के लिए लगायी जाय तो समूचे पौधे काटकर उनमें से ख़राब पत्ते निकाल देने के बाद बाज़ार में भेजना चाहिए। इसकी पैदावार डेढ़ सौ से दो सौ मन तक हो जाती है।

उपयोग :—पत्तों को काटकर उनकी तरकारी बनायी जाती है।

मेथी Fenugreek *Trigonella Fœnum graecum*

इसकी खेती इसकी पत्ती और बीज दोनों के लिए की जाती है। अच्छी उपजाऊ ज़मीन में इसका पौधा लगभग एक फुट ऊँचा हो जाता है। पत्तियाँ छोटी छोटी होती हैं। फलियाँ पतली पाँच छः इञ्च लम्बी होती हैं। इनमें छोटे छोटे पीले रंग के बहुत से बीज होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—उसके लिए कछार और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। इसकी पहले वाली फ़सल को यदि अच्छा खाद दिया गया हो तो इसे देने की आवश्यकता नहीं परन्तु यदि न दिया हो तो सौ सवा सौ मन के क़रीब देना चाहिए। जिस फ़सल से बीज लेना हो उसके लिए कुछ विशेष खाद देना ठीक होता है। बीस सेर के लगभग स्फुर पहुँचे इतना स्फुर का खाद भी देना चाहिए।

बोना :—मेथी के बीज क्यारियों में छींटकर बोये जाते हैं। छींटने के पश्चात् दतारी से मिट्टी में मिला देते हैं। इसे पंक्तियों में भी बो सकते हैं। क़रीब पन्द्रह सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए। बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-आकटोबर) है। वैसे तो यह तरकारी के लिए कभी भी लगायी जा सकती है परन्तु अच्छे बीज आश्विन-कार्तिक की फ़सल से ही प्राप्त होते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय घने पौधों की छँटती

होनो चाहिए। उखाड़े हुए पौधों की तरकारी बनायी जा सकती है। बीज वाली फ़सल में पौधे कम से कम छः इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ कर देनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के पश्चात् तीन चार सप्ताह में मेथी तरकारी के योग्य हो जाती है। जो पौधे छाँटे जाते हैं वे भी काम में लाये जाते हैं। जब छँटती समाप्त हो जाती है तो फिर पौधों के नर्म कोपल काम में लाये जाते हैं। बीज वाली फ़सल माघ-फाल्गुन तक तैयार होती है।

दूसरी फ़सल के लिए बीज राख में मिला कर या वैसे ही बन्द बर्तन में रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—पत्ते और नर्म कोपलों की तरकारी बनायी जाती है। इसे धूप में सुखाकर भी रख सकते हैं, सुखाने पर भी इसका स्वाद नष्ट नहीं होता। बीज की भी चने की दाल के साथ तरकारी बनायी जाती है। बीज औषधि और व्यवसाय के काम में लाये जाते हैं। बीज से पीला रँग निकाला जाता है जिसके साथ यदि तूतिया (copper sulphate) मिला दिया जाय तो पक्का हरा रंग हो जाता है।

मेथी की तरकारी क्षुधावर्धक, बलदायक, वातनाशक और पेचिस के दस्तों को रोकने वाली होती है। बढ़ी हुई तिल्ली, खाँसी, जलंधर इत्यादि व्याधियों में इसका सेवन अच्छा होता है। बीज उत्तेजक, वीर्यवर्धक और पाचक होते हैं। इसके सेवन से गठिया

बायी भी छूट जाती है। खूनी बवासीर में दूध के साथ देने से खून बन्द हो जाता है। घी में भूँजकर पत्ते खिलाये जायँ तो पेचिस को लाभ पहुँचता है। पशुओं को मेथी खिलायी जाय तो वे मोटे हो जाते हैं। कहीं कहीं हरी मेथी पशुओं को खिलायी जाती है।

खिसारी Khesari *Lathyrus satirus*

इसकी खेती इसके पौधे और बीज दोनों के लिए की जाती है। इसके पत्ते कटे हुए होते हैं। फलियाँ क़रीब एक इञ्च लम्बी होती हैं। जिनमें चार पाँच बीज होते हैं। बीज चपटे और भूरे या बैंगनी रंग के होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में हो जाती है। परन्तु मटियार दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इसके लिए नहीं दिया जाता।

बोना :—प्रति एकड़ बीस सेर से एक मन के क़रीब बीज छींट दिए जाते हैं। इसे पंक्तियों में भी बो सकते हैं। पंक्तियों में एक एक फुट का अन्तर रखना चाहिए। इसके बोने का समय आश्विन (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—इसके पौधे की बाढ़ बहुत धीरे धीरे

होती है इसलिए साग लायक पौधे अगहन-पौष में तैयार होते हैं। घने पौधों की छँटती करके और दूसरों की कोमल कोपलें तोड़कर तरकारी के काम में ला सकते हैं। फाल्गुन में फ़सल काट ली जाती है। पैदावार दस बारह मन बीज तक हो जाती है।

उपयोग और गुण :—हरे पौधे तरकारी के काम में लाए जाते हैं। बीज की दाल बनायी जाती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। इसकी तरकारी हलकी, रुचिकारक और पित्त नाशक होती है।

कुसुम Safflower *Carthamus tinctorius*

इसकी खेती पत्ते, फूल और बीज तीनों के लिए की जाती है। पौधे दो तीन फीट ऊँचे होते हैं। फूल नारंगी रंग के और बीज सफेद होते हैं। कुसुम दो प्रकार का होता है। एक वह जिससे तेल निकाला जाता है और जिसमें बीज बहुत होते हैं, दूसरा वह जिससे रँग प्राप्त किया जाता है। इसमें बीज कम होते हैं और पहले की अपेक्षा फूल अधिक होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए कछार और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना चाहिए।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में दस सेर प्रति एकड़ के हिसाब से इसके बीज बोना चाहिए। पंक्तियों में डेढ़ फुट का अन्तर ठीक होता है। इसे छींटकर भी बो सकते

हैं। जब तरकारी के लिए बोया जाय तो छींटकर ही घना बोना चाहिए।

निदाई और सिंचाई :—निदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें एक एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। यह क्रिया उस फ़सल के साथ होनी चाहिए जिससे बीज लेना हो। तरकारी वाली फ़सल के पौधों में चार चार इञ्च का अन्तर ठीक होता है।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से एक महीने में पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। फाल्गुन तक फ़सल काट ली जाती है। माघ में फूल चुने जाते हैं। पैदावार मन सवा मन फूल और दस बारह मन बीज तक हो जाती है।

उपयोग और गुण :—छोटे छोटे हरे पौधे तरकारी के काम में लाये जाते हैं। फूलों से रँग निकाला जाता है। तेल खाने के लिए काम में लाया जाता है। खली पशुओं को खिलायी जाती है और खाद के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। जल जाने से जो घाव हो जाता है उसपर इसके तेल का लेप लगाया जाय तो वह जल्दी आराम हो जाता है। बीज दस्तावर होते हैं। पिसे हुए बीज के लेप से सूजन कम हो जाती है।

सरसों Mustard *Brassica campestris*

इसकी खेती पत्ते और बीज के लिए की जाती है। जब पौधे दो तीन इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उनकी तरकारी बनायी जा सकती

है। अच्छी उपजाऊ ज़मीन में इसका पौधा तीन चार फ़ीट ऊँचा हो जाता है। इसके फूल पीले होते हैं। फलियाँ दो ढाई इञ्च लम्बी होती हैं जिनमें बहुत से पीले बीज रहते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए कछार भूमि ही अच्छी होती है। वैसे दूसरी भूमि में भी बोयी जा सकती है परन्तु पैदावार अच्छी नहीं होती। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। इसे स्फुर के खाद से बहुत लाभ पहुँचता है इसलिए क़रीब सौ मन गोबर के खाद के साथ दो ढाई मन सुपर फॉसफेट या हड्डी का चूर्ण क़रीब तीन मन तक देना चाहिए।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसके बीज बोये जाते हैं। क़रीब पाँच छः सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति एक एक फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। तरकारी के लिए कभी भी बो सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करनी चाहिए। पौधे से पौधा पाँच छः इञ्च की दूरी पर रखना ठीक होता है। अच्छी उपजाऊ ज़मीन हो और बीज लेना हो तो यह अन्तर आठ दस इञ्च तक बढ़ाया जा सकता है। पानी जहाँ आवश्यकता हो वहाँ देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—निंदाई के समय जो छोटे छोटे पौधे उखाड़े जाते हैं उनकी तरकारी बनायी जाती है। ऐसे पौधे बोने के समय से तीन चार सप्ताह में तैयार हो जाते हैं। बीज वाली फ़सल माघ-फाल्गुन तक तैयार हो जाती है। लगभग आठ दस

मन बीज प्रति एकड़ हो जाते हैं। बीज सुखाकर बन्द बर्तन में रखने से रह जाते हैं।

उपयोग और गुण :—छोटे छोटे पौधों की तरकारी बनायी जाती है। बीज से तेल निकाला जाता है जो खाने के काम में आता है। इसके तेल में अचार आदि रखने से वे सड़ने नहीं पाते और स्वादिष्ट बने रहते हैं। खली पशुओं को खिलायी जाती है। इसकी तरकारी अग्निदीपक होती है। खुजली आदि व्याधियों में इससे लाभ पहुँचता है। इससे वादी भी अच्छी होती है। इसका तेल कुछ चर्म-रोगों को दूर करता है और बदन में उष्णता पैदा करता है।

सफ़ेद सरसों White mustard *Brassica alba*

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है जिनसे सलाद बनायी जाती है। इनका उपयोग भोज्य पदार्थ की सजावट के लिए भी किया जाता है। इसकी खेती विशेष नहीं होती। अंग्रेज़ों के निजो बाग़ीचों में यह पायी जाती है। इसके पौधे क़रीब डेढ़ फ़ुट ऊँचे होते हैं।

इसकी खेती पीली सरसों की खेती के समान ही होती है। जिस फ़सल से बीज लेना हो उसे कार्तिक में बोना चाहिए अन्यथा यह कभी भी बोयी जा सकती है।

राई Rai *Brassica juncea*

इसकी खेती इसके बीज के लिए की जाती है जिनसे तर-

कारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। छोटे छोटे पौधे की तरकारी भी बनायी जा सकती है। इसका पौधा सरसों के पौधों से कुछ छोटा होता है। फलियाँ सरसों की फलियों से छोटी और पतली होती हैं और संख्या में प्रति पौधा बहुत होती हैं। बीज कत्थई रंग के सरसों के बीज से छोटे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट, मटियार-दुमट या कछार भूमि इसके लिए अच्छी होती है। स्फुर का खाद इसके लिए भी अच्छा लाभप्रद होता है। दो ढाई मन के क़रीब सुपर फॉसफेट या हड्डी का चूर्ण डालना चाहिए।

बोना :—इसे आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बोते हैं। चार पाँच सेर बीज प्रति एकड़ डालना चाहिए। पंक्तियाँ एक एक फुट की दूरी पर होनी चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें छः छः इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से तीन सप्ताह में छोटे छोटे पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। माघ-फाल्गुन तक बीज वाली फ़सल भी तैयार हो जाती है। सरसों से दो एक सप्ताह पहले यह तैयार होती है।

उपयोग और गुण :—छोटे छोटे पौधे तरकारी के लिए काम में लाए जा सकते हैं। बीज तरकारियों को स्वादिष्ट करने तथा रायता, अचार आदि बनाने के काम में आते हैं। राई तीक्ष्ण,

गर्म, कफनाशक, पाचक और क्षुधावर्धक होती है। निमोनिया जैसी ठंड से होने वाली व्याधि पर इसका लेप लाभदायक होता है। इसके चूर्ण से क़ै भी जल्दी होती है। सरदी या जुकाम में इसका तेल पाँव के तलुओं में और नाक पर लगाया जाय तो वह बहुत जल्दी छूट जाता है।

पालक Spinach *Spinacia oleracea*

इसकी खेती इसके पत्ते और नव पल्लवों के लिए की जाती है। पौधे दस बारह इञ्च से डेढ़ दो फीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ ज़मीन को छोड़कर यह सब ज़मीन में हो जाता है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ मन के क़रीब देना ठीक होता है।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसके बीज क्यारियों में बोये जाते हैं। पंक्तियाँ एक एक फुट की दूरी पर होनी चाहिएँ। इसके बीज छींटकर भी बोये जा सकते हैं। करीब एक सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें छः इञ्च से नौ इञ्च की दूरी पर कर देना ठीक होता है। जब फूल आने लगे तो बीज के लिए कुछ फूलों को पौधों पर छोड़ कर बाकी को तोड़ डालना चाहिए। जहाँ पानी देने की आवश्यकता हो वहाँ देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से तीन चार सप्ताह बाद से पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। बोते समय यदि कुछ आगे

पीछे बोये जायँ तो चैत्र-वैशाख तक इसकी तरकारी प्राप्त की जा सकती है।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोमल पल्लव तरकारी के काम में लाये जाते हैं। इसकी तरकारी ठण्डी, दस्तावर, जल्दी पचने वाली और खून को साफ करने वाली होती है।

खट्टा पालक Sorrel *Rumex vesicarius*

इसकी खेती पालक की खेती के समान ही होती है। इसकी सलाद भी बनाकर खायी जाती है। स्कर्वी जैसी व्याधि में इसका सेवन अच्छा होता है। इसकी तरकारी ठण्डी और अधिक पेशाब लाने वाली होती है।

बथुआ, चाकवट Goose-foot *Chenopodium album*

यह दो प्रकार का होता है। एक के पत्ते छोटे होते हैं और दूसरे के बड़े। बड़े पत्ते वाले के पौधे एक फुट से डेढ़ फुट ऊँचे होते हैं और दूसरी की ऊँचाई एक फुट से कुछ कम ही रहती है। बथुआ के पत्ते बड़े कोमल होते हैं। कहीं कहीं तो बिना बोये ही यह खेतों में हो जाता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ ज़मीन को छोड़कर यह सब ज़मीन में हो जाता है। ज़मीन की जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद हो सके तो सौ सवा सौ मन दे देना चाहिए।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसके बीज क्यारियों में बोये जाते हैं। एक एकड़ के लिए चार पाँच

सेर बीज डालना चाहिए। इसे छींटकर भी बो सकते हैं। जब पंक्तियों में बोया जाय तो नौ दस इञ्च को दूरी पर पंक्तियाँ होनी चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों को छाँट कर छः सात इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। बड़े पत्ते वाले पौधों में यह अन्तर नौ दस इञ्च तक बढ़ाया जा सकता है। जो पौधे उखाड़े जायँ उनकी तरकारी बनायी जा सकती है। कुछ आगे पीछे बोने से माघ-फाल्गुन तक इसकी तरकारी प्राप्त की जा सकती है।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोमल पौधे तरकारी और रायते के काम में लाये जाते हैं। इसकी तरकारी पाचक, अग्नि-दीपक, हलकी और दस्तावर होती है। तिल्ली, बवासीर, बुखार आदि में इसकी तरकारी गुणदायक होतो है।

साग Sag *Amarantus gangeticus*

साग की दो जातियाँ हैं। एक हरी दूसरी लाल। इनके पौधे चार पाँच फ़ीट ऊँचे राजगिरे या रामदाने के पौधे के समान होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ मिट्टी को छोड़कर हर प्रकार की मिट्टी इसके लिए अच्छी होती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना अच्छा होता है।

बोना :—इसके बीज बरसात और गर्मी के महीनों में कभी भी बो सकते हैं परन्तु जो बीज आषाढ़-श्रावण में बोये जाते हैं उनकी पैदावार अधिक होती है। बीज खेतों में वैसे ही छींट दिए जाते हैं और फिर मिट्टी में मिला दिए जाते हैं। इन्हें पंक्तियों में भी बो सकते हैं। पंक्तियों में डेढ़ फुट का अन्तर रखना चाहिए। प्रति एकड़ तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करनी चाहिए। अन्तिम छँटाई के समय पौधों को एक एक फुट के अन्तर पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—तीन चार सप्ताह में फ़सल तैयार हो जाती है। पौधे और पत्ते कोमल बने रहें इसलिए इसे एक एक मास के अन्तर पर बोना चाहिए। देहातों में घरों के आस पास बीज छींट देने से भी पौधे निकल आते हैं और तरकारी के योग्य हो जाते हैं। दूसरी फ़सल के लिए सुखाकर के बीज बंद बर्तनों में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोंपल तरकारी के काम में लाये जाते हैं। इसकी तरकारी हलकी, दस्तावर और पाचक होती है।

चौलाई Chaulai *Amarantus blitum*

इसकी खेती इसके पत्ते और कोमल डंडियों के लिए की जाती है। इसकी कई जातियाँ होती हैं परन्तु जो तरकारी के

लिए काम में लायी जाती हैं इन जातियों के पौधे एक फ़ुट के क़रीब ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ को छोड़कर सब ज़मीन में हो जाती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डाल सकते हैं।

बोना :—इसके बीज छींटकर या पंक्तियों में क्यारियों में बोना चाहिए। पंक्तियों में नौ इञ्च का अन्तर ठीक होता है। प्रति एकड़ क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। इसे भी गर्मी और बरसात के महीनों में बो सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटनी होनी चाहिए। उन्हें नौ इञ्च से बारह इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—डेढ़ महीने में फ़सल तरकारी के योग्य हो जाती है।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोमल कोपलों की तरकारी बनायी जाती है। यह हलकी, दस्तावर, अग्निदीपक और खून को साफ़ करने वाली होती है।

राजगिरा, रामदाना Rajgira *Amarantus Paniculatus*

इसकी खेती साग की खेती के समान ही की जाती है। इसके बीज का लावा बनाकर उसे फलाहार के काम में लाते हैं। पत्तों की तरकारी बनायी जा सकती है। जिस फ़सल से बीज लेना हो

उसे आषाढ़ में बोना चाहिए। कार्तिक तक यह फ़सल तैयार हो जाती है।

लुनिया या कुलफा साग Purslane *Portulaca oleracea*

इसका पौधा बहुत छोटा होता है। यह दो प्रकार का होता है—एक हरा दूसरा सुनहले रंग का।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट और मटियार-दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद एक सौ मन के लगभग दे सकते हैं।

बोना :—चैत्र-वैशाख से ज्येष्ठ आषाढ़ (मार्च से जून) तक इसे बो सकते हैं। यह बहुत कम दिनों तक रहता है इसलिए कुछ दिनों तक का अन्तर देकर बोना चाहिए। बीज क्यारियों में बोना चाहिए। पंक्तियाँ एक एक फुट के अन्तर पर रखना ठीक होता है। एक एकड़ के लिए क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटनी करके उन्हें नौ दस इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। गर्मी में जो फ़सल बोयी जाय उसे सींचने की आवश्यकता होती है।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से तीन चार सप्ताह में फ़सल तरकारी के योग्य हो जाती है।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोमल डंडियों की तरकारी बनायी जाती है। अंग्रेज़ लोग सलाद बनाकर भी खाते हैं।

स्वाद में यह कुछ खारा और खट्टा होता है। इसकी तरकारी अग्निदीपक और पाचक होती है।

खस खस, अफ़ीम Poppy *Papaver somniferum*

इसके पौधे के सब अङ्ग काम में लाये जाते हैं परन्तु खेती अफ़ीम के लिए ही की जाती है। पौधे तीन चार फ़ीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए कछार दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना ठीक होता है। अन्तिम जुताई के बाद इसके लिए क्यारियाँ बनवा लेनी चाहिएँ क्योंकि यह क्यारियों में बोया जाता है।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में क्यारियों में इसके बीज घने छींटकर उन्हें दतारी से मिट्टी में मिला देते हैं। दो तीन सेर बीज प्रति एकड़ छींटना पड़ते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—बीज मिट्टी में मिलाने के साथ ही पानी दिया जाता है और फिर आवश्यकतानुसार बराबर पानी देते रहते हैं। जब पौधे एक इञ्च के क़रीब ऊँचे हो जाते हैं तब से छँटाई का कार्य प्रारम्भ होता है। इसमें निंदाई भी बहुत करनी पड़ती है और प्रत्येक निंदाई में कुछ कुछ पौधे छांटे जाते हैं। अन्तिम छँटाई तक पौधे छः छः इञ्च की दूरी पर कर दिये जाते हैं। यह क्रिया उस समय तक समाप्त हो जानी चाहिए जब

पौधे पाँच छः इञ्च ऊँचे हो जायँ। जो पौधे छाँट दिये जाते हैं उनकी जड़ें तोड़ कर फेंक दी जाती हैं और बाक़ी के भाग की तरकारी बनायी जाती है।

फ़सल की तैयारी :—तीन चार सप्ताह में पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। अफ़ीम फाल्गुन-चैत्र में निकाला जाता है। जब फल तैयार हो जाते हैं तो दोपहर के बाद उन पर बहुत कम गहरे चीरे दिये जाते हैं जिनमें से दूध निकलता है और रात्रि में फलों पर जम जाता है। उसे फिर दूसरे दिन सुबह में इकट्ठा कर लेते हैं। वैशाख तक फ़सल सूख जाती है तो फल तोड़ लिए जाते हैं।

उपयोग और गुण :—छोटे छोटे पौधों की तरकारी बनायी जाती है। इन्हें सुखाकर भी तरकारी के लिए रख लेते हैं। सुखाने से स्वाद नष्ट नहीं होता। जब पौधे छः इञ्च के क़रीब ऊँचे हो जाते हैं तो फिर पत्ते और कोपल ही काम में लाये जाते हैं। जब फल छोटे होते हैं तो उन्हें भी तलकर खाते हैं। इनमें थोड़ी मादकता होती है। अफ़ीम का उपयोग कई प्रकार की व्याधियों में किया जाता है। पेचिश, दस्त, उलटी, पेट के दर्द के लिए तथा आँखों की व्याधियों के लिए इसका उपयोग किया जाता है। बीज वैसे ही खाये जाते हैं और पकवानों में भी डाले जाते हैं। इसका तेल जलाने और खाने के काम में आता है। खली पशुओं को खिलायी जाती है।

पोई Malabar night shade

हरी पोई *Basella alba*, लाल पोई *Basella rubra*

इसकी खेती पत्ते और कोंपलों के लिए की जाती है। पत्ते मुलायम, मोटे और पान के आकार के होते हैं। यह दो प्रकार की होती है एक लाल और दूसरी हरी।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए दुमट और मटियार-दुमट जमीन अच्छी होती है। इसे बहुधा खेतों में नहीं बोते। बाग़ीचों में घरों के आस-पास लगा देने से लता उन पर चढ़ जाती है। देहातों में घरों के आस-पास इसे लगाकर छप्परों पर चढ़ा देते हैं। कहीं कहीं मचान भी बना दिए जाते हैं जिन पर यह चढ़ जाती है। हो सके तो लगाते समय पौधों को कुछ खाद दे देना चाहिए।

बोना :—इसे बीज से भी उपजा सकते हैं परन्तु बहुधा रोप से ही लगाते हैं। जहाँ यह होती है वहाँ पर बीज गिर जाते हैं जिनसे नये पौधे निकल आते हैं। उन्हीं पौधों को लगा देने से यह लग जाती है। इसे बहुधा बरसात में लगाते हैं कि जिसमें बिना पानी दिये ही लग जाय।

निंदाई और सिंचाई :—पौधों के आस पास की ज़मीन को साफ रखकर आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—करीब एक महीने में लता इतनी बढ़ जाती है कि तरकारी के लिए पत्ते तोड़े जा सकते हैं। माघ-फाल्गुन

तक पत्ते और कोपल अच्छे आते रहते हैं। इसके बाद कहीं कहीं इसे उखाड़कर फेंक देते हैं और कहीं कहीं बरसों तक रख दी जाती है। प्रति वर्ष नयी लता लगाना ही अच्छा होता है।

उपयोग और गुण :—पत्तों की तरकारी बनायी जाती है। पकौड़ी, समोसे आदि भी इससे अच्छे बनते हैं। साग की अपेक्षा इसकी तरकारी अधिक स्वास्थ्यदायी और ठंडी होती है। इससे शरीर पुष्ट होता है और रक्त पित्त के बिकार शान्त होते हैं।

सौंफ Aniseed *Pimpinella anisum*

इसकी खेती पत्ते और बीज के लिए की जाती है। पौधा तीन चार फीट ऊँचा होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद:— यह बलुआ को छोड़कर साधारण जुताई से सब ज़मीन में हो जाती है। खाद डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ डालना ठीक होता है।

बोना :—इसके बीज सीधे खेतों में बोये जाते हैं और नर्सरी में डालकर भी पौधों को खेतों में लगा सकते हैं। पत्तों के लिए लगायी जाय तो पंक्तियों में छः छः इञ्च का और जब बीज के लिए लगायी जाय तो डेढ़ फुट का अन्तर ठीक होता है। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है। बीज वाली के लिए चार पाँच सेर और पत्ते वाली के लिए दस बारह सेर बीज प्रति एकड़ डालना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय खेत में बोयी गयी फ़सल के लिए छँटती करनी पड़ती है। जब पौधे दो तीन इञ्च ऊँचे

हो जायँ तो छाँट कर उन्हें डेढ़ डेढ़ फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। पत्ते वाली फ़सल के लिए छः इञ्च का अन्तर ही ठीक होता है। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के महीने डेढ़ महीने बाद से ही पत्ते काम में लाये जा सकते हैं। बीज वाली फ़सल चैत्र-वैशाख तक तैयार हो जाती है। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो उन्हें खूब सुखाकर नेफ्थलीन के साथ बन्द बर्तन में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—भोज्य पदार्थों को स्वादिष्ट करने तथा उनकी सजावट के लिए पत्तों का उपयोग किया जाता है। बीज से सत निकाला जाता है जिसे औषधि के लिए काम में लाते हैं। साबुन जैसे पदार्थों को सुगन्धित करने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। बीज पाचक और ठण्डे होते हैं। नेत्र-रोग भी इससे दूर होते हैं। पेचिश में इसके उपयोग से विशेष लाभ होता है। संग्रहणी में भी इसका सेवन अच्छा होता है।

बड़ी सौंफ Fennel *Foeniculum vulgare*

इसके पौधे क़रीब तीन फीट ऊँचे होते हैं। उसकी खेती छोटी सौंफ के समान ही होनी चाहिए। चूँकि इसके पौधे बड़े होते हैं इसलिए जब पौधे तीन चार इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उन्हें छाँटकर एक एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए।

धनिया Coriander *Coriandrum sativum*

इसकी खेती इसकी पत्ती, कोमल पौधे और बीज तीनों के लिए की जाती है। पौधे क़रीब डेढ़ फुट ऊँचे हो जाते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। साधारण जुताई और खाद सवा सौ मन के लगभग देना ठीक होता है।

बोना :—इसके बीज किसी भी ऋतु में बो सकते हैं। परन्तु जिस फ़सल से बीज लेना हो उसे आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बोना चाहिए। बीज क्यारियों में छींटकर मिट्टी में मिला दिये जाते हैं। जहाँ सिंचाई नहीं करनी पड़ती वहाँ बिना क्यारियों के ही बो सकते हैं। बोने के प्रथम धनिया को हाथ से मलकर दोनों दलों को पृथक पृथक कर लेना चाहिए। एक एकड़ के लिए सात आठ सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छटती करके उन्हें नौ दस इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। पानी जहाँ देना हो वहाँ आवश्यकतानुसार देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—इसके बीज क़रीब पन्द्रह दिन में अंकुर फेंकते हैं और एक महीने में पौधों में ऐसी पत्तियाँ आती हैं जिन-का उपयोग किया जा सकता है। इसके बाद आवश्यकतानुसार पत्तियाँ तोड़ी जा सकती हैं। जो पौधे छाँटे जाते हैं वे भी काम में लाये जा सकते हैं। बीज वाली फ़सल की पत्तियाँ नहीं तोड़नी चाहिए। चार पाँच महीने में बीज वाली फ़सल तैयार हो जाती है। प्रति एकड़ चार पाँच मन बीज पैदा हो जाते हैं।

उपयोग और गुण :—पत्ते और छोटे पौधे चटनी बनाने तथा तरकारीयों को स्वादिष्ट करने के काम में लाये जाते हैं।

चटनी की छोटी छोटी टिकियाँ बनाकर धूप में सुखाई जाती हैं। सूखी हुई चटनी से नमकीन भोज्य पदार्थ स्वादिष्ट किये जा सकते हैं। बीज का उपयोग मसाले के लिए किया जाता है। औषधि में भी ये काम देते हैं। हरा धनिया पित्त-नाशक होता है। सूखे बीज भून-कर उनका चूर्ण बनाया जाता है जिसे मिश्री के साथ मिला कर खाने से बल बढ़ता है और मस्तिष्क को तरी पहुँचती है।

पुदीना Mint *Mentha arvensis*

इसके पौधे छोटे-छोटे होते हैं जिनकी डंडियाँ लाल या हरी होती हैं। शाखाएँ ज़मीन पर फैलती रहती हैं और जगह जगह जड़ें फेंक देती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। ज़मीन की जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद सौ सवा सौ मन के लगभग दे सकते हैं।

बोना :—इसे जब चाहें लगा सकते हैं परन्तु कार्तिक (अक्टोबर) में लगाना अच्छा होता है। इसकी शाखाओं के टुकड़े जिनके साथ कुछ जड़ें भी हों क्यारियों में लगा देना चाहिए। पंक्तियों में एक फुट का और पौधों में छः छः इञ्च का अन्तर रखना ठीक होता है। लगाने के कुछ दिन बाद ये टुकड़े जड़ें फेंक देते हैं और फिर अच्छी तरह से लग जाते हैं। एक बार लगा देने से कई वर्षों तक पौधे लगे रहते हैं परन्तु प्रति वर्ष कार्तिक में स्थानान्तर करना अच्छा होता है। कहीं कहीं बरसात में पौधे मर जाते हैं इसलिए बरसात के प्रारम्भ में कुछ पौधों को

उठाकर गमलों में या मिट्टी से भरे हुये देवदारु के चौखटों में लगाकर उन्हें छाया में रख देना चाहिए और फिर कार्तिक में क्यारियों में लगा देना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—आवश्यकतानुसार निंदाई करते रहना चाहिए। गर्मी के दिनों में तीसरे चौथे रोज़ पानी देना पड़ता है। इसे बहुधा लोग कुओं के निकट लगा देते हैं जहाँ पर बराबर पानी मिलता रहता है। कभी कभी गर्मी में इसमें एक प्रकार के कीट लग जाते हैं जो पत्तों के नीचे की ओर पाये जाते हैं। ये पत्तों का रस चूसते रहते हैं जिसमें पत्ते मुड़ जाते हैं। इस व्याधि से बचाने के लिए मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छिड़की जाय तो ये कीट मर जाते हैं। राख पौधों को उलट पलट करके इस रीति से छिड़कनी चाहिए जिसमें वह नीचे की ओर लगे।

फ़सल की तैयारी :—जब पौधे अच्छी तरह से लग जायँ तो पत्ते आवश्यकतानुसार तोड़ सकते हैं। गर्मी के दिन में इनकी बाढ़ अच्छी होती है।

उपयोग और गुण :—पत्तों की चटनी बनायी जाती है। इनसे दूसरी चटनियाँ और तरकारियाँ स्वादिष्ट भी की जाती हैं। पुदीना ठण्डा और साफ़ पेशाब लाने वाला होता है। हैज़े के दिनों में इसका शरबत पीते रहें तो अच्छा रहता है। यह क़ै को रोकता है, चित्त को प्रसन्न रखता है और पाचनशक्ति बढ़ाता है।

प्रकरण १४

वे तरकारियाँ जिनके फूल की डंडी या फूल काम में लाये जाते हैं

फूल गोभी Caulifflower *Brassica oleracea Var. botrytis*

इसकी खेती इसके फूल की डंडी के लिए की जाती है जिसका रूप-परिवर्तन ऐसा हो जाता है कि सर्वसाधारण को वह फूल ही मालूम होता है। पौधा क़रीब एक फुट ऊँचा होता है। परन्तु पत्ते दो फ़ीट ऊँचे हो जाते हैं। इसकी खेती डेनमार्क में अच्छी होती है। बहुत से लोग बीज वहीं से मँगाते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह बलुआ और मटियार को छोड़कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। जल्दी होने वाली को बलुआ दुमट और देर से होने वाली को मटियार दुमट में लगाना चाहिए। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। गोबर का खाद तीन सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से डालना ठीक होता है। अन्तिम जुताई के बाद पारियाँ और नालियाँ बनवा लेनी चाहियें।

बोना :—जिन जातियों ने भारतवर्ष की जलवायु को अपना लिया है उन्हें श्रावण-भाद्रपद (जुलाई-अगस्त) में नर्सरी में बोना चाहिए। लगभग बीस दिन के बाद नर्सरी से

उठाकर के छः छः इञ्च की दूरी पर दूसरे स्थान में लगाना चाहिए। वहाँ से फिर पन्द्रह दिन बाद उठाकर पौधों को खेतों में लगा सकते हैं। इसके पौधे ज़रा कोमल होते हैं इसलिए दो बार स्थानान्तर करने से वे अच्छे सुदृढ़ हो जाते हैं। जो बीज बाहर से मँगाये जायँ उन्हें आश्विन (सेप्टेम्बर) में नर्सरी में डालना चाहिए क्योंकि जब सर्दी पड़ती है तब वे अच्छे जमते हैं। गर्मी सहन करने की शक्ति कम होने के कारण पहले लगाने से बहुत से पौधे मर जाते हैं और जो बच जाते हैं उनमें से बहुत से निर्बल हो जाते हैं। इसके विपरीत यदि देश-रंजित जातियों के बीज देर से डाले जायँ तो उनके फूल अच्छे नहीं बनते और वे जल्दी फूट भी जाती हैं। पहाड़ों पर गोभियाँ गर्मी में लगानी चाहिए। एक एकड़ के लिए तीन चार छटाँक बीज काफ़ी होते हैं। इनके लिए पन्द्रह फ़ीट लम्बी और पाँच फ़ीट चौड़ी ऐसी दो नर्सरी होनी चाहिए। खेतों में लगाते समय पंक्तियाँ दो फ़ीट और पौधे डेढ़ से दो फ़ीट की दूरी पर गोभी की जाति के अनुसार लगाना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :--नर्सरी में छोटे छोटे कीट बहुत हानि पहुँचाते हैं इसलिए उनसे बचाने की ओर पूरा ध्यान रखना चाहिये। पौधों पर महीन राख छींटते रहने से बहुत कुछ बचाव हो जाता है। पौधों का स्थानान्तर बड़ी सावधानी से करना चाहिए जिसमें उनकी जड़ों को हानि नहीं पहुँचे। सिंचाई आवश्यकता-नुसार दो दो पंक्तियों के बीच की नालियों में होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से लगभग चार महीने में फूल तैयार हो जाते हैं। श्रावण और भाद्रपद में बोयी जाने वाली से कार्तिक से पौष तक और आश्विन वाली से माघ-फाल्गुन तक फूल मिलते रहते हैं। जब फूल अच्छा बन जाय और सफ़ेद रंग पर रहे तब काट लेना चाहिए। कभी कभी कुछ फूल पीले रंग के हो जाते हैं। यदि ऐसा हो जाय तो पौधे के पत्तों को इकट्ठे करके बाँध देना चाहिए जिसमें फूल रोशनी से छुप जाय। ऐसा करने से चार पाँच रोज़ में फिर सफ़ेदी आ जाती है। तैयार फूल को उखाड़कर उसकी जड़ें कुछ छाँट दी जायँ और कुछ पत्ते काटकर छाया में लगा दिया जाय तो कुछ दिनों तक वह अच्छा बना रहता है।

गोभियों के बीज सब जगह तैयार नहीं किये जा सकते। पहाड़ों पर ठण्डे स्थानों में हो सकते हैं। कहीं कहीं मैदानों में भी जहाँ वातावरण में तरी अच्छी होती है देश-रंजित गोभियों के बीज पैदा किये जा सकते हैं। अच्छे बड़े फूलों को उखाड़कर उन्हें अच्छी खाद दी हुई ज़मीन में लगा देना चाहिए। इनके लग जाने पर जो शाखाएं निकलें उनमें से थोड़ी सी मोटी शाखाओं के सिवाय दूसरी शाखाओं को काट देनी चाहिए। जो शाखाएं छोड़ी जाती हैं वे बढ़ जाती हैं और उनमें फूल और फलियाँ आ जाती हैं। इन फलियों से जो बीज प्राप्त किये जायँ उन्हें सुखाकर डिब्बों में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—फल की तरकारी, अचार आदि बनाये

जाते हैं। सुखाने के लिए गोभी के फूल के छोटे छोटे टुकड़ों को चार पाँच मिनट के लिए उबलते हुए पानी में डालकर बाद में सुखाना चाहिए। पानी में दो शतांश नमक और एक शतांश सोडा डाल दिया जाय तो अच्छा होगा। सुखाने के लिए कृत्रिम गरमी काम में लायी जाय तो तापमान ६० शतांश से अधिक नहीं होना चाहिए। पत्ते पशुओं को खिलाये जाते हैं। यह बादी बढ़ाने वाली और कब्जकारी होती है। इसकी तरकारी से हृदय को कुछ लाभ पहुँचता है।

ब्रोकोली Broccoli *Brassica oleracea*

यह भी एक प्रकार की फूल गोभी होती है जिसकी खेती फूल गोभी की खेती के समान ही की जा सकती है। इसकी कई जातियाँ होती हैं जो पृथक पृथक ऋतु में बोयी जाती हैं। फूल गोभी की अपेक्षा इसे तैयार होने में कुछ समय अधिक लगता है और इसका फूल गोभी जैसा ठोंस नही होता बल्कि गोभी जैसे छोटे छोटे कई फूल होते हैं। सात आठ महीने में फूल तैयार होते हैं। इसके पौधे ढाई फ़ीट के अन्तर पर होने चाहिएँ। अभी इसकी खेती का विशेष प्रचार भारतवर्ष में नहीं हुआ है।

ग्लोब आर्टिचोक Globe Artichoke *Cynara scolymus*

यह सूरजमुखी की जाति का होता है। अधखिले फूल और कलियाँ तरकारी के काम में लायी जाती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद:—इसके लिए दुमट ज़मीन अच्छी

होती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। गोबर का खाद दो सौ मन के लगभग देना ठीक होता है।

बोना :—इसे बीज से भी पैदा कर सकते हैं और ज़मीन में से निकले हुए नये कोंपल (Suckers) भी लगाये जा सकते हैं। जब बीज बोये जायँ तो उन्हें भाद्रपद से आश्विन (आगस्त-सेप्टेम्बर) तक नर्सरी में लगाकर फिर जब पौधे दो ढाई इञ्च ऊँचे हो जायँ तो स्वस्थ पौधों को चुनकर खेतों में लगाना चाहिए। यदि सकर्स लगाये जायँ तो उन्हें पाँच छः फ़ीट की दूरी पर पंक्तियों में दो तीन फ़ीट के अन्तर पर लगाना चाहिए। एक एकड़ के लिए पाँच छः छटाँक बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—इसकी फ़सल बारह महीने में तैयार होती है इसलिए सिंचाई का प्रबन्ध अच्छा रखना चाहिए। निंदाई के समय कुछ कलियों के तोड़ने का ध्यान रखना चाहिए जिसमें बचायी हुई कलियाँ अच्छी बन जायें।

फ़सल की तैयारी:—बोने के समय से क़रीब बारह महीने में फ़सल तैयार होती है।

उपयोग :—कोमल कलियाँ और फूल तरकारी के काम में लाये जाते हैं। छोटी छोटी कलियाँ कच्ची भी खाई जाती हैं।

पटवा Roselle *Hibiscus sabdarifla*

इसकी खेती तरकारियों के बाग़ीचों में सिर्फ इसके फूल के लाल पुट पत्र (Sepals) के लिए की जाती है जिससे मुरब्बा,

चटनी आदि बनाये जाते हैं। इसका पौधा सात आठ फ़ीट ऊँचा होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में साधारण जुताई से हो जाता है। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना चाहिए।

बोना :—वैशाख से आसाढ़ (एप्रिल से जून) तक इसके बोने का समय है परन्तु बहुधा वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में ही बोया जाता है। प्रति एकड़ चार सेर बीज की आवश्यकता होती है। पंक्तियाँ तीन चार फीट की दूरी पर रखनी चाहिएँ। जब सन के लिए बोया जाता है तो यह अन्तर एक फूट का कर दिया जाता है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें तीन चार फ़ीट की दूरी पर कर देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—फूल मार्गशीर्ष से माघ तक आते रहते हैं। जैसे जैसे फूल आते जाएँ उनके लाल भाग को तोड़कर काम में लाना चाहिए।

उपयोग और गुण :—फूलों के लाल पुट पत्र (Sepals) चटनी और मुरब्बे के लिए काम में लाये जाते हैं। इससे रक्त-पित्त की शान्ति होती है और बल बढ़ता है। फूलों को सुखाकर भी काम में ला सकते हैं। कहीं कहीं इसके पत्तों की तरकारी भी बनायी जाती है। इससे सन भी निकाला जाता है।

———

प्रकरण १५

वे तरकारियाँ जिनके फल काम में लाये जाते हैं

परवल Parwal *Tricosanthes dıocia*

इसकी खेती भारतवर्ष में पश्चिमीय बंगाल, बिहार तथा संयुक्त-प्रान्त के कुछ हिस्सों में विशेष होती है। अन्य प्रान्तों में भी कहीं कहीं इसे स्थान मिल जाता है। इसके गुणों की ओर ध्यान दिया जाय तो इसकी खेती सब प्रान्तों में होनी चाहिए।

परवल दो प्रकार के होते हैं, एक पतले और भूरे रंग के, दूसरे मोटे और हरे रंग के। हरे रंग वालों पर सफ़ेद धारियाँ भी होती हैं। पकने पर परवल पीले या नारंगी रंग के हो जाते हैं। इसकी बेल पन्द्रह बीस हाथ लम्बी और पत्ते पान के आकार के लेकिन खुरदरे होते हैं। फूल कुन्दुरू के फूल के समान होता है।

ज़मीन, जुताई और खादः—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुलाई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद अच्छा सड़ा हुआ डेढ़ सौ मन के लगभग डाल सकते हैं। बकरी अथवा घोड़े की लीद की खाद से इसे बिशेष लाभ पहुँचता है।

बोना :—इसके बीज भी बोये जा सकते हैं और लता भी लगायी जाती है। बहुधा लता से ही उत्पन्न करते हैं। बोने का

समय आषाढ़ (जून) और कार्तिक (अक्टोबर) है। इसके लगाने की यह रीति है कि तीन चार हाथ ऊपर की बेल लेकर उसको तीन चार बार ऐसी मोड़ लेनी चाहिए कि क़रीब एक फुट रह जाय। बेल का एक एक मुँह दोनों छोर पर रह जाना चाहिए। मोड़ी हुई बेल को ज़मीन में क़रीब चार इञ्च गहरी इस रीति से गाड़नी चाहिए कि बीच का हिस्सा गड़ा रहे और दोनों मुँह खुले रहें। ऐसा करने से गड़े हुए भाग से जड़ें और खुले हुए मुँह की ओर से नये कोपल निकल आते हैं। पंक्ति से पंक्ति पाँच छः फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिए और उतने ही अन्तर पर पौधे से पौधा पंक्ति में होना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। पहले साल की फ़सल के बाद पौधों के आस-पास की मिट्टी को खुदवा देनी चाहिए और हो सके तो थोड़ा थोड़ा खाद दे देना भी ठीक होता है। लत्तियाँ जगह जगह जड़ें फेंकने न पायें इसलिए निंदाई के समय उन्हें उठाकर देख लेनी चाहिए। अधिक जड़ों के फेंक देने से पैदावार कम हो जाती है। सिंचाई की आवश्यकता बंगाल और बिहार में नहीं पड़ती लेकिन अन्य प्रान्तों में पानी देना पड़ता है। कार्तिक में जो लत्तियाँ लगायी जायँ उनमें जब तक वे लग न जायँ पानी जल्दी जल्दी देना चाहिए। बाद में आवश्यकतानुसार दे सकते हैं। पंक्तियों के बीच में दो दो फीट चौड़ी नालियाँ बनाकर उनमें पानी देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—चैत्र से आश्विन-कार्तिक तक फल

आते रहते हैं। जब बाज़ार में अन्य हरी तरकारियों का अभाव रहता है उस समय यह तरकारी मिलती रहती है। इसकी पैदावार भी अच्छी होती है। पचास साठ मन फल प्रति एकड़ प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रथम वर्ष की अपेक्षा दूसरे वर्ष में फल अधिक प्राप्त होते हैं। तीसरे वर्ष में ज़मीन बदल देनी चाहिए।

उपयोग और गुण :—पत्ते और कोमल डंडियों की तरकारी भी बन सकती है परन्तु बहुधा फल का ही उपयोग किया जाता है। पत्ते पित्तनाशक, डंडी कफनाशक और फल त्रिदोशनाशक होते हैं। इसकी तरकारी से पाचन शक्ति तीव्र होती है, और हृदय को लाभ पहुँचता है। खाँसी, ज्वर और रक्त-विकार दूर होते हैं।

टोमेटोज़ या टमाटर Tomatoes *Lycopersicum esculentum*

इसके फल अधिकतर संतरे के आकार के होते हैं। ये चिकने और बहुत मुलायम होते हैं। पकने पर ये लाल या गुलाबी रंग के हो जाते हैं। पौधे तीन चार फ़ीट ऊँचे होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—वैसे तो यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है परन्तु बलुआ कछार भूमि इसके लिए अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फ़सल को ही देना ठीक होता है परन्तु यदि इसे ही देना हो तो सवा सौ मन के लगभग खूब सड़ा हुआ देना चाहिए। इसे विशेष खाद नहीं दिया जाता क्योंकि ऐसा करने से शाखाओं की बाढ़ अधिक हो जाती है और फल कम

प्राप्त होते हैं। ताज़ा या कम सड़ा हुआ खाद भी इसके लिए हानिकारक होता है। गोबर के खाद के साथ साथ कुछ राख भी डालनी चाहिए। रासायनिक खाद के रूप में ढाई मन सुपर फ़ॉसफ़ेट देना ठीक होता है। नत्रजन के खाद के लिये सोडियम नाईट्रेट क़रीब सवा मन दे सकते हैं। इसमें से आधा जब पौधे एक महीने के हो जायँ तब और आधा जब फल आने लगे तब देना चाहिए।

यह दो रीति से लगाया जाता है। एक रीति में दो पानी की नालियों के बीच में एक पंक्ति टमाटर की होती है और दूसरी में दो पंक्तियों के बाद पानी देने की नाली होती है। पहली रीति में पंक्तियाँ तीन तीन फीट की दूरी पर होती हैं और बीच में पानी की नाली रहती है। दूसरी रीति में दो नालियों के बीच की भूमि चार फीट चौड़ी होती है जिस पर किनारों की ओर छः छः इञ्च भूमि छोड़कर टमाटर की पंक्तियाँ लगायी जाती हैं। इसलिए अन्तिम जुताई के बाद जिस रीति से लगानी हो उसी अनुसार नालियाँ बना लेनी चाहिए। पहली रीति की अपेक्षा दूसरी में यह लाभ होता है कि यदि पौधों को किसी प्रकार का सहारा न दिया जाय तो पौधे बीच की भूमि में पड़े रहते हैं और पानी से फल बिगड़ने नहीं पाते।

बोना :—श्रावण से कार्तिक (जुलाई से अक्टोबर) तक इसके बीज नर्सरी में गिराये जाते हैं। जहाँ वर्षा अधिक हो वहाँ आश्विन में और पहाड़ों पर गर्मी में डालना चाहिए। नर्सरी

में पंक्तियाँ चार चार इञ्च की दूरी पर रखना ठीक होता है। जब पौधे पाँच छः इञ्च हो जायँ तो उन्हें उपरोक्त रीति से तैयार की हुई भूमि में उसकी उर्वरा शक्ति के अनुसार दो फ़ीट से तीन फ़ीट की दूरी पर लगाना चाहिए। एक एकड़ के लिए दो तीन छटाँक बीज काफ़ी होते हैं। टमाटर की क़लम भी लगायी जा सकती है। नीचे की टहनी के छः इञ्च के टुकड़े लगा देने से उनमें जड़ें आ जाती हैं। कलमी पौधों में फल जल्दी आते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय बहुत से लोग पौधों की कुछ शाखाओं को तोड़ डालते हैं। कुछ लोग पौधों को सहारा देने के लिए लकड़ियाँ गाड़कर उन पर चढ़ाते हैं। लकड़ियाँ या बाँस लगाना फलों के मूल्य तथा मज़दूरी के दर पर निर्भर है। लकड़ियों पर चढ़ाने से फल बड़े बड़े आते हैं। ऊपर हवा में रहने के कारण वे बिगड़ने भी नहीं पाते। इसके विपरीत यदि ज़मीन पर पड़े रहें तो कुछ फल बिगड़ जाते हैं। शाखाओं को तोड़ना या नहीं तोड़ना यह बाज़ार की माँग पर निर्भर है। जहाँ अच्छे बड़े फलों से अच्छा मूल्य प्राप्त किया जा सके वहाँ तो शाखाओं का तोड़ना सार्थक है वरना पैदावार कम होने से हानि होती है। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—खेतों में रोपने के पाँच छः सप्ताह पश्चात् उनमें फूल आते हैं और आठ दस सप्ताह बाद फल भी आ जाते हैं। पैदावार प्रति एकड़ दो सौ से तीन सौ मन तक हो जाती है। कहीं कहीं इससे भी अधिक होती है।

दूसरी फ़सल के लिए बीज तैयार करना :—अच्छे पके हुए फलों के बीज निकालकर उन्हें जल से धो डालना चाहिए ताकि चिकना पदार्थ धुल जाय। फिर राख के साथ मिलाकर धूप में सुखा करके किसी बन्द बर्तन में रख सकते हैं। जब बहुत ज्यादे बीज निकालना हो तो अच्छे पके हुए लाल फलों को तोड़कर एक लकड़ी के पीपे में या किसी वर्तन या हौज़ में डाल देना चाहिए। दो तीन दिन में गूदा सड़ने लग जाता है और बीज नीचे बैठ जाते हैं। जब इस स्थिति पर पहुँच जायँ तो ऐसी चलनी में छानना चाहिए जिसमें छिलके ऊपर रह जायँ और बीज और रस नीचे गिर जायँ। बाद में पानी देकर धोना चाहिए। बीज नीचे बैठ जाते हैं और चिकना पदार्थ धुल कर पानी के साथ बहा दिया जा सकता है। फिर बीज को सुखाकर बन्द बर्तन में रखना चाहिए। बीज-विक्रेता इन्हें व्याधिरहित करने के लिए पारे के नमक (Mercuric chloride) के घोल में सात आठ मिनट तक डुबो कर खूब अच्छी तरह से धोकर सुखा कर के रखते हैं। पारे के नमक का जब उपयोग किया जाय तो सावधानी से करना चाहिए। क्योंकि यह बहुत तेज़ विष होता है।

उपयोग और गुण :—इसके फल बिना पकाये भी खाये जाते हैं जो अधिक गुणकारी होते हैं। तरकारी भी इनकी अच्छी लाभदायक होती है। पके हुए फलों से मुरब्बा, अचार, चटनी आदि बनाये जाते हैं। इन्हें सुखाकर भी रख सकते हैं। टमाटर को साफ धोकर पतले पतले काटकर सुखा सकते हैं। इन्हें

छिलका रहित करके भी सुखा सकते हैं। उबलते हुए पानी में एक मिनट के लिए डाल कर तुरन्त ठण्डे पानी में डाल देने से गूदे से छिलका अलग हो हो जाता है और फल आसानी से छीले जा सकते हैं। छीले हुए टमाटर के टुकड़े काट कर सुखा सकते हैं। कलईदार या बाँस की चलनी से यदि गूदा छान लिया जाय तो बीज भी अलग हो जाता है। छाना हुआ गूदा सुखाया जा सकता है। इससे टमाटर की चटनी वगैरह भी बनाते हैं। कृत्रिम गर्मी में सुखाए जाएँ तो उसका ताप परिमाण ६५ शतांश से अधिक नहीं होना चाहिए। टमाटर दस्तावर, वीर्यवर्धक और अग्निदीपक होते हैं। बेरीबेरी, स्कर्वी, तथा रिकेट्स आदि व्याधियों में इनका सेवन अच्छा होता है। नेत्रों को भी इनके सेवन से लाभ पहुँचता है।

बैंगन Brinjal *Solanum melongena*

इसके पौधे दो ढाई फीट ऊँचे होते हैं। फल के आकारानुसार यह दो जाति का होता है। एक के फल गोल होते हैं और दूसरे के लम्बे। फलों का रंग बैंगनी, हरा या सफेद होता है।

जमीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट जमीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद दो सौ मन प्रति एकड़ के क़रीब देना ठीक होता है। राख भी इसके लिए अच्छी लाभदायक होती है। गोबर का खाद जुताई के समय डाल देना चाहिए। राख बाद में भी डाली जा सकती है।

बोना :—इसके बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं। एक एकड़ के लिए चार पाँच छटाँक बीज काफ़ी होते हैं। इन बीजों को पाँच फ़ीट चौड़ी और बारह फीट लम्बी ऐसी दो नर्सरियों में बोना चाहिए। बीज साल भर में तीन बार बोये जाते हैं। कहीं कहीं एक ही बार बोने से बारह महीने फ़सल आती रहती है। बरसात के प्रारम्भ में जो बीज गिराये जाते हैं उनके पौधे जब दो इञ्च ऊँचे हो जाते हैं तो उन्हें दो दो फ़ीट के अन्तर पर लगा देते हैं। दूसरी फ़सल के बीज कार्तिक (अक्टोबर) में नर्सरी में डाल कर पाँच छः सप्ताह बाद पौधे खेतों में लगाये जाते हैं। इस फ़सल को सींचना पड़ता है इसलिए पंक्तियाँ ढाई ढाई फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। और दो दो पंक्तियों के बीच की भूमि में नाली बनाकर पानी देना चाहिए। पंक्तियों में पौधे से पौधे का अन्तर डेढ़ फुट कर देना ठीक होता है। इस फ़सल के लिए गोल जाति के बैंगन अच्छे होते हैं। गर्मी में ये अच्छे फलते हैं। कहीं कहीं फाल्गुन (मार्च) में भी बीज नर्सरी में डाले जाते हैं और चार पाँच सप्ताह बाद पौधे खेतों में लगा देते हैं। उन्हें नालियों में लगाना चाहिए और जब बरसात शुरू हो जाय तो पौधों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। ऐसा करने से दो पंक्तियों के बीच में नालियाँ बन जाएँगी जिनके द्वारा बरसाती पानी बह जायगा और पौधे स्वस्थ बने रहेंगे।

निंदाई और सिंचाई :—आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—श्रावण में जो फ़सल लगायी जाती है

उससे आश्विन से पौष तक, दूसरी फ़सल से माघ फाल्गुन से वैशाख तक और फाल्गुन वाली से बरसात में तरकारी प्राप्त की जा सकती है। कहीं कहीं आषाढ़ वाली फ़सल ही बारह महीने तक फल देती रहती है। पैदावार डेढ़ सौ मन तक हो जाती है। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो अच्छे बड़े पके हुए बैंगन के बीज सुखाकर के राख में मिलाकर या वैसे ही बन्द बर्तन में रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनायी जाती है। सुखाना हो तो वैसे ही पतले पतले काट कर सुखा सकते हैं या उबलते हुए पानी में जिसमें दो शतांश नमक पड़ा हुआ हो दो मिनट के लिये उबाल कर सुखा सकते हैं। कृत्रिम गर्मी काम में लायी जाय तो उसका ताप परिमाण ६५ शतांश से अधिक नहीं होना चाहिए। ये गर्म, अग्निदीपक, वीर्यवर्धक और कफनाशक होते हैं। छोटे, सफेद अण्डाकृति वाले बैंगन बवासीर में हितकारी माने गये हैं।

भिण्डी, रामतरोई Ladies fingers *Hibiscus esculentus*

यह दो प्रकार की होती है। एक बरसात में बोयी जाती है और दूसरी जाड़े में। बरसात वाली का पौधा चार पाँच फ़ीट और दूसरी का डेढ़ दो फ़ीट ऊँचा होता है। फूल पीले रंग के होते हैं। फल चार पाँच इञ्च लम्बे और साफ होते हैं। किसी किसी जाति के फलों पर महीन रोएँदार काँटे भी होते हैं। जब

फल पक जाते हैं तो सूखकर फट जाते हैं और जब वे उलट जाते हैं तो बीज बिखर जाते हैं।

जमीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की जमीन में हो जाती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ तक दे सकते हैं। जाड़े में बोयी जाने वाली फ़सल के लिए तीन तीन फ़ीट के अन्तर पर डेढ़ डेढ़ फुट चौड़ी पानी देने की नालियाँ बना लेनी चाहिएँ।

बोना :—माघ से आषाढ़ (जनवरी से जून) तक कभी भी इसे बो सकते हैं परन्तु बहुधा आषाढ़ (जून) और माघ (जनवरी) में ही बोयी जाता है। माघ में बोयी जाने वाली फ़सल को पानी की नालियों के दोनों ओर कुछ जमीन छोड़कर बीच की भूमि में दो पंक्तियाँ लगानी चाहिएँ। आषाढ़ वाली फ़सल को समतल खेत में ढाई ढाई फीट की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए। भिण्डी के पौधे स्थानान्तर भी किये जा सकते हैं। इसलिए नर्सरी में बो कर भी खेतों में लगा सकते हैं। एक एकड़ के लिए चार पाँच सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय बरसात वाली फ़सल के पौधों को छाँटकर उनमें दो दो फ़ीट का और माघ वाली में एक एक फुट का अन्तर कर देना चाहिए। सिंचाई माघ वाली फ़सल के लिए करनी होती है।

फ़सल की तैयारी :—बोने के डेढ़ दो महीने बाद फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं। आषाढ़ वाली फ़सल से भाद्रपद से कार्तिक

तक और माघ वाली से फाल्गुन से ज्येष्ठ तक फल प्राप्त किये जा सकते हैं। भिण्डी की खेती में तैयार फलों को तोड़ने की ओर पूरा ध्यान रखना चाहिए क्योंकि तैयार हो जाने पर यदि दो तीन दिन के लिए छोड़ दिये जायँ तो उनकी कोमलता और स्वाद दोनों नष्ट हो जाते हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो पौधों पर ही फलों को पकने देकर तोड़ना चाहिए। ये फटने न पायें इससे पहले तोड़कर सुखा करके फल ही रखना अच्छा है। बीज ही रखना हो तो उन्हें बन्द बर्तन में रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनायो जाती है। गोल टुकड़े काटकर इन्हें सुखाकर भी रख सकते हैं। सूखने पर भी उनका स्वाद अच्छा बना रहता है। भिण्डी भारी, चिकनी, कफ कारक और बल बर्धक होती है।

मिर्च, मिर्चाई Chillies *Capsicum annum*

मिर्च कई जाति की होती है। छोटी मिर्चें बड़ी तीक्ष्ण होती हैं। कुछ मिर्चें ऐसी भी होती हैं जिनमें तीक्ष्णता बिलकुल नहीं रहती है। ऐसी मिर्चों की तरकारी बनायी जाती है। ये तीन इञ्च से लगाकर छः सात इञ्च लम्बी और एक इञ्च से लगाकर दो तीन इञ्च मोटी होती हैं।

ज़मीन, जुताइ और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्ज गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ के क़रीब देना ठीक होता है।

बोना :—श्रावण (जुलाई) में बीज नर्सरी में डाले जाते हैं और भाद्रपद में पौधे खेतों में डेढ़ डेढ़ फ़ीट की दूरी पर लगाये जाते हैं। कहीं कहीं वैशाख से आषाढ़ (एप्रिल से जून) तक बीज गिरा कर एक महीने बाद पौधे खेतों में लगाए जाते हैं। एक एकड़ के लिए आधा सेर से तीन पाव के लगभग बीज गिराना चाहिए। बीज चार पाँच रोज़ में अङ्कुर फेंक देते हैं। बड़ी, तरकारी वाली मिर्च के बीज भाद्रपद में नर्सरी में गिराकर आश्विन-कार्तिक में खेतों में रोपना चाहिए। जहाँ पानी देने की आवश्यकता हो वहाँ क्यारियों में लगाना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—आवश्यकतानुसार निंदाई और सिंचाई होनी चाहिए। जब फूल आने लगें तब पानी कुछ कम देना चाहिए नहीं तो फूल झड़ जाते हैं। फलों के बन जाने पर फिर पूरा पानी देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—हरी, तरकारी वाली मिर्च माघ, फाल्गुन में तैयार हो जाती है। दूसरी मिर्च उस वक्त तक पक जाती है। ज्यों ज्यों फूल पकते जायँ उन्हें तोड़ते जाना चाहिए। जब तीन बार फल तोड़ लिये जाते हैं तो कुछ लोग पौधों को उखाड़कर फेंक देते हैं और कुछ लोग रहने देते हैं। इनमें फिर मिर्च आ जाती है। चैत्र के अन्त तक यह फ़सल भी तोड़ ली जाती है। मिर्च की पैदावार दस बारह मन प्रति एकड़ हो जाती है। मिर्चें जब सुखाई जायँ तो उन्हें दबा देनी चाहिए ताकि बोरों में अधिक भरी जा सकें और बीज बिखरने न पायें।

उपयोग और गुण :—बड़ी, हरी मिर्च तरकारी के काम में आती है। छोटी मिर्चों की भी तरकारी बनायी जाती है और अचार भी बनाते हैं। सूखी मिर्चें मसाले के लिए काम में लायी जाती हैं जिनसे तरकारियाँ स्वादिष्ट होती हैं। मिर्च क्षुधावर्धक, उत्तेजक और कफनाशक होती है। नेत्रों को इससे हानि पहुँचती है। रक्तविकार और दाह इससे बढ़ते हैं।

मोगरी Mogri *Raphanus sativus Var. Caudatus*

इसका पौधा तीन चार फ़ीट ऊँचा होता है। फूल सफेद होते हैं। फलियाँ बैंगनी रंग की एक फुट से ढाई फ़ीट लम्बी, सिर की ओर आधे इञ्च से कुछ ही कम मोटी और दूसरी ओर नोकीली होती है। कच्ची खायी जाय तो स्वाद में यह हलकी चरपरी और अच्छी स्वादिष्ट होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। इसे स्फुर के खाद से भी अच्छा लाभ पहुँचता है इसलिए सौ सवा सौ मन गोबर के खाद के साथ में दो ढाई मन प्रति एकड़ सूपर फॉसफेट भी डालना चाहिए।

बोना :—इसे आश्विन-कार्तिक में पंक्तियों में बोना चाहिए। पंक्तियों में डेढ़ दो फ़ीट का अन्तर रखना ठीक होता है। एक एकड़ के लिए दो सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—जब पौधे तीन चार इञ्च ऊँचे हो जायँ तो निंदाई के समय छाँटकर उन्हें एक एक फुट की दूरी

पर कर देना चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से तीन चार महीने में फल आने लग जाते हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो फलियों को अच्छी तरह पकने देकर तोड़ना चाहिए। जब खूब सूख जायँ तो बीज निकालकर बन्द बर्तन में रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—फलियों की तरकारी बनायी जाती है। इन्हें कच्ची भी खाते हैं। सलाद भी इनकी अच्छी बनती है। यह पाचक और दस्तावर होती है।

कद्दू, कदीमा, काशीफल, कुम्हड़ा, Pumpkin

Cucurbita moschata

इसकी कोमल डंडी, फूल और फल तीनों काम में लाये जाते हैं। बेल बहुत लम्बी होती है। पत्ते और डंडी बालदार और खुरदरे होते हैं। फूल पीले रंग के होते हैं। नर फूल पहले और मादा फूल कुछ दिनों के बाद खिलते हैं। फल बहुत बड़े और भाँति भाँति के रंग के होते हैं। इनका रंग पकने पर पीला या हरी पीली जालीदार हो जाता है। गूदा पके हुए फल का नारंगी रंग का और कच्चे का सफेद या पीले रंग का होता है। वज़न में कोई कोई फल दस बारह सेर तक होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—देहातों में घरों के आस-पास ४ ाज बो दिये जाते हैं। बेल छप्परों पर चढ़ा दी जाती है। जिसमें

फल लग जाते हैं। मक्का के खेत में भी इसका बीज डाल दिया जाता है। तरकारी के व्यवसायी इसकी अकेली फ़सल भी लगा सकते हैं। यह सब प्रकार की उपजाऊ मिट्टी में हो जाता है परन्तु दुमट मिट्टी अच्छी होती है। जुताई छै सात इञ्च गहरी और खाद सौ सवा सौ मन के करीब डालना चाहिए।

बोना :—साधारणतः इसे आषाढ़ (जून) में बोते हैं परन्तु जल्दी फल प्राप्त करने के लिए फाल्गुन-चैत्र में भी बो देते हैं। खेतों में छः छः फीट की दूरी पर पौधे होने चाहिएँ। फाल्गुन में जो बीज बोये जायँ उनके लिए पंक्तियों में छः छः फ़ीट का और पौधों में तीन तीन फ़ीट का अन्तर ठीक होता है। पंक्तियों के बीच की भूमि में नाली बनाकर सिंचाई करनी चाहिए। एक एकड़ के लिए क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई:—निंदाई के समय पौधों की छँटती होनी चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार की जा सकती है।

फ़सल की तैयारी :—फाल्गुन-चैत्र वाली फ़सल के कद्दू बरसात में और बरसात में बोयी जाने वाली के फल आश्विन तक तैयार होते हैं। जैसे जैसे फल पीले पड़ते जायँ उन्हें तोड़ सकते हैं। आवश्यकता न हो तो लता सूख जाय तब तक उन्हें लता के साथ ही रखना ठीक होता है। कद्दू के फल साल भर तक रक्खे जा सकते हैं। जहाँ चूहों की पहुँच न हो ऐसे मचानों पर रखना चाहिए नहीं तो वे काटकर बिगाड़ देते हैं। दूसरी

फ़सल के लिए अच्छे कद्दू के बीज राख में मिलाकर रख सकते हैं। नेफ़थलीन के साथ भी रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—कोमल डंडियाँ, फूल और फल तीनों की तरकारी बनायी जाती है। बीज छील कर कच्चे या तल कर खाये जाते हैं। कद्दू की तरकारी मीठी, रुचिकारक, कफवर्धक और क़ब्ज़कारक होती है। बीज पाचक और दस्तावर होते हैं।

विलायती कद्दू Vegetable Marrow *Cucurbita pepo*

यह भी एक प्रकार का कद्दू ही होता है। इसके फूल सफ़ेद होते हैं। कद्दू की भांति यह अधिक दिनों तक नहीं ठहर सकता। यदि रक्खा जाय तो गूदा सूख कर छिलके के साथ चिपक जाता है। सिर्फ़ बीज ही बीज अन्दर रह जाते हैं। इसकी तरकारी जब यह ताज़ा हो तब ही बनानी चाहिए।

इसकी खेती कद्दू की खेती के समान की जा सकती है।

स्क्वेश Squash *Cucurbita melopepo*

इसका फल नासपाती के आकार का होता है और बड़े पपीते इतना बड़ा होता है। इसकी दो जातियाँ हैं। एक गर्मी में फलती है और दूसरी सर्दी में। दोनों मैदानों में नहीं होतीं, पहाड़ों पर होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—सौ डेढ़ सौ मन खाद और साधारण जुताई से ये बलुआ-दुमट ज़मीन में पैदा किये जा सकते हैं।

बोना :—ज्येष्ठ-आषाढ़ (मई-जून) में सरदी वाले स्क्वेश के और माघ-फाल्गुन में गर्मी में होने वाले स्क्वेश के बीच छः छः फीट की दूरी पर बोना चाहिए। एक एकड़ के लिए करीब दो सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय फलों को ज़मीन पर न रहने देकर ईंट-पत्थर आदि के टुकड़ों पर रख देना चाहिए। ताकि वे सड़ने न पायें। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से चार पाँच महीने में फ़सल तैयार हो जाती है।

उपयोग :—फलों की तरकारी बनायी जाती है।

भूरा कद्दू, शिष कुम्हड़ा White gourd *Benincasa hispida*

यह भी एक जाति का कद्दू होता है, जिसकी डंडी और पत्ते बहुत मुलायम होते हैं। फूल सफ़ेद होते हैं और फलों पर भूरा भूरा मोम सा पदार्थ रहता है जो ऐसा मालूम होता है मानो फलों पर राख छींट दी हो। इसे लोग देहातों में घरों के आस-पास लगा देते हैं। लतायें मकान या छप्परों पर चढ़ा दी जाती हैं।

ज़मीन जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी और खाद डेढ़ सौ मन के लगभग डालना चाहिए।

बोना :—आषाढ़ (जून) मास में घरों के आस-पास की मिट्टी गोड़कर बीज बो देते हैं और लताओं को मचान या छप्परों पर

चढ़ा देते हैं। जब खेतों में लगाया जाय तो दो दो बीज पाँच पाँच फ़ीट के अन्तर पर गिराना चाहिए। जब पौधे जम जाँय तो सबल को रखकर निर्बल को निकाल देना चाहिए। एक एकड़ के लिए दो सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और जहाँ आवश्यकता हो वहाँ सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—पौष-माघ तक फल तैयार हो जाते हैं।

उपयोग और गुण :—इसके फल का मुख्य उपयोग एक प्रकार की मिठाई के लिए किया जाता है जिसको पेठा कहते हैं। इसके फलों की तरकारी भी बनायी जा सकती है। यह कद्दू ठण्डा, वीर्यवर्धक, खून को साफ करने वाला और बलदायक होता है। मृगी, पागलपन आदि रोगों पर इसका सेवन अच्छा होता है। ताज़े रस के सेवन से आन्तरिक अङ्गों से यदि रक्त बहता हो तो नह बन्द हो जाता है। क्षय रोग, अर्श आदि शक्ति-नाशक व्याधियों में पेठे का सेवन लाभदायक होता है।

लौकी, आल, कदुआ, सजवन Bottle gourd
Lagenaria vulgaris

इसकी लता भूरे कद्दू की लता जैसी होती है। फूल सफ़ेद और फल अंगूरी रंग के होते हैं जिनकी लम्बाई डेढ़ दो फीट और मोटाई तीन चार इञ्च की होती है। कहीं कहीं फल तीन चार फ़ीट लम्बे भी होते हैं। लौकी दो जाति की होती है एक गर्मी में फलने

वाली और दूसरी सर्दी के दिनों में फल देने वाली। इसकी एक जाति और भी होती है जिसका फल तुम्बे के आकार का होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट या बलुआ-दुमट ज़मीन में साधारण जुताई से यह पैदा की जा सकती है। खाद डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होता है। गर्मी वाली फ़सल के लिए चार चार फ़ीट के अन्तर पर दो दो फ़ीट चौड़ी नालियाँ बना लेनी चाहिए।

बोना :—ज्येष्ठ से श्रावण (मे से जुलाई) तक इसके बीज खेतों में बोये जाते हैं। परन्तु बहुधा आषाढ़ में ही बोते हैं। बीज छः फीट के अन्तर पर बोना चाहिए और इसमें भी प्रत्येक स्थान पर दो दो बीज डालना चाहिए ताकि सबल पौधे रखकर निर्बल नष्ट कर दिये जायँ। गर्मी में होने वाली फ़सल के बीज ऊपर बतलायी हुई रीति से बनायी हुई पानी की नालियों में तीन तीन फीट की दूरी पर माघ (जनवरी) में लगाना चाहिए। प्रति एकड़ चार पाँच सेर बीज की आवश्यकता होती है। देहातों में इसे घरों के आस-पास आषाढ़ महीने में लगाकर लताओं को छप्परों पर चढ़ा देते हैं जहाँ पर वे अच्छी फल जाती हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय मचान बनवाकर लताओं को उन पर चढ़ानी चाहिए ताकि वे अच्छी फलें। माघ में बोयी जाने वाली फ़सल के लिए खेतों में सूखी टहनियाँ ही

डालने से काम चल सकता है। लताओं को नालियों के बीच की भूमि पर चढ़ाते रहना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—आषाढ़ में बोये जाने वाले बीज की लताएँ कार्तिक से माघ तक और माघ वाली वैशाख से आषाढ़ तक फल देती हैं।

उपयोग और गुण :—फलों से तरकारी, रायता आदि बनाते हैं। इसकी खीर भी अच्छी बनती है। साबूदाने के अभाव में इसकी खीर काम में लायी जा सकती है। लौकी ठण्डी, शीघ्र पचने वाली, दस्तावर और बलदायक होती है। निर्बल, व्याधि-ग्रस्त लोगों के लिए यह उत्तम होती है।

चिचड़ा, Snake gourd *Trichosanthes anguina*

इसकी बेल और पत्ते लौकी की बेल और पत्तों से छोटे होते हैं। फल तीन चार फीट लम्बे और इञ्च ड़ेढ़ इञ्च मोटे होते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। एक के फल सफ़ेद और दूसरे के हरे होते हैं। हरे फलों में सफ़ेद धारियाँ भी होती हैं। फूल लौकी के फूल जैसे सफ़ेद होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन, सवा सौ मन खाद और जुताई छै सात इञ्च गहरी होनी चाहिए।

बोना :—वैशाख से श्रावण (एप्रिल से जुलाई) तक इसे बो सकते हैं परन्तु बहुधा आषाढ़ में ही बोया जाता है। पंक्ति से

पंक्ति छः फ़ीट और पंक्तियों में पौधों का अन्तर दो दो फ़ीट का होना चाहिए। एक एकड़ के लिए क़रीब चार सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय लताओं को मचान पर चढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिए। फल ज्यों ही मचानों पर से नीचे लटकने लगे कि उनकी नोक पर वज़नदार ढेला या पत्थर बाँध देना चाहिए ताकि फल लम्बे, पतले और सीधे बने रहें। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—वैशाख वाली फ़सल से श्रावण-भाद्रपद में और आषाढ़ वाली से आश्विन-कार्तिक में फल मिलते हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो फल ही सुखाकर रख लेने चाहिएँ।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनायी जाती है जो रुचिकर और बलदायक होती है।

तरोई, झिगुनी Sponge gourd *Luffa acutagnula*

इसकी लता चिंचड़े की लता से कुछ बड़ी होती है और फूल पीले होते हैं। इसकी कई जातियाँ हैं। एक को झुमकी या सतपुतिया तरोई कहते हैं। जहाँ पर ये फलती हैं वहाँ पाँच सात एक साथ रहती हैं। प्रत्येक एक दो इञ्च लम्बी होती हैं। इनके छिलकों पर धारियाँ होती हैं परन्तु इतनी उठी हुई नहीं होतीं जितनी बड़ी तरोई पर होती हैं। दूसरी जाति की वे तरोई

हैं जो एक एक फुट के क़रीब लम्बी होती हैं। एक जाति ऐसी भी होती है जिसके फल तीन चार फीट लम्बे होते हैं। इसे गज्ञो तरोई कहते हैं। ये क़रीब दो इञ्च मोटी होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—वैसे तो यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है परन्तु दुमट ज़मीन इसके लिए अच्छी होती है। जुताई साधारण पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए और खाद सवा सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना ठीक होता है। जिस जाति से गर्मी में फल प्राप्त किये जाते हैं उसके लिए दो दो फ़ीट चौड़ी, ढाई फ़ीट से तीन फ़ीट के अन्तर पर पानी की नालियाँ बना लेनी चाहिएं।

बोना :—पानी का अच्छा प्रबन्ध होने से चैत्र से ज्येष्ठ तक और नहीं तो आषाढ़-श्रावण (जून-जुलाई) में बोना चाहिए। जिससे गर्मी में फल प्राप्त होते हैं उसे माघ (जनवरी) में उपरोक्त रीति से नालियाँ बनाकर उनमें लगानी चाहिए। बरसाती फ़सल की पंक्तियाँ छः फ़ीट की दूरी पर और ग्रीष्म वाली की साढ़े चार से पाँच फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। पहली में पौधे ढाई फ़ीट के और दूसरी में डेढ़ डेढ़ फुट के अन्तर पर होने चाहिएं। बरसाती तरोई के लिए क़रीब दो सेर और दूसरी के लिए तीन सेर बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। देहातों में तरोई घरों के आस-पास लगा दी जाती है और लताएँ घरों या मचानों पर चढ़ा दी जाती हैं। मक्का आदि दूसरी फ़सलों में भी इसके बीज डाल दिये जाते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों को मचानों पर चढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिए। मचान के अभाव में सूखी टहनियाँ ही गाड़ देनी चाहिएँ। ग्रीष्म ऋतु की फ़सल के लिए उन्हें न गाड़कर इधर उधर डाल देना ही ठीक होता है। इन पर जो लतायें चढ़ जाती हैं उनमें उत्तम फल आते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से दो ढाई महीने में फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं। पहली फ़सल से भाद्रपद से कार्तिक तक और माघवाली से वैशाख से ज्येष्ठ तक फल मिलते रहते हैं। यदि चैत्र-वैशाख में बोने का प्रबन्ध हो सके तो ज्येष्ठ आषाढ़ में भी कुछ फल मिल जाते हैं। बीज सुरक्षित रखने के लिए समूचे फल सुखाकर रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनायी जाती है जो शीतल और पित्तनाशक होती है। कफ और बादी को बढ़ाती है।

घिया, तरोई, घिवरा Cylindrical shaped sponge gourd

Luffa cylindrica

यह तरोई जैसी ही होती है परन्तु छिलका साफ होता है। लताएँ दोनों की क़रीब क़रीब एक सी होती हैं। फूल इसके कुछ बड़े बड़े होते हैं। फल हरे या सफ़ेद और क़रीब एक फ़ुट लम्बे होते हैं।

इसकी खेती को रीति तरोई की खेती की रीति के समान

ही है। इसे भी आषाढ़ (जून) और माघ (जनवरी) में उसी रीति से उतनी ही दूरी पर बोना चाहिए। इसकी फ़सल तरोई की फ़सल से दो एक सप्ताह बाद तैयार होती है। इसके बीज भी उसी भांति सुरक्षित रक्खे जा सकते हैं। तरोई की अपेक्षा इसकी तरकारी कुछ विशेष गुणकारी होती है।

करेला Bitter gourd *Momordica charantia*

इसकी लता छोटी कटे हुये पत्तों की होती है। फूल पीले होते हैं। करेले की दो जाति हैं एक जाति बरसात और जाड़े में और दूसरी गर्मी में फलती है। फल दो इञ्च से छः इञ्च लम्बे होते हैं। बरसाती करेला पतला और लम्बा होता है। ग्रीष्म-ऋतु वाला लम्बाई में छोटा लेकिन मोटा होता है। करेले बहुधा हरे रंग के होते हैं। इनमें एक जाति ऐसी भी होती है जिसके फल सफेद होते हैं। पकने पर दोनों के फलों का रंग नारंगी या लाल हो जाता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—साधारण जुताई और लगभग डेढ़ सौ मन खाद से यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। गर्मी में फल देने वाली फ़सल के लिए तीन तीन फ़ीट की दूरी पर डेढ़ दो फ़ीट चौड़ी नालियाँ बनवा लेनी चाहिएं।

बोना :—इसके बोने का समय चैत्र से श्रावण तक है परन्तु बहुधा आषाढ़ (जून) में ही बोते हैं। प्रत्येक पंक्ति में दो दो फ़ीट की दूरी पर बीज बोना चाहिए और पंक्तियों में पाँच पाँच

फ़ीट का अन्तर रखना चाहिए। माघ (जनवरी) में बोये जाने वाले बीज उपरोक्त रीति से तैयार की हुई नालियों में बोना चाहिए। प्रति एकड़ क़रीब तीन सेर बीज बोने पड़ते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की लताओं के सहारे का प्रबन्ध करना चाहिए। बरसाती फ़सल के लिए चार फ़ीट ऊँचा मचान बनवाना अच्छा होता है। माघ वाली के लिए यदि सूखी टहनियाँ ही खेतों में डाल दी जायँ तो उनसे भी काम चल जाता है। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—आषाढ़ में बोयी जाने वाली फ़सल से भाद्रपद से कार्तिक तक और माघ वाली से चैत्र से आधे आषाढ़ तक फल मिलते रहते हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो पके हुये फलों के बीज धो कर सुखा करके वैसे ही या राख के साथ बन्द बर्तन में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—इसके फलों की तरकारी बनायी जाती है जो शीतल, कड़वी और दस्तावर होती है। पीलिया, रक्त-विकार आदि में इसका सेवन अच्छा होता है। यह बलदायक, कीटनाशक और पेट के दर्द को दूर करने वाली होती है।

उच्चे Ucche *Momordica muricata.*

यह भी एक जाति का करेला होता है जिसके फल बहुत छोटे छोटे होते हैं। इसे माघ-फाल्गुन में लगाकर गर्मी और बरसात में फल प्राप्त करते हैं। इसकी खेती करेले की खेती के समान ही होती है।

कुँदरू Kundru *Trichosenthes diseca*

इसके फल इञ्च डेढ़ इञ्च लम्बे और करीब आधा इञ्च मोटे होते हैं। इसकी लता घरों पर या छोटे दरख़्तों पर चढ़ा दी जाती है। फूल इसके सफेद होते हैं। कुंदरू की दो जातियाँ हैं। एक जङ्गली जिसके फल कड़वे होते हैं और दूसरी वह जिसके फल कड़वे नहीं होते और जिसकी तरकारी बनायी जाती है। कच्चे फल हरे सफेद धब्बे वाले होते हैं। और पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं।

इसे खेतों में नहीं लगाते हैं। बाग़ीचों में एक तरफ लगाकर लता किसी पेड़ पर या घेरे पर चढ़ा दी जाती है। एक बार लगा देने से यदि सावधानी से रक्खी जाय तो बरसों तक फल देती रहती है। इसके लगाने की यह रीति है कि बरसात में इसकी गाँठें लगायी जाती हैं। पुराने पौधों की जड़ के निकट ऐसी गाँठें निकल आती हैं वहीं से काटकर लगा देनी चाहिए। इसे बीज से भी पैदा कर सकते हैं।

इसकी लता बरसात में अधिक फलती है परन्तु यदि पानी मिलता रहे तो हमेशा फल देती रहती है।

उपयोग और गुण :—इसकी तरकारी शीतल, दस्तावर, अधिक पेशाब लाने वाली और कफनाशक होती है।

चचैल, ककोडा Chathail *Momordica cochinchinensis*

इसके फल हरे रंग के, गोल और काँटेदार होते हैं। कहीं

कहीं लम्बी जाति वाला भी होता है जिसकी लम्बाई दो तीन इञ्च की होती है।

इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। कुँदरू की भांति एक बार लगा देने से यह भी कई साल तक फलता रहता है। इसे भी बाग़ीचों में एकान्त स्थान ही देना चाहिए। बरसात के प्रारम्भ में इसे लगाते हैं। यह बीज से भी पैदा किया जा सकता है परन्तु बहुधा पौधों के निकट की गाँठ ही लगायी जाती है। लता बरसात में फलती है और जाड़े में सूख जाती है। दूसरी बरसात में उसी गाँठ से फिर नयी लताएँ निकल आती हैं।

उपयोग और गुण :—फलों के काँटे हटाकर उनकी तरकारी बनायी जाती है जो अग्निदीपक होता है और बुखार और खाँसी का नाश करता है। इसके बीज भूँजकर भी खाये जाते हैं। इसकी जड़ से बाल बढ़ते हैं और उनका गिरना बन्द हो जाता है।

फूट Cucumber *Cucumis melo Var. momordica*

इसकी खेती इसके फल के लिए की जाती है जिसका आकार खरबूजे के आकार जैसा होता है। पका हुआ फल पीला या सफ़ेद रंग का होता है। अच्छा पक जाने पर आप ही आप फट जाता है। बेल ककड़ी की बेल जैसी होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—सिर्फ़ इसी की खेती कम की जाती है। मक्का के खेत में कहीं कहीं बीज गिरा देने से बेल

निकलकर फैल जाती है। मकानों के आस-पास बाड़ों में भी इसे लगा देते हैं। इसके लिए बलुआ और बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है।

बोन :—बरसात के प्रारंभ में आषाढ़ (जून) महीने में इसके बीज बोये जाते हैं। यदि सिर्फ इसे ही लगाना हो तो पौधों में छः छः फीट का अन्तर रहे इस अन्दाज़ से बीज लगाना चाहिए। इसे माघ में भी बो सकते हैं। एक एकड़ के लिए सात आठ छटांक बीज काफ़ी होते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय फलों को देखते रहना चाहिए ताकि वे सड़ने न पावें। सिंचाई माघ वाली फ़सल के लिए करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—कच्चे फल भाद्रपद में और पके हुए आश्विन-कार्तिक में प्राप्त होते हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज रखना हो तो अच्छे पके हुए मीठे फलों के बीज धोकर सुखा करके रखना चाहिए। सूखी राख या नेफ़थलीन के साथ इन्हें रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—कच्चे फल से सलाद बनायी जा सकती है। पके हुए फल चीनी के साथ खाये जाते हैं।

ककड़ी या खीरा Cucumber *Cucumis sativus*

इसकी खेती इसके फल के लिए की जाती है जो छः इञ्च से

डेढ़ फुट लम्बे और एक इञ्च से तीन चार इञ्च मोटे होते हैं। इसकी बेल दस बारह फ़ीट लम्बी होती है और फूल छोटे छोटे पीले रंग के होते हैं। मध्यभारत में रतलाम और सैलाने के निकटवर्ती ग्रामों में ककड़ियाँ अच्छी होती हैं। वहाँ से बम्बई तक इनका चालान होता है जो चार सौ मील से कुछ अधिक दूरी पर है। ये ककड़ियाँ एक फुट से डेढ़ फुट लम्बी और सिर की तरफ कुछ मोटी होती हैं। काटने पर अन्दर से हरी निकलती हैं और बड़ी स्वादिष्ट होती हैं। ऊपर का छिलका अधिकांश का सफेद रंग का होता है। कुछ ककड़ियाँ हरी और पीली भी होती हैं। पकने पर सब पीली हो जाती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन के लगभग डालना ठीक होता है।

बोना :—इनके बोने का समय चैत्र से आषाढ़ तक है परन्तु बहुधा आषाढ़ (जून) में ही बोते हैं। मध्यभारत में बहुधा मक्का के खेतों में ही लगा देते हैं। जब सिर्फ इसे ही लगाना हो तो पंक्तियों में लगाना चाहिए जो एक दूसरे से छः फ़ीट में अन्तर पर रहे। पौधों में चार चार फीट का अन्तर ठीक होता है। प्रत्येक स्थान पर दो दो बीज बोना चाहिए ताकि निर्बल पौधे उखाड़कर सबल ही रक्खे जायँ। एक एकड़ के लिए हमें दस छटाँक बीज की आवश्यकता होती है। इसकी एक जाति ऐसी भी होती है जिसके बीज माघ में बोये जाते हैं। इन्हें नालियों में

एक एक फुट की दूरी पर लगाना चाहिए। नालियाँ इस अन्दाज से बनानी चाहिए कि जिससे पंक्तियाँ चार चार फीट की दूरी पर रहें।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय लताएँ भूमि से कुछ ऊपर रहें इसलिए कुछ सूखी टहनियाँ इधर उधर खेतों में डालकर रखना चाहिए। अगर चार पाँच फीट ऊँचा मचान बनाया जा सके तो और भी अच्छा होगा। यदि कुछ भी प्रबन्ध न हो तो कभी कभी फलों को उठाकर देख लेना चाहिए ताकि वे सड़ने न पावें या कीट उन्हें हानि न पहुँचावें। आषाढ़ में लगायी जाने वाली फ़सल सींची नहीं जाती परन्तु यदि इससे पहले लगायी जाय तो नालियों में लगाकर सींचना चाहिए और जब बरसात प्रारम्भ हो जाय तो उन नालियों को मिट्टी से भर देनी चाहिए। माघ में लगायी जाने वाली फ़सल को आवश्यकतानुसार सींचना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—आषाढ़ वाली फ़सल आश्विन-कार्तिक में और माघ वाली वैशाख-ज्येष्ठ में तैयार होती है। जब ककड़ियाँ छोटी होती हैं तब ही से इनका उपयोग शुरू होता है। जब काफी बड़ी हो जायँ और रंग बदलने लगें तब तोड़ लेना चाहिए। बीज नेफ़्थलीन की गोलियों के साथ रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—छोटी बड़ी सब ककड़ियों से सलाद बनायी जा सकती है। बिना मसाले के भी लोग इन्हें खाते हैं।

इनकी तरकारी भी बनायी जा सकती है। ककड़ियाँ ठण्डी और स्वादिष्ट होती हैं। रक्तपित्त के बिकारों को शान्त करती हैं।

गोल खीरा Gherkin *Cucumis anguria*

इन्हें कहीं कहीं कचरी या काचरी भी कहते हैं। ये बहुधा छोटी, अण्डे के आकार को होती हैं। कच्चा फल हरे रंग का सफ़ेद धारी वाला होता है और पकने पर पीला हो जाता है। इसकी खेती खीरे की खेती के समान ही होनी चाहिए। चूँकि पौधे छोटे होते हैं पंक्तियों में डेढ़ फुट का और पौधों में एक एक फुट का अन्तर रखना ठीक होता है। बोने के तीन चार महीने बाद इसकी फ़सल तैयार होती है। फल कच्चे भी खाये जाते हैं और उनकी तरकारी भी बनायी जा सकती है।

रेती ककड़ी, रैन्ता Cucumber

Cucumis melo Var. utilitimus

इसके फल एक फुट से दो फीट लम्बे और डेढ़-दो इञ्च मोटे होते हैं। इन पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक पतली और गहरी लकीरें होती हैं। छोटे फलों पर कुछ रुआँ भी होता है। कच्चा फल पहले हरा और फिर अंगूरी रंग का होता है। पकने पर यह पीला हो जाता है। लखनऊ की ककड़ियाँ जो विख्यात हैं एक इञ्च से कुछ मोटी और एक फुट के क़रीब लम्बी होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद:—इसके लिए बलुआ ज़मीन होनी चाहिए। यह बहुधा नदी के बीच को बालू पर लगायी जाती

है जो क़रीब क़रीब पानी की सतह के बराबर होती है। साधारण जुताई के बाद तीन तीन फीट के अन्तर पर डेढ़ डेढ़ फुट चौड़ी और आठ दस इञ्च गहरी नालियाँ बना ली जाती हैं जिनमें प्रति एकड़ सवा सौ मन के हिसाब से खाद डालकर उसे बालू में अच्छी तरह से मिला देते हैं।

बोना :—माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) में उपरोक्त रीति से बनायी हुई नालियों में तीन तीन फीट की दूरी पर दो दो बीज लगा दिये जाते हैं। एक एकड़ के लिए क़रीब एक सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय दो दो पौधे में से एक एक सबल को रखकर दूसरे निर्बल को निकाल देना चाहिए। सिंचाई के लिए नालियों में पानी देना चाहिए।

फ़सल की तयारी :—वैशाख-ज्येष्ठ में इसके फल प्राप्त किए जाते हैं। दूसरी फ़सल के लिए पकी हुई ककड़ी के बीज रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—हरी ककड़ियाँ कच्ची ही खायी जाती हैं और इनकी तरकारी भी बनायी जाती है। ये शीतल, हल्की और रुचिकारक होती हैं।

ख़रबूज़ा Melon *Cucumis melo*

इसके फल जाति अनुसार कई रंग और आकार के होते हैं। वज़न में फल पाव भर से ढाई सेर तक होते हैं। कच्चे फल हरे

और पकने पर अधिकांश पीले रंग के हो जाते हैं। कुछ पर हरी हरी लकीरें भी रहती हैं। इनका स्वाद इनकी जाति और भूमि पर निर्भर है। भूमि बदलते ही स्वाद में अन्तर पड़ जाता है परन्तु यदि बीज उसी स्थान से मँगवाये जायँ जहाँ के खरबूज़े अच्छे स्वादिष्ट होते हैं तो स्वाद में विशेष अन्तर नहीं पड़ता। भारतवर्ष में लखनऊ के खरबूज़े अच्छे माने गये हैं। ये चपटे और छोटे परन्तु स्वाद में मीठे और खुशबूदार होते हैं। इनका वज़न पाव भर से आधे सेर के लगभग होता है। बेल छोटी ही होती है और ज़मीन पर फैली रहती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—खरबूजे के लिए बलुआ ज़मीन होनी चाहिए। रेती ककड़ी की भाँति ये भी पानी के निकट नदी की बालू पर लगाये जाते हैं। खरबूज़े बलुआ दुमट और दुमट जमीन में भी अच्छी सिंचाई से पैदा किये जाते हैं। साधारण जुताई के पश्चात् डेढ़ फुट चौड़ी और आठ दस इञ्च गहरी नालियाँ तीन तीन फ़ीट के अन्तर पर बना ली जाती हैं। उन्हीं नालियों में डेढ़ सौ मन के लगभग सड़े हुए गोबर का खाद डाल कर उसे बालू से भली भाँति मिला देना चाहिए।

बोना :—माघ-फल्गुन (जनवरी-फरवरी) में इनके बीज नालियों में तीन फ़ीट की दूरी पर बोना चाहिए। प्रति एकड़ क़रीब सेर डेढ़ सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय बेलों को पारियों पर चढ़ाते रहना चाहिए। बहुत से कृषक जब पौधों में तीन चार पत्ते

आ जाते हैं तो बढ़ते हुए कोंपल को तोड़ डालते हैं। ऐसा करने से नयी शाखाएँ निकल आती हैं, जिनमें तीसरे चौथे पत्ते पर फूल आने लगते हैं। यदि ये बहुत बढ़ जायँ और फूल आते न दिखलायी दें तो इनके कोंपल भी तोड़ देना चाहिए। इनके तोड़ने पर जो शाखाएँ निकलती हैं उनमें फूल अवश्य आते हैं। अच्छे फल प्राप्त करना हो तो जिन शाखाओं में एक या दो फल आ जायँ तब उनके आगे के चार पाँच पत्ते रखकर लता को कोंपल तोड़ देनी चाहिए। एक शाखा में एक या दो ही फल रखना अच्छा होता है और प्रत्येक पौधे में आठ दस फल से विशेष नहीं रखना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। जब फल काफ़ी बढ़ जायँ तब पानी कुछ कम देना चाहिए और जब पकने लगें उस समय तो इतना ही देना चाहिए कि जिसमें लता मुर्झाने न पाये। ऐसे अवसर पर विशेष पानी दिया जाय तो फलों का मिठास कम हो जाता है।

फ़सल की तैयारी :—जब फलों का रंग पीला या सफ़ेद हो जाय और उनमें से मीठी सुगन्ध निकलने लगे तब तोड़ना चाहिए। वैशाख-ज्येष्ठ में फल पक जाते हैं। ज्येष्ठ के अन्त तक फ़सल समाप्त हो जाती है। बीज सुखाकर बन्द बर्तन में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है। पक्के फल वैसे ही या चीनी के साथ खाये जाते हैं। छिले हुए बीज से मिठाई भी बनायी जाती है। इन्हें तलकर भी खाते हैं।

खरबूजा दस्तावर और बलदायक होता है। छिलकों की चने की दाल के साथ तरकारी बनायी जाय तो अच्छी स्वादिष्ट होती है। बीज बलदायक, ठण्डे और अधिक पेशाब लाने वाले होते हैं।

तरबूज़, कलिंगड़ा, हिन्दवाना Watermelon
Citrullus vulgaris

इसके फलों की माँग गर्मी के दिनों में बहुत होती है। कच्चे फल हरे और पके हुए गहरे हरे या अंगूरी रंग के होते हैं। इसकी बेल खरबूज़े के बेल से कुछ बड़ी होती है। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त के तरबूज़े बड़े स्वादिष्ट होते हैं। इन फलों का व्यास नौ दस इञ्च का होता है। कहीं कहीं बंगाल की तरफ़ तरबूज़ के फल दो दो फीट लम्बे होते हैं। इनका व्यास लगभग एक फुट तक का होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ मिट्टी अच्छी होती है परन्तु बलुआ-दुमट और दुमट में भी ये हो जाते हैं। मटियार ज़मीन में ये नहीं हो सकते। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। जुताई के समय डेढ़ सौ से दो सौ मन प्रति एकड़ के क़रीब खाद मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसे नदियों में भी खरबूज़े के समान बो सकते हैं। जब नदी में बोया जाय तो खाद नालियों की बालू या मिट्टी में मिलाना चाहिए। इसके लिए खरबूज़े की अपेक्षा नालियाँ कुछ अधिक दूरी पर होनी चाहिएँ। चार पाँच फीट का अन्तर ठीक होता है।

बोना :—एक एकड़ के लिए क़रीब तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) में इसके भी बीज बोये जाते हैं। कहीं कहीं ख़रबूजों के साथ ही इसे बो देते हैं। जब अलग बोना हो तो ऊपर बतलाई हुई रीति से तैयार की हुई नालियों में तीन चार फ़ीट के अन्तर पर बीज बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों को पारियों पर चढ़ाते रहना चाहिए। सिंचाई पहले अच्छी होनी चाहिए परन्तु जब फलों के पकने का समय आवे तब बेल न मुर्झाये इतना ही पानी देना चाहिए। उस समय विशेष पानी देने से फलों का स्वाद नष्ट हो जाता है।

फ़सल की तैयारी :—माघ-फाल्गुन में बोयी गयी फ़सल वैशाख-ज्येष्ठ तक तैयार होती है। तैयार फलों को पहचानने में बड़ी कठिनाई होती है। अन्य फ़सल के फल उनके रंग, आकार, सुगन्ध या छूने से आसानी से पहचाने जा सकते हैं परन्तु इसके फल जल्दी नहीं पहचाने जाते। इनको पहचानने के लिए कुछ अनुभव होना चाहिए। अनुभवी लोग छिलके की चमक से और फलों को उँगली से ठोंक कर उनकी आवाज़ से पहचान लेते हैं कि फल पका हुआ है या कच्चा। जिसे अनुभव न हो उनके लिए सरल पहचान यह है कि जब फल तोड़ा जाय और वह डंडी से जल्दी पृथक हो जाय तो समझना चाहिए कि फल पक गया है। यदि जल्दी न टूटे और डण्ठल का चिन्ह साफ़ और गोल न होकर

टेढ़ा मेढ़ा हो जाय तो फल को कच्चा समझना चाहिए। जब दो चार फल साफ़ टूटने लगें तब समझना चाहिए कि अब फ़सल तैयार हुई है। फिर ज्यों ज्यों फल तैयार जैसे मालूम होते जायँ तोड़ते जाना चाहिए। मौसम के प्रारंभ में फल धीरे धीरे पकते हैं परन्तु कुछ समयोपरान्त जल्दी जल्दी पकते हैं इसलिये प्रारम्भ में दूसरे तीसरे दिन और बाद में नित्य प्रति उन्हें तोड़कर बाज़ार में भेजना चाहिए। जब कहीं दूर भेजना हो तो फलों के साथ डण्ठल भी रहने देना चाहिए। दूसरी फ़सल के लिए बीज का चुनाव खेतों में ही हो जाना चाहिए। जिस लता में अच्छे फल हों उनमें दो चार को छोड़कर दूसरों को तोड़ डालना चाहिए। जब ये फल पक जायँ तो उनके गूदे को पानी में मसल देना चाहिए। ऐसा करने से बीज नीचे बैठ जाते हैं जिनको निकाल कर सुखा करके बन्द बर्तन में रख लेना चाहिए। यदि अधिक बीज रखना हो तो चुने हुए फलों के गूदे को एक लकड़ी के नाँद में भरकर कुछ घंटों के लिए छोड़ देना चाहिए जिसमें वह सड़ जाय। ऐसा करने से बीज गूदे से छूटकर नीचे बैठ जाते हैं। फिर ऊपर के पदार्थ और पानी को फेंककर बीज निकाल करके धो डालना चाहिए। इन्हें सुखा करके रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—फलों के अन्दर का लाल गूदा खाया जाता है और सफेद भाग की तरकारी बन सकती है। तरबूज़, ठण्डा, पाचक और दस्तावर होता है।

दिलपसन्द, टिण्डा, टिण्डसी Dilpasand

Citrullus Var. fistulosus

इसका फल तरबूज़ के फल से बहुत छोटा होता है। वज़न में क़रीब आधे सेर के होता है। इसकी खेती सिंध के तरफ़ बहुत होती है। वैसे देहली के आसपास और उत्तरीय राजपूताने में भी तरकारी के लिए इसकी खेती का प्रचार है। इसकी खेती में ख़ास लाभ यह है कि इसकी सब्ज़ी गर्मी के दिनों में जब अन्य हरी सब्ज़ियों की कमी होती है उन दिनों में मिलती रहती है। छोटे छोटे फलों पर कुछ रोएँ होते हैं जो जब फल बड़े होते हैं तो गिर जाते हैं। कच्चे फलों का रंग हरा और पक्के का नारंगी सा होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ ज़मीन, साधारण जुताई और सवा सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से खाद डालना ठीक होता है।

बोना :—आषाढ़-श्रावण (जून-जुलाई) और माघ-फाल्गुन (फेब्रुअरी-मार्च) में दो दो फीट के अन्तर पर इसके बीज बोना चाहिए। प्रत्येक गढ़े में दो दो बीज बोना चाहिए ताकि निकलने पर सबल को रखकर निर्बल पौधा उखाड़ दिया जाय। ऐसा नहीं करने से यदि बीज नहीं निकले तो जगह खाली रह जाती है। प्रति एकड़ क़रीब दो-तीन सेर बीज की आवश्यकता होती है। सिंध और गुजरात में इसे गर्मी में बोते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—ब ने के समय से डेढ़ दो महीने में कच्चे और तीन चार महीने में पके हुये फल आ जाते हैं।

उपयोग और गुण :—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है जो अच्छी स्वादिष्ट होती है। विशेषत: चने की दाल के साथ ज़्यादा बनाते हैं। पके हुये फल वैसे ही खाये जाते हैं। टिण्डे, रुचिकारक, दस्तावर, शीतल, अधिक पेशाब लाने वाले, पित्त-नाशक और कफ नाशक होते हैं पथरी रोग में इनका सेवन अच्छा माना गया है।

प्रकरण १६

दलहन की तरकारियाँ Leguminous Vegetables

दलहन की तरकारियाँ दो प्रकार की होती हैं एक वे जिनकी फलियाँ और बीज काम में लाये जाते हैं और दूसरी वे जिनके बीज ही काम में आते हैं। प्रथम जाति की तरकारियाँ उस समय काम में लानी चाहिए जब तीन चौथाई पकी हों। यदि उन्हें पूर्ण पकने दी जायँ तो उनका स्वाद नष्ट हो जाता है। दूसरे वर्ग की तरकारियों का उपयोग उस समय होना चाहिए जब वे क़रीब क़रीब पूर्ण पकी हों। इन्हें भी पूर्ण नहीं पकने देनी चाहिए क्योंकि विशेष पक जाने से बीज का मिठास चला जाता है।

प्रथम वर्ग में चँवली (बरवटी, बोरा), ग्वार, सेम, बीन आदि की गणना होगी। दूसरे वर्ग में मटर, किराओ, सॉय-बीन, चना आदि को स्थान देना चाहिए।

चँवली, बरवटी, बोरा Cowpea *Vigna catiang*

यह दो प्रकार की होती है। एक बड़े दाने वाली जिसका दाना मूँगफली के दाने के बराबर होता है और दूसरी छोटे दाने वाली जिसका दाना तूवर के दाने के समान होता है। पहली का दाना सफ़ेद और दूसरी का सफ़ेद, पीला या बैंगनी रंग का होता है। इनकी फलियाँ आठ नौ इञ्च लम्बी होती हैं जिनमें कई बीज होते

हैं। इसकी एक जाति और होती है (*Vigna sinensis*) जिसकी फलियाँ दो तीन फीट लम्बी होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जिस ज़मीन में पानी का निकास अच्छा हो और यदि मटियार-दुमट भी हो तो उसमें भी यह अच्छी हो जाती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। इसके लिए खाद नहीं दिया जाता। अगर हो सके तो ढाई मन के क़रीब हड्डी का चूर्ण प्रति एकड़ के हिसाब से जुताई के समय दे देना चाहिए।

बोना :—वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में यह बोयी जाती है। पंक्तियाँ दो दो फीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। प्रति एकड़ सात आठ सेर बीज की आवश्यकता होती है। इसे हरे खाद के लिए भी काम में लाते हैं इसलिए यदि उसके लिए बोयी जाय तो बीस सेर के क़रीब बीज डालना चाहिए और पंक्तियों का अन्तर भी घटा देना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें एक एक फुट की दूरी पर कर देना ठीक होता है। लताओं को सूखी टहनियों पर चढ़ाने का प्रबन्ध भी करना चाहिए। मटर की लताओं से इसकी लताएँ लम्बी होती हैं। इसलिए जो टहनियाँ गाड़ी जायँ करीब पाँच छः फीट ऊँची होनी चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ दे सकते हैं।

फ़सल की तैयारी :—तरकारी के योग्य भाद्रपद में फलियाँ तैयार हो जाती हैं। पकी हुई फ़सल कार्तिक तक काटी जा सकती है। दूसरी फ़सल के लिए बीज सुखाकर राख या नेफ़थलीन की गोलियों के साथ बन्द बर्तन में रखना चाहिए। प्रत्येक दो ढाई मन बीज में क़रीब ढाई सेर गंधक का चूर्ण मिलाकर रक्खे जायँ तो भी ठीक होता है।

उपयोग और गुण :—हरी फलियों की तरकारी बनायी जाती है। लताएँ पशुओं को खिलायी जाती हैं। हरे खाद के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। सूखे बीज की दाल भी बनती है और उन्हें उबालकर तरकारी भी बनाते हैं। पशुओं के दाने के लिए भी चँवली काम में लायी जाती है। इसकी तरकारी हलकी, दस्तावर और रुचिकारक होती है। परन्तु पेट में वायु पैदा करती है।

ग्वार Guar or cluster beans *Cyamopsis psoraloides*

इसका पौधा कोमल, घने पत्तों वाला और सीधा होता है। अच्छी फ़सल चार फीट ऊँची हो जाती है। एक जाति की ग्वार ऐसी भी है जिसके पौधे दस दस फीट ऊँचे होते हैं। ग्वार की फलियाँ डेढ़ दो इञ्च लम्बी होती हैं। एक जाति ऐसी भी है जो कुछ कम फलती है परन्तु फलियाँ बड़ी कोमल और तीन चार इञ्च लम्बी होती हैं। इस जाति की ग्वार गुजरात की तरफ़ विशेष होती है। तरकारी के लिए यही उत्तम होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह हर प्रकार की ज़मीन में हो जाती है। इसके लिए खाद की आवश्यकता नहीं होती। जुताई साधारण होनी चाहिए।

बोना :—वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में आषाढ़ (जून) में बोना चाहिए। पंक्तियाँ एक एक फुट की दूरी पर रक्खी जाती हैं। एक एकड़ के लिए सात आठ सेर बीज होना चाहिए। जो कोमल और बड़ी फली वाली ग्वार है वह बहुत फैलती है इसलिए उसे दो फ़ीट के अन्तर पर बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय घने पौधों की छँटती करके उन्हें एक एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। जब पौधे कुछ बड़े हो जाते हैं तो इनमें एक प्रकार के जन्तु (Mites) लग जाते हैं जिससे पत्ते मुड़ जाते हैं और काले काले हो जाते हैं। बढ़ती हुई कोपल में जब ये लग जाते हैं तो पौधों की बाढ़ रुक जाती है और फल प्राप्त नहीं होते। बहुत ध्यानपूर्वक धूप में रखकर देखने से ये जन्तु पत्तों के नीचे की ओर चलते हुए दिखलाई देते हैं। दस पन्द्रह गुना आकार बढ़ाने वाले लेन्स से देखे जायँ तो ये दिखलाई देंगे। जब इनका आक्रमण दिखलाई दे और पत्ते ज़रा सा मुड़ते हुए दिखे तो व्याधिग्रस्त पत्तों के नीचे की ओर गंधक का महीन चूर्ण (Sulphur dust) लगा देना चाहिए। एक मलमल के कपड़े में बाँधकर यदि यह चूर्ण पत्तों पर गिराया जाय तो अच्छी तरह से गिर जाता है और हानि-कारक जन्तु मर जाते हैं। छिड़कने के पहले ज़रा पत्तों को गीले

कर लेना चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—तरकारी के लिए फलियाँ मार्गशीर्ष तक तैयार हो जाती हैं। पकी हुई फ़सल पौष में काट ली जाती है। दूसरी फ़सल के लिए बीज खूब सुखाकर बन्द बर्तन में गंधक, राख या नेफ़थलीन के साथ रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—हरी फलियों की तरकारी बनायी जाती है। कोमल फलियाँ सुखाकर रक्खी जाती हैं जिन्हें तल कर उन पर नमक और मसाला छिड़क कर काम में लायी जाती हैं। हरे पौधे पशुओं को खिलाये जाते हैं और खाद के लिए भी काम में लाये जाते हैं। सूखे बीज का दाना पशुओं को दिया जाता है। इसकी तरकारी गर्म और दस्तावर होती है।

सेम, बालोर Sem *Dolichos lablab*

इसकी खेती भारतवर्ष के सब प्रान्तों में होती है। देहातों में घरों के आसपास लगाकर छप्पर या मचानों पर लताएँ चढ़ा दी जाती हैं। बाग़ीचों में घेरों के आसपास लगा देने से उन पर चढ़ जाती हैं। बम्बई प्रान्त में कहीं कहीं इसके खेत के खेत बोये जाते हैं। अन्य प्रान्तों में तरकारी की खेती वाले कृषक इसे बाग़ीचों में स्थान देते हैं। अधिकांश लोग निज के उपयोग के लिए घरों के आसपास ही लगा देते हैं। सेम कई प्रकार की होती है। कुछ ऐसी होती हैं जिनके बीज चपटे और फलियाँ चौड़ी होती हैं। कुछ के फल बड़े दाने वाले होते हैं। रंग में कोई सफ़ेद, कोई

हरी और कोई बैंगनी रंग की होती है। सफ़ेद और बड़े बीज वाली सेम तरकारी के लिए अच्छी होती है। बम्बई की तरफ़ सूरती पापड़ी नाम की सेम अच्छी मानी गयी है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह सब प्रकार की ज़मीन में हो जाती है परन्तु मटियार-दुमट ज़मीन ठीक होती है। खाद इसके लिए नहीं दिया जाता परन्तु यदि हल्की ज़मीन में लगायी जाय तो एक सौ मन प्रति एकड़ के लगभग दे देना चाहिए। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए।

बोना :—यह आषाढ़ से भाद्रपद (जून से अगस्त) तक बोयी जाती है। खेत की फ़सल के लिए नाली वाले हल (Seed drill) से बो सकते हैं। पंक्तियाँ चार चार फ़ीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। एक एकड़ के लिए क़रीब दस सेर बीज की आवश्यकता होती है। जब घरों के आसपास बाड़ों में लगाना हो तो थोड़ी सी मिट्टी खोदकर दो दो इञ्च की गहराई पर बीज बो देना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों को छाँटकर एक एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। जब पौधे कुछ बढ़ जायँ तो मचान पर चढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिए। खेत में जब बहुत लगायी जाती है तो मचान नहीं बनाये जाते। सिंचाई की जहाँ आवश्यकत हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से पाँच छः महीने बाद तरकारी के योग्य फलियाँ आती हैं और एक दो महीने

तक मिलती रहती हैं। कुछ आगे पीछे लगायी जाय तो मार्ग-शीर्ष से फाल्गुन-चैत्र तक फलियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज सुखाकर बन्द वर्तनों में चँवली के बीज की भाँति रख सकते हैं।

उपयोग और गुण :—हरी फलियों की तरकारी बनायी जाती है। सूखे बीज से तरकारी और दाल बनाते हैं। लता पशुओं को खिलायी जाती है। इसकी तरकारी रूखी, बलदायक और अग्निमंद करने वाली होती है।

चारकोनी सेम Charconi sem, Goa Bean

Psophocarpus tetragonolobus

यह भी एक प्रकार की सेम होती है जिसकी फलियाँ साधारण सेम की भाँति चपटी या गोल नहीं होतीं बल्कि चार कोने वाली होती हैं। इसकी खेती सेम की खेती के समान ही होती है।

ब्रॉड बीन, बकला सेम Broad bean *Vicia Faba*

इसकी दो जातियाँ होती हैं। एक की फली छः इञ्च से नौ इञ्च लम्बी और दूसरी की तीन से छः इञ्च लम्बी होती है। पहली की फलियों में चार से छः और दूसरी में प्रायः तीन ही बीज रहते हैं। पौधों की ऊँचाई तीन फ़ीट तक होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—साधारण जुताई से मटियार-दुमट ज़मीन में यह अच्छी होती है। खाद हो सके तो डेढ़ सौ मन के लगभग दे सकते हैं। अन्तिम जुताई के बाद दो दो फ़ीट

चौड़ी और तीन इञ्च गहरी तीन तीन फ़ीट के अन्तर पर नालियाँ बना लेनी चाहिएँ।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में पानी देने की नालियों के दोनों ओर नौ नौ इञ्च की दूरी पर इसके बीज लगाना चाहिए। एक एकड़ के लिए दस सेर बीज की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पंक्तियों के बीज की भूमि में नयी नालियाँ बनाकर पानी दिया जाता है। साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—बोने के समय से चार पाँच महीने में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनायी जाती है जो रूखी, बलदायक और मन्दाग्नी करने वाली होती है।

फ्रेंच बीन, विलायती सेम—French bean

Phoseolus vulgaris

इसकी भी दो जातियाँ होती हैं। एक छोटी जिसके पौधे अठारह इञ्च ऊँचे होते हैं और जिसके लिए सहारे का प्रबन्ध नहीं करना पड़ता। दूसरी जाति के पौध पाँच छः फ़ीट ऊँचे होते हैं। इनके लिए सूखी टहनियाँ लगानी पड़ती हैं जिन पर लताएँ चढ़ जाती हैं। फ्रेंच बीन के लिए ठण्डी छायादार जगह अच्छी होती है। इनकी फलियाँ चार इञ्च से छः इञ्च लम्बी होती हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—मटियार-दुमट ज़मीन में ये अच्छे होते हैं। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद डेढ़ सौ मन के लगभग देना ठीक होता है। अन्तिम जुताई के बाद डेढ़ डेढ़ फुट की दूरी पर नालियाँ बना लेनी चाहिएँ।

बोना :—इसे भाद्रपद-आश्विन (आगस्ट-सेप्टेम्बर) में पारियों पर बोते हैं। पारियाँ डेढ़ डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिएँ। बीज से बीज छः इञ्च की दूरी पर बोना ठीक होता है। बड़ी जाति वाले को कुछ अधिक दूरी पर बोना चाहिए।

निंदाइ और सिंचाई :—निंदाई के समय बड़े पौधे वाले बीज के लिए सहारे का प्रबन्ध करना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार की जाती है।

फ़सल की तैयारी :—छोटे पौधे वाले ढाई तीन महीने में और बड़े पौधे वाली चार पाँच महीने में तैयार हो जाती हैं।

उपयोग और गुण :—फलों की तरकारी बनाई जाती है। गुण सेम के गुण जैसे इसमें भी होते हैं।

स्कारलेट रनर बीन Scarlet runner bean

Phaseolus coccineus

इसकी खेती फ्रेंच बीन की खेती के समान ही होती है। बीज पंक्तियों में एक एक फुट की दूरी पर बोये जाते हैं। पंक्तियों में पाँच छः फ़ीट का अन्तर होना चाहिए। लताओं के सहारे के लिए पंक्तियों के पास सूखी लकड़ियाँ गाड़नी चाहिएँ।

लाईमा बीन Lima bean *Phaseolus lunatus*

इसकी जन्मभूमि ब्रेज़िल (दक्षिण अमेरिका) मानी गयी है। इसकी लताएँ रोएँदार लम्बी होती हैं जिन्हें मचान पर चढ़ाना पड़ता है। फलियाँ पाँच छः इञ्च लम्बी और एक इञ्च चौड़ी होती हैं। प्रत्येक फल में कम से कम दो और अधिक से अधिक चार चपटे बीज रहते हैं। फलियों की नोंक मुड़ी हुई होती है। बीज अधिकांश सफ़ेद, कुछ भूरे और धब्बेदार होते हैं।

फ्रेंच बीन की जिस भांति खेती की जाती है उसी भांति इसकी भी करनी चाहिए।

रहरिया सेम, बकला सेम या दक्षिणी ग्वार

Velvet bean *Mucuna*

इसका पौधा एक फुट से डेढ़ फुट ऊँचा होता है जिस पर गोल गोल करीब एक इञ्च लम्बी कोमल फलियाँ लगी रहती हैं। इन फलियों पर छोटे छोटे रोएँ होते हैं जो छूने से मखमल जैसे मालूम होते हैं। फलियाँ गहरे हरे रंग की होती हैं जिनके दोनों छोर कुछ काले होते हैं।

जमीन, जुताई और खाद :—साधारण जुताई से यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। खाद देने की आवश्यकता नहीं होती।

बोना :—आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में पंक्तिय में इसके बीज बोये जाते हैं। पंक्तियाँ अठारह इञ्च की दूरी पर

होनी चाहिएँ। एक एकड़ के लिए आठ दस सेर बीज की आव-
श्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें एक एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार कर सकते हैं।

फ़सल की तैयारी :—माघ-फाल्गुन से चैत्र तक इससे तर-
कारी मिलती रहती है।

उपयोग :—फलियों की तरकारी बनायी जाती है।

उदा सेम Uda sem *Mucuna capitata*

कमच Kamach *Mucuna nivea*

इनकी फलियाँ करीब छः इञ्च लम्बी होती हैं जिन पर काले मखमल जैसा रोम जमा रहता है जिसे हटा देने से हरी फलियाँ निकल आती हैं। इन्हें वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में बोना चाहिए। बीज से बीज छः इञ्च और पंक्तियाँ छः छः फीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। इनकी लताओं को सहारे की आवश्यकता होती है। बोने के समय से पाँच छः महीने में फसल तैयार हो जाती है। इनकी खेती विशेष नहीं की जाती।

दलहन की वे तरकारियाँ जिनके बीज ही काम में लाए जाते हैं

मटर Peas *Pisum sativum*

मटर दो प्रकार की होती है एक देशी, दूसरी विलाती। देशी

मटर का पौधा तीन चार फीट ऊँचा होता है और यदि सहारा न पाये तो भूमि पर गिरा रहता है। जब खेत के खेत लगाये जाते हैं तो सहारे का प्रबन्ध नहीं किया जाता। इसकी फलियाँ अधिक से अधिक दो इञ्च लम्बी होती हैं। विलायती मटर के पौधे देशी मटर के पौधों से कुछ लम्बे होते हैं। इनकी कुछ जातियाँ ऐसी भी होती हैं जिनकी ऊँचाई सिर्फ एक ही फ़ुट की होती है। ऐसी के लिए सहारे की आवश्यकता नहीं होती परन्तु उन जातियों के लिए जो तीन चार फ़ीट ऊँची होती हैं सहारे का प्रबन्ध अवश्य करना चाहिए। सहारे के लिए किसी भी पेड़ की सूखी टहनियाँ काम में लायी जा सकती हैं। इसके लिए झाऊ के पत्ते अच्छे होते हैं जो नदी-नालों के किनारे पाये जाते हैं। विलायती मटर की फलियाँ तीन चार इञ्च लम्बी होती हैं। बीज भी बड़े बड़े होते हैं। सूखे बीज कुछ सफेद और हरे रंग के होते हैं जिन पर झुर्रियाँ पड़ी हुई होती हैं। ये ऐसे मालूम पड़ते हैं मानो बीज ठीक से बन पाये हों। देशी की अपेक्षा विलायती मटर मीठी और अधिक स्वादिष्ट होती है। देशी मटर के सूखे बीज सफेद रंग के होते हैं। एक जाति ऐसा भी है जिसके बीज लाल होते हैं। यह अच्छी स्वादिष्ट नहीं होती। कुछ कड़वी सी लगती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—देशी मटर के लिए बलुआ को छोड़कर सब ज़मीन ठीक होती है। विलायती के लिए बलुआ और मटियार दोनों ही छोड़ देनी चाहिएँ। जल्दी तैयार होने वाली को बलुआ-दुमट और देर से होने वाली को मटियार-दुमट

में बोना चाहिए। देशी के लिए खाद नहीं दिया जाता। विदेशी के लिए प्रति एकड़ सवा सौ मन के क़रीब सड़ा हुआ खाद दे देना चाहिए। इनके लिए सुपरफॉसफेट या हड्डी का चूर्ण ढाई मन प्रति एकड़ के हिसाब से दिया जाय तो वह भी लाभप्रद होता है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। अन्तिम जुताई के पश्चात् विलायती मटर के लिए पानी देने की नालियाँ बना लेनी चाहिएँ। दो नालियों के बीच का अन्तर मटर की जाति पर निर्भर है। छोटी मटर के लिए ढाई तीन फ़ीट और बड़ी के लिए चार पाँच फ़ीट का अन्तर ठीक होता है। नालियाँ दो फ़ीट चौड़ी होनी चाहिएँ।

बोना :—देशी मटर नाली वाले हल से खेतों में एक एक फुट के अन्तर पर बोयी जाती है। विलायती मटर को पानी देने की नालियों के बीच की भूमि के दोनों छोर पर लगाना चाहिए। बीज इस तरह से गिराना चाहिए कि उनमें दो तीन इञ्च से विशेष अन्तर न हो। दो पंक्तियों के बीच का अन्तर दो फ़ीट से चार फ़ीट तक मटर की बाढ़ के अनुसार होना चाहिए। दोनों ही आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बोयी जाती हैं। पहाड़ों पर गर्मी में बोते हैं। एक एकड़ के लिए देशी मटर के बीज क़रीब बीस सेर और विलायती के जाति-अनुसार पन्द्रह सेर से तीस सेर तक लगते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—मटर में एक दो बार निंदाई करनी

पड़ती है। विदेशी को आवश्यकतानुसार सींचना चाहिए और पौधों के लिए सहारे का प्रबन्ध करना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—जल्दी आने वाली फ़सल पौष से फलियाँ देना शुरू करती हैं। देर वाली से फाल्गुन-चैत्र में मिलती रहती हैं। दूसरी फ़सल के लिए बीज सुखा करके चँवली के बीज की भांति रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—हरी फलियों के बीज की तरकारी बनायी जाती है। हरे बीज तरकारियों को सुखाकर रखने की रीति में दी हुई रीति से सुखाकर रक्खे जायँ तो अच्छी तरह से रह जाते हैं। कृत्रिम गर्म हवा में सुखाये जायँ तो उसका ताप परिमाण ६५ शतांश से अधिक नहीं होने देना चाहिए। तरकारी बनाने के पहले सुखाई हुई मटर के दाने पाँच छः घंटे तक पानी में फूलने के लिए छोड़ देना चाहिए। ये दाने फूलकर बिलकुल हरे दानों के समान हो जाते हैं। बीज कच्चे भी खाये जाते हैं। सूखे बीज की दाल बनायी जाती है। मटर की तरकारी रुचि-कारक, बलदायक और दस्तावर होती है।

किराओ Kirao *Pisum sativumv Var-arvense*

इसका पौधा देशी मटर के पौधे जैसा छोटे पत्ते वाला होता है। फली और बीज भी छोटे होते हैं। मटर के फूल सफेद रंग के लेकिन किराओ के गुलाबी और बैंगनी रंग के होते हैं। सूखे बीज धब्बेदार, हरे और पीले रंग के होते हैं। इसकी खेती देशी मटर की खेती की भांति होनी चाहिए।

चना Gram *Cicer arietinum*

इसके पौधे एक फुट से डेढ़ फुट ऊँचे होते हैं। फल बहुत छोटे और प्रत्येक फल में प्राय: एक एक बीज रहता है। किसी किसी में दो या तीन भी रहते हैं। इसकी कई जातियाँ होती हैं। किसी के बीज सफेद, किसी के लाल, किसी के काले और किसी के पीले होते हैं। किसी का दाना अच्छा बड़ा और किसी का किराओ के दाने इतना बड़ा होता है। तरकारी के लिए काबुली चना अच्छा होता है। इसका बीज बड़ा और सफेद रंग का होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ ज़मीन को छोड़कर साधारण जुताई से यह सब ज़मीन में हो जाता है। खाद इससे पहली फ़सल को दिया जाता है।

बोना :—यह आश्विन (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में बोया जाता है। प्रति एकड़ बीस सेर से एक मन बीज की आवश्यकता होती है। पंक्तियाँ नौ नौ इञ्च की दूरी पर होनी चाहिएँ। काबुली चनों के लिए यह अन्तर एक फुट का कर देना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—इसमें निंदाई की आवश्यकता नहीं होती परन्तु यदि जंगली पौधे निकल आवें तो उन्हें अवश्य हटा देना चाहिए। काबुली चनों में पौधों की छँटती करके उन्हें पाँच-छ: इञ्च की दूरी पर करा देना चाहिए। पौधों से शाखाएँ अधिक फूटें इसलिए ऊपर के बढ़ते हुए कोंपल तक दो बार तोड़ दिये जाते हैं। तोड़े हुए कोंपलों की तरकारी बनायी जा सकती है। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—निंदाई के समय जो कोंपलें तोड़ी जाती हैं वे बोने के समय से महीने डेढ़ महीने में तैयार हो जाती हैं। हरे बीज माघ-फाल्गुन में प्राप्त किये जाते हैं वैशाख तक फ़सल काट ली जाती है। पैदावार बीज दस बारह मन प्रति एकड़ हो जाती है।

उपयोग और गुण :—छोटे छोटे कोपलों की तरकारी बनायी जाती है। उन्हें सुखाकर भी तरकारी के लिए रख लेते हैं। हरे बीज की तरकारी और मिठाई बनायी जाती है। सूखे बीज से दाल और उसके बेसन से कई प्रकार के पकवान बनते हैं। हरे चने कच्चे भी खाये जाते हैं और भूँजकर भी खाते हैं। सूखे चने बालू में भूँजकर या पानी में भिगोकर या उबाल कर खाये जाते हैं। सर्दी के दिनों में चने के पौधों के पत्तों पर एक प्रकार का अम्ल होता है जो प्रातःकाल में ओस-बिंदु की भाँति निकला हुआ दिखलायी पड़ता है वह औषधि के लिए काम में लाया जाता है। पेट के दर्द में इसका सेवन तत्काल आराम पहुँचाता है। इसे इकट्ठा करने के लिए एक कपड़ा सुबह के वक्त पौधों पर फिराया जाता है और जब व भीग जाता है तो उसे निचोड़ लेते हैं। चना दस्तावर, बलदायक और खून को साफ करने वाला होता है। कफ, पित्त और ज्वर का नाश करता है। लू (ग्रीष्म ऋतु की गर्म हवा) लग जाने पर सूखे कोंपलों के साग का प्रयोग लाभदायक होता है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

साँयबीन Soybean *Glycine max*

इसकी कई जातियाँ होती हैं। पौधे चँवली के पौधों से कुछ छोटे होते हैं। फलियाँ किराओं की फलियों के समान होती हैं जिन पर छोटे छोटे रोएँ होते हैं। इसकी खेती चीन और जापान में बहुतायत से होती है जहाँ पर इसका उपयोग कई पदार्थ बनाने के लिए किया जाता है। इसके बीज सफेद, काले, भूरे, बादामी इत्यादि कई रंग के होते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह साधारण जुताई से सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। खाद इसे नहीं दिया जाता।

बोना :—प्रति एकड़ आठ दस सेर बीज बोये जाते हैं। बोने का समय वर्षा का प्रारम्भ है। इसकी पंक्तियाँ डेढ़ दो फीट की दूरी पर होनी चाहिएँ। बीज इस अन्दाज़ से गिराना चाहिए कि दो तीन इञ्च की दूरी पर गिरे यदि खाद के लिए या पशुओं को खिलाने के लिए बोना हो तो पंक्तियों में एक फुट का अन्तर ठीक होता है।

निंदाई और सिंचाई :—एक दो बार निंदाई करनी पड़ती है फिर तो इसकी लताएँ इतनी फैल जाती हैं कि खर-पतवार बढ़ने ही नहीं पाते। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो करनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—मार्गशीर्ष और पौष में हरी फलियों से तरकारी के लिए बीज प्राप्त किये जा सकते हैं। माघ में फसल काट ली जाती है। पैदावार बीज पन्द्रह बीस मन प्रति एकड़ हो जाती है।

उपयोग और गुण :—हरे दानों की तरकारी बनायी जाती है। पत्तियाँ पशुओं को खिलायी जाती हैं। बीज की दाल बनती है। इन्हें उबालकर या भूँजकर भी खाते हैं। कहीं कहीं क़हवे (Coffee) के बदले इसका उपयोग किया जाता है। नकली घी और चीज़ (Cheese) इत्यादि भी इससे बनाते हैं। रोटी, बिस्कुट आदि खाद्य पदार्थों के बनाने में भी इसका उपयोग किया जाता है।

तूवर, अरहर Pigeon pea *Cajanus cajan*

यह भी कई जाति की होती है। कोई सीधी, कोई अधिक फैलने वाली, किसी में फलियाँ शाखाओं पर बिखरी हुई तो किसी में गुच्छे के गुच्छे पाये जाते हैं। जाति अनुसार बीज का रंग काला, भूरा या सफेद होता है। पौधे चार फीट से आठ फीट तक ऊँचे होते हैं। फलियाँ छोटी, रोएँदार होती हैं जिनमें तीन चार बीज रहते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह बलुआ को छोड़कर सब ज़मीन में हो जाती है। जुताई सात आठ इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इसके लिए भी नहीं दिया जाता परन्तु हो सके तो बीस-पचीस सेर स्फुर प्रति एकड़ पहुँचे इतना स्फुर पूर्ता खाद दे देना चाहिए। कहीं कहीं इसकी बाढ़ इतनी अच्छी होती है कि इससे जो पत्ते खेत में झड़ते हैं उनसे भूमि का उर्वरापन गोबर का खाद देने से जितना बढ़ जाता है उतना बढ़ जाता है।

बोना :—वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में यह बोयी जाती है। प्रति एकड़ आठ दस सेर बीज की आवश्यकता होती है। पंक्तियाँ दो दो फीट की दूरी पर होनी चाहिएँ।

निंदाई और सिंचाई :—आवश्यकतानुसार निंदाई और सिंचाई करनी चाहिए। हर जगह सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। निंदाई के समय पौधों को छाँट कर उन्हें दो दो फीट की दूरी पर कर देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—जल्दी तैयार होने वाली माघ-फाल्गुन में और देर से आने वाली वैशाख तक तैयार होती है। तरकारी के योग्य हरी फलियाँ माघ से वैशाख तक मिलती रहती हैं। बीज चँवली के बीज की भाँति सुरक्षित रक्खे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—हरे बीज की तरकारी बनायी जाती है। सूखे बीज की दाल बनाते हैं। इसका भूसा पशुओं के लिए अच्छा माना गया है। सूखी टहनियाँ और पौधे टोकरियाँ बनाने और जलाने के काम में लाये जाते हैं। इसकी तरकारी और दाल रूखी और बादी करने वाली होती है परन्तु रक्त को साफ करती है।

—

प्रकरण १७

अन्य तरकारियाँ और मसाले

मकई, मक्का, Maize *Zea mays*

इसके पौधों की ऊँचाई भूमि की उर्वरा शक्ति के अनुसार पाँच फ़ीट से आठ फ़ीट तक हो जाती है। नर फूल पौधों के सिरे पर और भुट्टे पौधों के बीच धड़ पर लगते हैं। एक पौधे पर बहुधा एक, कभी दो और कभी कभी दो से अधिक भुट्टे भी आ जाते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—यह मटियार मिट्टी को छोड़कर सब में हो जाती है। जुताई साधारण छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इसे बहुत दे देना चाहिए ताकि इसके बाद वाली फ़सल को न देना पड़े। दो सौ से ढाई सौ मन प्रति एकड़ तक देना ठीक होता है।

बोना :—खाद और सिंचाई के आधार पर इसे कभी भी बो सकते हैं परन्तु साधारण तौर पर यह आषाढ़ (जून) में प्रथम वर्षा के बाद ही बोयी जाती है। प्रति एकड़ दस सेर बीज डालना चाहिए। पंक्तियाँ डेढ़ फुट से दो फीट की दूरी पर रखना ठीक होता है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों पर मिट्टी चढ़ाने का प्रबन्ध हो सके तो अच्छा है। यह क्रिया बैल या हाथ

के हल द्वारा की जा सकती है। घने पौधों की छँटती भी इसी समय करनी चाहिए। पौधों में एक फुट से डेढ़ फुट का अन्तर ठीक होता है। वर्षा ऋतु वाली फसल को पानी नहीं देना पड़ता परन्तु दूसरी को देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—दो ढाई महीने में फसल तैयार हो जाती है। आषाढ़ वाली फ़सल से भाद्रपद-आश्विन तक भुट्टे मिलते रहते हैं कुछ आगे पीछे बोने से कहीं कहीं बारहों महीने तक हरे भुट्टे प्राप्त किये जा सकते हैं।

उपयोग और गुण :—हरे भुट्टे उबालकर या आग में भूँजकर खाये जाते हैं। हरे दानों की तरकारी बहुत अच्छी बनती है। मक्का के आटे से रोटी बनायी जाती है। कई स्थानों में ग़रीबों का निर्वाह इसी से होता है। पौधे पशुओं को खिलाये जाते हैं। मक्का बड़ी बलदायक होती है परन्तु कुछ बादी करती है। भुट्टों की मूँछ का सत अन्य देशों में औषधि के काम में लाया जाता है।

सिंघाड़ा Water-nut *Trapa bispinosa*

यह तालाब या पोखरों में जहाँ पानी भरा रहता है पैदा किया जाता है। बरसात के प्रारम्भ में इसके फल पाँव से दबा-कर मिट्टी में गाड़ दिये जाते हैं। कुछ दिनों के बाद शाखाएँ निकल कर मिट्टी में फैल जाती हैं। जिनमें से फिर नयी शाखाएँ निकलती हैं। इन नयी शाखओं के पत्ते पानी की सतह पर तैरते रहते हैं। इनमें आश्विन में फूल आते हैं और कार्तिक में फल

तैयार हो जाते हैं। मार्गशीर्ष तक सब फल चुन लिये जाते हैं। फलों को तोड़ने के लिए एक लकड़ी के टुकड़े के दोनों ओर दो उलटे घड़े बाँधकर पानी में छोड़ दिये जाते हैं। फल तोड़ने वाला जैसे घोड़े पर बैठते हैं उसी प्रकार लकड़ी पर बैठकर पत्तों को चीरता हुआ तालाब में घूमता फिरता है। एक दूसरा घड़ा अपने साथ रखता है जिसमें फल तोड़कर डालता रहता है। कहीं कहीं छोटी नौकाएँ भी इस काम में लायी जाती हैं।

उपयोग और गुण :—हरे फल कच्चे या उबालकर खाये जाते हैं। सूखे सिंघाड़े का आटा फलाहार के लिए काम में लाया जाता है। यह ठण्डा, पित्तनाशक और वीर्य-वर्धक होता है।

मशरूम, छत्रक, धरती फूल, धरती फोड़

Mushrooms *Agaricus campestris*

यह एक प्रकार का छातानुमा छोटा सा पौधा होता है जो बरसात में खाद की ढेरी पर या अन्य सड़ते हुये सजीव पदार्थ पर निकल आता है। इसकी तरकारी का प्रचार विलायत में कुछ विशेष है। भारतवर्ष में पञ्जाब की तरफ कुछ लोग इसकी तरकारी खाते हैं। इसकी खेती ठण्डे देशों में आसानी से हो सकती है। भारतवर्ष में बड़ी कठिनाई से होती है। परिश्रम देखते हुये और इसकी माँग की कमी का विचार किया जाय तो इसके लिए प्रयत्न करना वृथा है। फिर भी यदि किसी की इच्छा हो तो निम्न-लिखित रीति से इसकी खेती की जा सकती है। स्मरण रहे कि सब मशरूम खाने योग्य नहीं होते। कुछ जहरीले होते हैं इस-

लिए जब खेती की जाय तो खाने वाले मशरूम की ही करनी चाहिए। जो मशरूम जल्दी टूट जाय, जिसकी टोपी अच्छी बनी हुई हो, जो सफेद हो और जिसकी टोपी के नीचे की लकीरें गुलाबी रंग की हों वह मशरूम अच्छा होता है। जो पकाने पर पीला हो जाय वह ज़हरीला होता है। तोड़ने पर जो नीला रंग दे उन्हें कभी नहीं खाना चाहिए।

कोई तलघर, गुफा या अंधेरे घर में जिसमें धूप न लगती हो इसकी खेती हो सकती है। जिस घर में मशरूम लगाना हो उस घर की फर्श पर कुछ ईंट के टुकड़े बिछाकर उनपर मिट्टी और लीद के तीन चार तह देकर उनको इतना दबाना चाहिए कि वह ज़मीन क़रीब नौ दस इञ्च ऊँची हो जाय। अन्तिम पर्त मिट्टी का होना चाहिए। फिर पानी देकर एकाध सप्ताह तक उसे सड़ाने के बाद मशरूम के टुकड़े (Spawns*) छः छः इञ्च दूर और एक इञ्च गहरे लगा देना चाहिए। फिर पानी देकर छोड़ देने से सात आठ सप्ताह में मशरूम निकल आते हैं और दो महीने तक तरकारी मिलती रहती है। पहाड़ों पर चैत्र से कार्तिक (मार्च से अक्टोबर) तक और मैदानों में श्रावण से माघ (जुलाई से फरवरी) फाल्गुन तक लगा सकते हैं।

सिंचाई :—आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिए और

* Spawns लीद, मिट्टी और गोबर में मिलाकर मशरूम सुखा करके कई दिनों तक रक्खे जाते हैं। जहाँ आवश्यकता हो वहाँ लगाकर पानी दे देने से नये मशरूम निकल आते हैं।

विशेष गर्मी की हालत में घर को फ़र्श पर भी पानी छींटते रहना चाहिए। ४८ से ५५ डिग्री (फ़ेहरनहीट) का ताप परिमाण और ७० से ८५ शतांश वातावरण की तरी (Humidity) इसकी खेती के लिए अच्छी मानी गयी है।

उपयोग और गुण :—मशरूम की तरकारी बनायी जाती है जो दस्तावर और कफनाशक होती है।

केला Plantain *Musa sapientum*

इसकी खेती इसके फल के लिए की जाती है परन्तु अन्य भाग भी काम में लाये जाते हैं। इसकी कई जातियाँ हैं। कुछ ऐसी हैं जिनसे सन निकाला जाता है, कुछ के फल पक जाने पर खाये जाते हैं और कुछ ऐसी भी हैं जिनके कच्चे केले ही तरकारी के काम में लाये जाते हैं। ऐसे केले यदि पकने दिये जायँ तो वे स्वादिष्ट नहीं होते। उसी भाँति जो केले पक जाने पर खाये जाते हैं उनकी तरकारी बनायी जाय तो वह भी स्वादिष्ट नहीं होती। तरकारी वाले केले खाने वाले केलों से कुछ बड़े होते हैं और गोल न होकर तीन कोनिये होते हैं। इनका छिलका भी कठोर होता है। केलों के थम्भ की ऊँचाई भूमि की उर्वरा शक्ति तथा केले की जाति के अनुसार आठ दस फ़ीट से बीस फ़ीट तक हो जाती है। जब थम्भ डेढ़ दो साल के हो जाते हैं तो पत्तों के बीच से एक बड़ा फूल निकलता है जिसकी पंखड़ियों में केले की कलियाँ रहती हैं। ज्यों ज्यों कलियाँ बढ़ती जाती हैं फूल की पंखड़ियाँ झड़ती जाती हैं और फूल की डंडी के चारों ओर केले

के गुच्छे बढ़ते जाते हैं। एक एक गुच्छे में दस बारह से पन्द्रह बीस केले रहते हैं और एक एक थम्भ पर जाति अनुसार चार पाँच गुच्छों से दस पन्द्रह गुच्छे रहते हैं। ये सब मिलकर घड़ कहलाते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ को छोड़कर ये सब ज़मीन में हो जाते हैं। ज़मीन की जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए और जिस स्थान पर रोप लगाये जायँ उसे कम से कम एक फुट गहरा और उतना ही लम्बा चौड़ा खोदना चाहिए। फिर उस मिट्टी में दस बारह सेर सड़ा हुआ खाद मिलाकर उससे गड़हे को भर देना चाहिए। खाद यदि कम सड़ा हुआ हो तो भी कुछ हानि नहीं है।

बोना :—केले की जाति के अनुसार दस फ़ीट से बारह फ़ीट के अन्तर पर उपर्युक्त रीति से तैयार किये हुये गड़हों में केले के रोप (Suckers) जो पुराने थम्भ के आसपास निकल आते हैं, खोदकर लगाना चाहिए। इन्हें बरसात में लगाना ठीक होता है। प्रति एकड़ प्रथम बार पौने तीन सौ से चार सौ पेड़ लगाये जाते हैं। फिर तो पुराने पेड़ फल प्राप्त कर लेने पर काटकर फेंक दिये जाते हैं और उनकी जगह जो नये पौधे निकलते हैं वे ले लेते हैं।

निदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और जहाँ आवश्यकता हो वहाँ सिंचाई करनी चाहिए। निंदाई के समय जिन थम्भ से फल प्राप्त कर लिए गये हों उन्हें काटकर एक गड़हे में डालते रहना चाहिए ताकि उनका खाद बन जाय। हर साल

बरसात के प्रारम्भ में प्रत्येक स्थान पर आधा सेर सूपरफॉसफेट या हड्डी का चूर्ण और पाव भर एमोनियम सलफेट और उतना ही पोटाश सलफेट दिया जा सके तो अच्छा होता है। पुराने थम्भ के आसपास नये रोप या पोंच (Suckers) बहुत से निकल आते हैं सो उनमें से दो दो को रखकर बाकी को निकाल देना चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—अच्छी ज़मीन और तरीदार वातावरण हुआ तो रोपने के समय से एक साल में फल प्राप्त हो जाते हैं नहीं तो डेढ़ साल में तो अवश्य आ जाते हैं। प्रति एकड़ क़रीब तीन सौ घड़ प्रति वर्ष मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण :—मांगलिक अवसर पर केले के थम्भ से मंडप बनाये जाते हैं। इनसे सन भी प्राप्त किया जाता है। पापड़ बनाने में पानी की जगह यदि इनका रस काम में लाया जाय तो पापड़ अच्छे हल्के और फैलने वाले होते हैं। थम्भ की राख से कपड़े धोये जायँ तो अच्छे साफ़ हो जाते हैं। थम्भ के बीच में एक इञ्च से डेढ़ इञ्च मोटा सफेद भाग रहता है उसकी भी तरकारी बनायी जाती है। कुछ लोग फूल की तरकारी बनाते हैं जो कृमिनाशक होती है। कुछ जाति के केले के फल भी सिर्फ़ इसी काम में लाये जाते हैं। केले का चूर्ण भी फलाहार के काम में आता है। केलों को कुछ देर पानी में उबाल कर ठण्डे पानी में डाल दिये जायँ तो छिलका जल्दी छूट जाता है। बाद में पतले पतले टुकड़े काटकर सुखा सकते हैं और चूर्ण बना सकते हैं। वायु-विकार (Dyspepsia) में इसके चूर्ण की रोटी से लाभ पहुँचता

है। कुछ जातियाँ ऐसी होती हैं जिनके पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं। इन्हें दही या दूध और चीनी के साथ मिलाकर भी खाते हैं। केला पाचनशक्ति तीव्र करता है। यह वीर्यवर्धक और बलदायक होता है। थम्भ का रस साँप के विष को नष्ट करने के लिए भी काम में लाया जाता है

पपीता, पपैया, अरण्ड ककड़ी Papaya *Carica papaga*

इसकी खेती इसके फल के लिए की जाती है जो पकने पर खाये जाते हैं परन्तु कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है जो बहुत गुणकारी होती है।

पपीते के पेड़ पन्द्रह बीस फीट ऊँचे होते हैं। कोई कोई जाति ऐसी भी होती है जिसके पौधे सात आठ फ़ीट ऊँचे होते हैं और फल ज़मीन से चार पाँच फ़ीट की ऊँचाई पर ही आ जाते हैं। पपीते के पेड़ में शाखाएँ नहीं होतीं और जो कहीं निकल आवें तो उन्हें तोड़ डालनी चाहिए। इसका कच्चा फल हरा और पका हुआ पीला होता है। अच्छी जाति के पपीते में बीज कम होते हैं और वह बहुत मीठा होता है। फलों का आकार नारियल के आकार जैसा होता है। वज़न में ये आधे सेर से दो सेर तक हो जाते हैं। लङ्का द्वीप की तरफ़ के पपीते बड़े मीठे और स्वादिष्ट होते हैं। ये दस बारह इञ्च लम्बे और पाँच छः इञ्च मोटे होते हैं और वज़न में क़रीब तीन सेर तक हो जाते हैं।

ज़मीन, जुताई और खाद :- इसके लिए दुमट ज़मीन

अच्छी होती है। जुताई छः सात इञ्च गहरी होनी चाहिए। जिस स्थान पर पौधे लगाये जायँ उसे डेढ़ फुट गहरा और एक फुट लम्बा चौड़ा खोदकर उसकी मिट्टी में आठ दस सेर खाद मिला देना चाहिए।

बोना :—आषाढ़ (जून) में इसके बीज नर्सरी में बोये जाते हैं। जब पौधे डेढ़ दो फ़ीट ऊँचे हो जायँ तो खेत में लगा देना चाहिए। नर्सरी में पौधे एक एक फुट के अन्तर पर और खेत में दस दस फ़ीट के अन्तर पर होने चाहिएँ। एक एकड़ के लिए यदि दस दस फ़ीट पर लगाये जायँ तो चार सौ पैंतीस पौधों की आवश्यकता होती है।

निंदाई और सिंचाई :—साधारण निंदाई और आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए। प्रथम वर्ष में बीच की ज़मीन में कोई फलीदार फ़सल की तरकारी भी ले लेनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—यदि ज़मीन अच्छी हुई तो लगाने के समय से एक साल में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। दूसरे और तीसरे साल में फल अच्छे आते हैं। पाँचवें और छठे साल में बहुत कम आते हैं इसलिए चौथे साल की फ़सल लेकर पेड़ों को काट देना चाहिए। वैसे तो फल साल भर तक आते रहते हैं परन्तु जाड़े के प्रारम्भ में कुछ कम आते हैं और सरदी के कारण जल्दी पकते भी नहीं परन्तु जो पकते हैं वे अधिक मीठे होते हैं।

उपयोग और गुण :—कच्चे फलों की तरकारी बनायी जाती है। इनसे दूध भी निकाला जाता है जो सुखाकर बेचा जाता है।

ऐसे दूध का उपयोग औषधि के लिए किया जाता है। इस दूध से दूध बड़ी जल्दी जम जाता है। फलों के बीज भी कहीं कहीं खाये जाते हैं। गूदे से मुरब्बा, अचार आदि भी बनाये जाते हैं। फल पाचक, दस्तावर और बलवर्धक होते हैं। बढ़ी हुई तिल्ली तथा पेट की व्याधियों के लिए इनका सेवन बड़ा अच्छा होता।

सहजन Drumsticks *Moringa oleifera*

इसकी खेती यद्यपि फलियों के लिये की जाती है तथापि जड़, पत्ते और फूल भी काम में लाये जाते हैं। इसका पेड़ एक बार लगा दिया जाय तो कई वर्षों तक फल देता रहता है। इसकी दो जातियाँ हैं। एक ऐसी जिसमें साल भर तक फल आते रहते हैं। दूसरी में माघ फाल्गुन में फूल और चैत्र वैशाख में फल आते हैं। फलियाँ छोटी अंगुली जैसी पतली और डेढ़ दो फ़ीट लम्बी होती हैं। इसके खेत के खेत नहीं लगाये जाते। बग़ीचों में घेरों के आसपास एक तरफ थोड़े से पेड़ लगा देने चाहिएँ। जहाँ लगाना हो वहाँ दो फ़ीट गढ़ा खोदकर उसकी मिट्टी में आठ दस सेर खाद मिला देने के पश्चात् बरसात में किसी अच्छे पेड़ की शाख लाकर लगा देनी चाहिए। थोड़े ही दिनों में वह जड़ें फेंककर लग जाती है। लगाने के समय से दूसरे तीसरे साल में कुछ फल प्राप्त होते हैं और फिर हर साल आते रहते हैं। जो जाति बारहमासी होती है उसमें सभी ऋतु में थोड़े बहुत फल आते रहते हैं। दूसरी से चैत्र वैशाख में मिलते हैं।

उपयोग और गुण :—जड़, पत्ते, फल और फूल सब की तरकारी बनायी जाती है। जड़ पाचक, उत्तेजक, क्षुधावर्धक और दस्तावर होती है। फूल गर्म और रूखे होते हैं। पत्तों के रस से क़ै जल्दी होती है। फल वातनाशक होते हैं। बढ़ी हुई तिल्ली और कलेजे की व्याधि में इसके सेवन से लाभ होता है।

इन फलों के सिवाय आम, इमली, कटहल, करोंदे, नींबू आदि कई फल हैं जिनकी चटनियाँ, अचार आदि बनाये जाते हैं, जिससे तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं या जिनकी तरकारियाँ भी बनायी जाती हैं। ऐसे फलों की खेती फ़लों की खेती वाले करते हैं। इस पुस्तक में इनका वर्णन कर विषय बढ़ाना अनुचित समझ कर छोड़ दिया गया है। लेखक की फलों की खेती और व्यवसाय नाम की पुस्तक में सब फलों की खेती का पूरा पूरा वर्णन दिया गया है।

कुछ मसाले

सफ़ेद ज़ीरा Cumin *Cuminum cyminum*

इसकी खेती इसके बीज के लिए की जाती है जिनसे तर-कारियाँ और चटनियाँ स्वादिष्ट और सुगंधित की जाती हैं। इसका पौधा डेढ़ दो फीट ऊँचा होता है और धनिये की भाँति फलता है। इसकी खेती मोरक्को, तुर्किस्तान और फ़ारस में बहुतायत से होती है। भारतवर्ष में भी कहीं कहीं अच्छी होती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—इसके लिए बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन अच्छी होती है। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फसल को देना ठीक होता है।

बोना :—ज़ीरा बहुधा दूसरी फसल के साथ ही लगा दिया जाता है। मेथी, अफीम आदि की क्यारियों की पारियों पर लगा देने से हो जाता है। जब अकेली इसकी फ़सल ही लेनी हो तो एक एक फुट की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए। एक एकड़ के लिए छः सात सेर बीज की आवश्यकता होती है। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) है।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें आठ नौ इंच की दूरी पर कर देना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—फाल्गुन-चैत्र में फ़सल तैयार हो जाती है। एक एकड़ से चार पाँच मन ज़ीरा प्राप्त हो जाता है। दूसरी फ़सल के लिए बीज बन्द बर्तन में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण :—बीज से तरकारियाँ और चटनियाँ सुगन्धित की जाती हैं। उनका स्वाद भी अच्छा हो जाता है। पत्तों से भोज्य पदार्थ सजाये जाते हैं। ज़ीरा पाचक, वातनाशक, ज्वरनाशक और गर्म होता है। भूँजकर दही के साथ खाया जाय तो पेचिश में लाभ पहुँचाता है।

स्याह ज़ीरा Carraway *Carum carvi*

इसकी खेती भी इसके सुगन्धित बीज के लिए की जाती है जिनसे तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। इसके पत्ते भी भोज्य पदार्थ की सजावट के लिए काम में लाये जाते हैं। खेती सफ़ेद ज़ीरे की खेती के समान ही होती है। पौधे दो तीन फ़ीट ऊँचे होते हैं। यह पाचक, गरम और बादी हरने वाला होता है।

कलौंजी, मँगरैला Simla Fennel or black cumin
Nigella sativa

इसका पौधा एक फुट से डेढ़ फुठ ऊँचा होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ-दुमट और दुमट ज़मीन में साधारण जुताई से यह हो जाती है। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना चाहिए। आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-अक्टोबर) में इसके बीज क्यारियों में बोना चाहिए। पहाड़ों

पर गर्मी में बोये जाते हैं। एक एकड़ के लिए आठ दस सेर बीज बोने पड़ते हैं। पंक्तियाँ डेढ़ डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—निंदाई के समय पौधों की छँटती करके उन्हें छः छः इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—चैत्र-वैशाख में फ़सल तैयार हो जाती है। प्रति एकड़ सात आठ मन बीज पैदा हो जाता है।

उपयोग और गुण :—तरकारी और नमकीन पकवानों को स्वादिष्ट करने तथा अचार इत्यादि में डाली जाती है। इसका उपयोग औषधि के लिए भी किया जाता है। ऊनी कपड़ों में कलौंजी के बीज रक्खे जायँ तो उनका कीट से बचाव हो जाता है।

सोआ Dill *Peucedanum graveolens*

इसकी खेती इसके बीज और पत्तियों के लिए की जाती है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—दुमट ज़मीन में जिसमें इससे पहली फ़सल को खाद दिया हो इसे बोना चाहिए। जुताई पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए।

बोना :—कार्तिक (अक्टोबर) में इसके बीज दस सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए। पंक्तियाँ एक एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। पहाड़ों पर इसे गर्मी में बोते हैं।

निंदाई और सिंचाई :—जब पौधे तीन इंच ऊँचे हो जायँ तो

उनकी छँटती करके उन्हें नौ नौ इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—चैत्र तक फ़सल तैयार हो जाती है। पैदावार प्रति एकड़ आठ दस मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण :—पत्तियाँ शोरबे और दूसरी तरकारियों में डाली जाती हैं। बीज से तेल निकाला जाता है जो औषधि के लिए काम में लाया जाता है। पेट के दर्द में बीज का उपयोग भी लाभदायक होता है। तरकारियों में भी बीज डाले जाते हैं। पत्तियों से भोज्य पदार्थ सजाये जाते हैं।

अजवायन Ajwan, Omum *Carum copticum*

इसका पौधा जीरे के पौधे जैसा डेढ़ दो फ़ीट ऊँचा होता है।

ज़मीन, जुताई और खाद :—बलुआ और मटियार को छोड़ कर सब ज़मीन में अच्छा हो जाता है। जुताई साधारण पाँच छः इञ्च गहरी होनी चाहिए। खाद इससे पहले वाली फ़सल को देना ठीक होता है।

बोना :—कार्तिक (अक्टोबर) में इसके बीज छींटकर पंक्तियों में पाँच छः सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बोये जाते हैं। पंक्तियाँ एक एक फ़ुट के अन्तर पर रखनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई :—जब पौधे दो तीन इञ्च ऊँचे हो जायँ तो उनकी छँटती करके उन्हें छः छः इञ्च की दूरी पर कर देना चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो देनी चाहिए।

फ़सल की तैयारी :—फाल्गुन तक फ़सल तैयार हो जाती है। प्रति एकड़ तीन चार मन बीज प्राप्त हो जाते हैं।

उपयोग और गुण :—नमकीन पदार्थों को स्वादिष्ट करने के लिए बीज का उपयोग किया जाता है। इनसे तेल भी निकाला जाता है। इसके सत (Thymol) का उपयोग औषधि के लिए किया जाता है। पेट के दर्द में अजवायन के बीज खाये जायँ तो दर्द छूट जाता है। अजवायन पाचक, दस्तावर और बातनाशक होता है। कफ, शूल आदि रोगों में भी इसका उपयोग किया जाता है।

लौंग Cloves *Eugenia aromatico*

इसका पेड़ तीस चालीस फ़ीट ऊँचा होता है। खेती दक्षिण भारत और लङ्काद्वीप में होती है। सब जगह नहीं हो सकती। इसके लिए बलुआ ढालू ज़मीन अच्छी मानी गई है। इसे पैदा करने के लिए इसके बीज बोये जाते हैं जो पाँच छः सप्ताह में अंकुर फेंकते हैं। जब पौधे एक एक फुट ऊँचे हो जाते हैं तो उन्हें पन्द्रह बीस फ़ीट की दूरी पर लगा देते हैं। सात आठ वर्ष में पेड़ फ़सल देने योग्य होते हैं और जब क़रीब बीस वर्ष के होते हैं तो अच्छी फ़सल देते हैं और पचास साठ साल तक फ़सल मिलती रहती है। एक एक पेड़ से प्रति वर्ष चार पाँच सेर लौंग प्राप्त किये जाते हैं। माघ-फाल्गुन में फूलों की बिना खिली कलियाँ डण्ठल सहित तोड़ ली जाती हैं। जब यह कलियाँ सूख जाती हैं तो लौंग बन जाती है।

उपयोग और गुण :—लौंग का उपयोग मसाले और औषधि दोनों के लिए किया जाता है। ये पाचक और अग्नि-वर्धक होते हैं। इनसे नेत्रों को लाभ पहुँचता है और रक्त की शुद्धि होती है। सर-दर्द, दाँत के दर्द और गठिय-बायी में इसके तेल से लाभ होता है।

काली मिर्च Pepper *Piper nigrum*

इसकी खेती इसके सूखे फलों के लिए की जाती है। इसकी लता बहुवार्षिक होती है। पत्ते पान के पत्ते के आकार के होते हैं और फल पतली पतली लताओं पर पचीस तीस की संख्या में लगते हैं। जब फल पककर लाल रंग के होने आते हैं तब तोड़कर सुखा लिए जाते हैं। सूखने पर ये काले रंग के हो जाते हैं। काली मिर्च को सफेद मिर्च बनाने के लिए सात आठ दिन तक पानी में भीगोकर रखते हैं और फिर मसलकर छिलका निकाल देते हैं। फलों को छिलका-रहित करने के लिए कलों का भी उपयोग किया जाता है।

इसकी खेती दक्षिण भारत में मलाबार और कोचीन, और लङ्का, जावा, सुमात्रा आदि द्वीपों में होती है। बोने के लिए बरसात के प्रारम्भ में लताओं के टुकड़े सात आठ फीट के अन्तर पर लगा दिए जाते हैं और लताएँ टट्टियों पर चढ़ा दी जाती हैं। बहुधा कटहल, आम, काजू आदि वृक्षों के नीचे इसे लगा देते हैं और लता उन पर चढ़ जाती है। यह भी फलती रहती है और वे वृक्ष भी फलते रहते हैं। वैसे यह पचीस तीस फीट ऊँची चढ़

जाती है परन्तु फल तोड़ने में कठिनाई न हो इसलिए इतनी ऊँची नहीं चढ़ने देते। दस बारह फीट की ऊँचाई तक चढ़ने दी जाती है। लगाने के बाद तीसरे साल से कुछ फल प्राप्त किये जाते हैं परन्तु अच्छी फसल छठे साल से आती है और पचीस तीस साल तक आती रहती है। पके फल नारंगी रंग के होते हैं ज्योंही कुछ फल पकने लगते हैं कि उन्हें तोड़कर सुखा देते हैं जिससे झुर्रियाँ पड़ जाती हैं। इसे काली मिर्च कहते हैं। फलों को भिगो कर जब छिलका छुड़ा दिया जाता है तो सफेद मिर्च बन जाती है। प्रति वर्ष चैत्र से ज्येष्ठ तक फल तोड़े जाते हैं।

उपयोग और गुण :—इनसे तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं। पापड़, अचार आदि में भी इसे डालते हैं। यह तीक्ष्ण, पाचक, क्षुधावर्धक और कृमिनाशक होती है। ठण्डी प्रकृति वालों को इसका सेवन करते रहना चाहिए।

दालचीनी Cinnamon *Cinnamonum zeylanicum*

इसकी खेती इसकी छाल के लिए की जाती है। यह भी मलाबार और लङ्का द्वीप में होती है। इसे बीज और क़लम दोनों से पैदा करते हैं। इसके पेड़ तीस चालीस फीट से पचास साठ फीट ऊँचे हो जाते हैं। लगाने के बाद तीसरे चौथे साल से फ़सल ली जाती है। इसे लगाने के लिए दस दस फीट की दूरी पर पतले पतले पेड़ के गुच्छे लगाये जाते हैं जिनमें से दो दो साल की आयु वाले पेड़ काटते रहते हैं। इन काटे हुए पेड़ों पर डेढ़ २ फुट की दूरी पर छाल की गहराई तक कटाव कर दिए जाते हैं

और फिर लम्बे चीरे देकर छाल छुड़ा ली जाती है। छुड़ाई हुई छाल को कुछ दिनों तक ढेरी में दबाकर रखते हैं और फिर साफ़ करके सुखाकर बड़े-बड़े टुकड़े बेच दिये जाते हैं। छोटे छोटे न बिकने वाले टुकड़ों से तेल प्राप्त किया जाता है। एक मन टुकड़ों से क़रीब तीन छटाँक तेल निकलता है जो औषधि के लिए काम में लाया जाता है।

उपयोग और गुण:—तरकारियों को स्वादिष्ट करने तथा औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। दालचीनी तीक्ष्ण और गर्म होती है। वायुजनित रोगों का दमन करती है। सर-दर्द में इसके तेल के लेप से लाभ पहुँचता है।

तेजपात Tejpat cinnamon *tamala obtusifolia*

तेजपात के पेड़ आसाम और पूर्वीय हिमालय के अधिक वर्षा वाले स्थानों में होते हैं। ये दालचीनी की जाति के पेड़ हैं। इनकी छाल भी दालचीनी जैसी कुछ हद तक काम में लायी जा सकती है परन्तु अधिकतर पत्ते ही मसाले के काम में लाये जाते हैं जो सुगन्धित और पाचक होते हैं। ये सुपारी तथा कटहल के पेड़ों के बग़ीचों में भी पाये जाते हैं। वैसे पेड़ों के बीज गिरने से नये पौधे निकल आते हैं तो जब लगभग एक फुट की ऊँचाई के हो जाते हैं तो उन्हें आठ दस फीट की दूरी पर लगा देते हैं। जब बीज से पौधे तैयार करते हैं तो बीज बरसात के प्रारम्भ में नर्सरी में गिराये जाते हैं जहाँ से चार पाँच साल बाद खेतों में लगा देते हैं। पौधे लगाने के समय से पाँच छः साल में पेड़ तैयार हो

जाते हैं जिनसे कार्तिक से फाल्गुन तक पत्ते तोड़ते रहते हैं। जैसे लीची के फल पत्ते और छोटी-छोटी टहनियों सहित तोड़े जाते हैं उसी भांति इनके पत्ते छोटी-छोटी टहनियों सहित तोड़े जाते हैं जिससे पेड़ों की काट-छाँट हो जाती है। पत्तों को चार पाँच दिन तक सुखा कर उनके छोटे-छोटे बण्डल बना देते हैं। जो पत्ते टूट जाते हैं उन्हें वैसे ही बाँस की टोकरियों में भरकर उनका चालान कर देते हैं। एक पेड़ से लगभग १५ सेर पत्ते प्रतिवर्ष मिल जाते हैं और पेड़ की वायु पचास से एक सौ वर्ष की मानी गयी है।

उपयोग और गुण:—पत्तों का चूर्ण गरम मसाले में डाला जाता है जिससे तरकारियाँ स्वादिष्ट होती हैं। तेजपात उत्तेजक, पाचक, अधिक पेशाब लाने वाला तथा ज्वरनाशक माना गया है।

छोटी इलायची Cardamoms *Elettaria cardamomum*

इसकी खेती दक्षिण भारत में मलाबार, मैसूर और लङ्का द्वीप में होती है। पौधे दो तीन फीट ऊँचे हल्दी के पौधे जैसे होते हैं। यह तीन हजार से चार पाँच हजार फीट की ऊँचाई वाले स्थानों में अच्छी होती है। इसकी खेती में धूप और जोर की हवा के बचाव का प्रबन्ध होना चाहिए इसलिए पहाड़ों पर जंगलों में कुछ ज़मीन साफ़ करके इसे लगा देते हैं। वहाँ पर दरख्तों से छाया मिलती है और उन्हीं से हवा की रुकावट होती है। मैसूर में कहीं कहीं इसे पनवाड़ियों में या खेतों में भी लगा देते हैं। इसे बीज से भी पैदा कर सकते हैं परन्तु बहुधा पौधों की गाँठें

(Rhizomes) ही लगायी जाती हैं। प्रत्येक स्थान पर तीन चार गाँठें लगाते हैं। एक स्थान से दूसरा स्थान पाँच छः फीट की दूरी पर रक्खा जाता है। इलायची के पौधे तीसरे साल से फलना प्रारम्भ होते हैं परन्तु अच्छी फ़सल छठे साल से प्राप्त होती है। प्रति एकड़ लगभग मन डेढ़ मन इलायची हो जाती है। फल साल भर आते रहते हैं जो पन्द्रह बीस दिन के अन्तर पर तोड़ लिए जाते हैं। अच्छी फ़सल गर्मी में प्राप्त होती है। पौधों से फल कैंची से पृथक्क किये जाते हैं। जब फल तीन चौथाई तैयार हो जाते हैं तब काट लिए जाते हैं। पूर्ण नहीं पकने दिए जाते क्योंकि पूर्ण पकने पर ये फट जाते हैं और बीज बिखर जाते हैं। फल काट लेने के पश्चात् धोकर सुखा करके बेच दिये जाते हैं। जब इनका आवरण सफ़ेद करना होता है तो गंधक की धूनी दी जाती है। ढाई मन इलायची के लिए एक सेर गंधक की आवश्यकता होती है।

उपयोग और गुण :—मिष्टान्न सुगंधित करने, मुखशुद्धि और औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इससे कफ और पित के विकारों का दमन होता है और पाचन शक्ति तीव्र होती है।

बड़ी या बंगला इलायची Big cardamoms
(*Amomum subulatum*)

इसकी जन्मभूमि नैपाल मानो गयी है। संयुक्त प्रान्त के तराई के भागों में भी यह पायी जाती है। इसके फल भूरे रंग के

इलायची जैसे तिकोनिये लेकिन आकार में इलायची से दुगने तिगुने बड़े होते हैं। बीज भी अधिक होते हैं। इलायची से सस्ते बिकने के कारण बहुत सी जगह इलायची का काम इससे लिया जाता है गरम मसाले में भी इनके बीज डाले जाते हैं। इसके फल गर्मी में तोड़े जाते हैं।

निम्न लिखित बनस्पतियों की खेती अन्य देशों में की जाती है। भारतवर्ष में अभी इनका आदर नहीं हुआ है। कहीं कहीं अंग्रेजों के बागीचों में इन्हें स्थान मिल जाता है। चूँकि इनकी खेती के अधिक प्रचार की संभावना नहीं है यहाँ पर संक्षिप्त वर्णन ही किया जाता है। यदि किसी की इच्छा हो तो थोड़ा सा स्थान इन्हें बागीचों में एक ओर दे सकते हैं।

सिसरी Sage *Salvia officinalis*

इसकी खेती इसके पत्तों के लिए की जाती है जिनसे समोसे आदि बनाये जाते हैं। इसके लिए ऊँची बलुआ जमीन अच्छी होती है। यदि सावधानी से रक्खी जाय तो यह कई साल तक लगी रहती है। आश्विन-कार्तिक में इसके बीज नर्सरी में डालना चाहिए और जब पौधे दो-तीन इञ्च ऊँचे हो जायँ तो खेतों में लगा देना चाहिए। पौधों में डेढ़ फुट का अन्तर रखना ठीक होता है। निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

सेलेरिएक Celeriac *Apium graveolens*

इसकी खेती इसके पत्ते और डण्डी के लिए की जाती है। पत्तों से तरकारियाँ स्वादिष्ट की जाती हैं और डण्डी से सलाद

बनायी जाती है। बीज पहले नर्सरी में गिरा कर जब पौधे दो तीन इञ्च ऊँचे हो जायँ तब खेतों में लगा देना चाहिए। पौधों में एक फुट का अन्तर ठीक होता है। सिंचाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

लवेन्डर Lavender *Lavendula officinalis*

इसकी खेती पत्ते और फूल के लिए विलायत में की जाती है। पत्तों से भोज्य पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं और फूल से इत्र बनाया जाता है। भारतवर्ष में इसे कहीं कहीं बाग़ीचे में, गमलों में स्थान दिया जाता है। यहाँ पर मैदानों में यह नहीं फूलता। पत्तों का उपयोग किया जा सकता है। एक बार लग जाने से यह कई साल तक लगा रहता है। पोदीना जिस रीति से लगाया जाता है उसी भाँति इसे लगाना चाहिए।

सेवारी Savory *Satureia hortensis*

इसकी खेती इटली में इसके सुगन्धित पत्तों के लिये की जाती है जिससे खाद्य पदार्थ और सलाद सुगन्धित और स्वादिष्ट किए जाते हैं। इसके बीज आश्विन-कार्तिक (सेप्टेम्बर-आक्टोबर) में लगाना चाहिए। पौधों में दो दो फ़ीट का अन्तर ठीक होता है। पत्ते सुखाकर भी रक्खे जा सकते हैं।

उदो Udo *Asalia cordata*

इसकी खेती जापान में पत्तों की डण्डियों के लिए की जाती है जो दस पन्द्रह इञ्च लम्बी होती है। वहाँ इनकी सलाद बनायी

जाती है। डंडियाँ कभी कभी सफ़ेद भी की जाती हैं। पौधे पाँच-छः फ़ीट ऊँचे होते हैं। बीज सरदी में बो सकते हैं।

ओका *Oca Oxalis crenata*

इसकी खेती पेरू (दक्षिण अमेरिका) में अधिक होती है। तरकारी वाला कन्द आलू की भाँति ज़मीन में बैठता है। यह आकार में सुपारी जैसा होता है। आलू की भाँति उबाल कर इसे खाते हैं। उसी अनुसार तरकारी भी बनायी जा सकती है। पत्तों की डण्डी से सलाद बनाते हैं। आलू की खेती के समान इसकी खेती की जा सकती है परन्तु पंक्तियों में आलू की अपेक्षा कुछ विशेष अन्तर होना चाहिए। पौधे से पौधा दो ढाई फ़ीट की दूरी पर होना चाहिए।

इसमें कुछ अम्ल की मात्रा विशेष होती है। इसलिए उसकी शांति के लिए उबालते समय थोड़ा सोडा पानी में डाला जाता है। कुछ दिन तक कन्द धूप में रख दिये जायँ तो उनके अम्ल में परिवर्तन हो जाता है और वे मीठे हो जाते हैं।

ओका क्वीना *Oca quina Ullucus tuberosus*

इसकी खेती भी पेरू (दक्षिण अमेरिका) में होती है। तरकारी वाला भाग शकरकंद जैसा ज़मीन में बैठता है। लता ज़मीन पर फैली रहती है और जगह जगह जड़ें फेंक देती हैं पत्ते के जोड़ की जगह कन्द बैठते हैं। एक एक कन्द डेढ़ दो इञ्च लम्बा होता है। इसकी खेती शकरकन्द की खेती के समान करनी चाहिए और उपयोग भी शकरकन्द जैसा ही करना चाहिए।

सोलेनम कामरसोनी *Solanum commersoni*

यह एक जाति का आलू होता है। इसकी खेती भारी ज़मीन में जिसमें कुछ पानी रुकता हो उसमें भी हो सकती है। पैदावार आलू के बराबर हो जाती है। आलू की खेती की भाँति इसकी खेती होनी चाहिए। अभी इसका आगमन भारतवर्ष में नहीं हुआ है लेकिन चूँकि इसमें पानी सहन करने की शक्ति अधिक है और पैदावार आलू के बराबर हो जाती है, सम्भव है यह बरसात में मैदानों में लगाया जा सके जब कि आलू नहीं लगाये जा सकते। और यदि इसमें व्याधिरहित होने का गुण हुआ तो और भी आदरणीय है। अभी इसके प्रयोग की आवश्यकता है। जब तक यथोचित जाँच द्वारा इसके गुण सिद्ध न हो जायँ इसके आगमन की विशेष आशा नहीं है।

परिशिष्ट १

वनस्पति शास्त्रानुसार तरकारियों का वर्ग निर्माण

Natural Orders	नाम तरकारी और मसाले ।
Amarantaceæ	चौलाई, मरसा साग, लाल साग ।
Aroideæ	अर्वी, सूरन ।
Chenopodiaceæ	ओरेक, चार्ड, चुकन्दर, पोई, बथुआ, स्पिनेक ।
Compositæ	आर्टिचोक ग्लोब, आर्टिचोक जेरुसेलम, एन्डाईव, कार्डून, कुसुम, डेन्डेलियन, लेट्यूस, शिकोरी, सॉल्सीफाई ।
Convolvulaceæ	शकरकन्द ।
Cruciferæ	केल, कोलार्डस्, क्रेस, गोभियाँ, ब्रसेल्स, स्प्राउट्स, ब्रोकोली, मूली, मोगरी, राई, रूटेबागा, शलजम, सरसों ।
Cucurbitaceæ	आल, उच्चे, ककड़ी, कद्दू, करेला, कुंदरू, खरबूजा, खीरा, घिया तरोई, चचैंल, चिचड़ा, तरबूज, तरोई, दिलपसन्द, परवल, फूट, स्क्वेश ।
Dioscoreaceæ	गराडू, रतालू, सुथनी ।
Gramineæ	मक्का ।

Labiatæ	पुदीना।
Lauraceæ	दालचीनी, तेजपात।
Leguminoseæ	खिसारी, ग्वार, चना, चवँली, बीन, तूवर, मटर, मेथी, सॉयबीन, सेम।
Liliaceæ	एसपेरेगस, प्याज़, लहसुन, लीक, शाईव, शेलॉट, शीवॉल।
Malvaceæ	भिंडी, पटुवा।
Moringæ	सहजन।
Musaceæ	केला।
Myrtaceæ	लौंग।
Onagraceæ	सिंघाड़ा।
Papaveraceæ	खसखस।
Passifloreæ	पपैया।
Piperaceæ	काली मिर्च।
Polygonaceæ	खट्टा पालक, रुबर्ब।
Portulacaceæ	कुलफ़ा साग (लुणिया)।
Ranunculaceaē	कलौंजी।
Scitamineæ	अदरक, अरारूट, इलायची, हलदी।
Solanaceæ	आलू, टमाटर, मिर्च, बैंगन।
Umbelliferae	अजवान, गाजर, ज़ीरा, धनिया, पारस्निप, पार्सली, शेरविल, स्याह ज़ीरा, सेलेरी, सोआ, सौंफ, स्किरेट।

परिशिष्ट २

भिन्न भिन्न प्रान्तों में कुछ मुख्य मुख्य तरकारियों के

चै०—चैत्र, ज्ये०—ज्येष्ठ श्रा०—श्रावण

वै०—वैशाख आषा०—आषाढ़ भा०—भाद्रपद

नाम तरकारी और पृष्ठ	बङ्गाल	बिहार	संयुक्त प्रान्त
अदरक (१६६)	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०
अर्वी (१५३)	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०	वै० से आषा०
आर्टिचोक(१६२)	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०	वै० से आषा०
आल (लौकी)	श्रा०—भा०	ज्ये०-आषा०	वै० से आषा०
(२४७)	मा०—फा०	मा०-फा०	
आलू (१४१)	आश्वि०—का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
ककड़ी (खीरा)	आषा०—श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०
(२५७)	मा०—फा०	मा०-फा०	आश्वि०-का०
ककड़ीरेती(२६०)	फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०
कद्दू (२४३)	फा०—चै०	ज्ये० से श्रा०	आषा०—श्रा०
	श्रा०—भा०	मा०—फा०	मा०—फा०
कद्दू भूरा(२४६)	ज्ये०—आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०—श्रा०
करेला (२५३)	मा०—फा०	चै० से श्रा०	चै० से श्रा०
किराओ (२८२)	आश्वि०—का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
खरबूज़ा (२६१)	फा०—चै०	फा०—चै०.	फा०—चै०
गराड़ू, रतालू१५५	चै० से ज्ये०	चै० से आषा०	चै० से आषा०
गाजर (१२७)	आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०
गोभी गाँठ(१७१)	भा० से आश्वि०	भा० से मार्ग०	भा० से का०

बोने के समय का नक्शा

आश्वि०—आश्विन मार्ग०—मार्गशीर्ष माघ—माघ
का०—कार्तिक पौ०—पौष फा०—फाल्गुन

पञ्जाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बम्बई और मद्रास	पहाड़ों पर
ज्ये०-आषा०	आषा०	आषा०-श्रा०	फा०-चै०
ज्ये०-आषा०	आषा०	आ०-श्रा०	फा०-चै०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	श्रा०	फा०-चै०
ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	माघ०-फा०	फा०-चै०
आश्वि०-का	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	फा० से वै०
मा०-फा०	का०	माघ	
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	ज्ये०—आषा०
		माघ-फा०	
फा०-चै०	फा०-चै०	फा०-चै०	ज्ये० से भा०
आ० -श्रा०	आषा०-श्रा०	चैत्र-वैशाख	फा० से ज्ये०
मा०-फा०			
आ०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आ०-श्रा०	—
फा० से आषा	आषा-श्रा०	माघ-फा०	—
आश्वि० फा	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	फा० से ज्ये०
फा०-चै०	फा०-चै०	फा०-चै०	ज्ये० से भा००
ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	फा० से आषा०	फा० से० ज्ये०
आश्वि०-का	श्रा० से का०	श्रा० से मार्ग०	फा० से वै०
भा० से का०	भा० से का०	भा० से का०	फा० से ज्ये०

नाम तरकारी और पृष्ठ	बङ्गाल	विहार	संयुक्त प्रान्त
गोभीफूल (२२४)	भा० से आश्वि०	श्रा० से का०	श्रा० से का०
गोभीबँधा (१९३)	भा० से आश्वि०	भा० से का०	मा०-का०
ग्वार (२७१)	—	आषा०-श्रा०	आषा० श्रा०
घियातरोई (२५२)	चै० से ज्ये०	ज्ये०-आषा० साघ	वै० से आषा० साघ
चना (२८३)	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
चँवली (२६९)	—	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०
चिचड़ा (२४९)	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०
चुकन्दर (१३५)	आश्वि०-का०	भा० से का०	श्रा० से पौ०
टमाटर (२३२)	भा० से का०	श्रा० से का०	श्रा० से का०
तरबूज़ (२६४)	मा०—फा०	पौ० से फा०	मा०-फा०
तरोई (२५०)	चै० से ज्ये०	ज्ये०-आषा० साघ	ज्ये०-आ०
तूवर (२८५)	आषा०-श्रा०	आषा० श्रा०	आष०
धनियाँ (२२०)	आश्वि०-का०	मार्ग०-पौ०	का०-मार्ग०
परवल (२३०)	आश्वि-का०	आ०-श्रा० आश्वि०-का०	ज्ये०-आषा०
प्याज़ (१९४)	भा० से मार्ग०	मार्ग० से मा०	का०-मार्ग०
बैंगन (२३६)	ज्ये०-आषा० आश्वि०-का० मा०—फा०	ज्ये०-आषा० आश्वि०-का० मा०- फा०	ज्ये०-आषा० आश्वि०-का० मा०-फा०

पञ्जाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बम्बई और मद्रास	पहाड़ों पर
श्रा० से का०	भा०-आश्वि०	भा० से आश्वि०	फा० से वै०
श्रा० से का०	भा० से आश्वि०	भा० से आश्वि०	फा० से ज्ये०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	फा०-चै०
ज्ये०-आषा०	ज्ये० आषा०	ज्ये०-आषा०	—
आश्वि०-का	आश्वि०-श्रा०	आश्वि०-का०	फा०-चै०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	चै०-वै०
ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आश्वि०-का०	आश्वि०	आषा० से पौ०	चै०-वै०
श्रा० से का०	श्रा० स का०	श्रा० से पौ०	वै०-ज्ये०
मा०-फा०	माघ०-फा०	माघ-फा०	—
श्रा०-आश्वि०			
ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आषा०	आषा०	आषा०	—
आश्वि०-का०	आश्वि० से पौ०	का० से पौ०	फा० से ज्ये०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आश्वि०-का०	मा० से का०	भा० से पौ०	चै० से ज्ये०
आषा०-श्रा०	ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	ज्ये० से श्रा०
आश्वि०-का०	माघ-फा०	माघ-फा०	

नाम तरकारी और पृष्ठ	बङ्गाल	बिहार	संयुक्त प्रान्त
ब्रसेल्स स्प्राउट्स (१६६)	आश्वि०-का०	भा० से का०	भा० से का०
भिंडी (२३८)	ज्ये० से भा०	आषा०-श्रा० माघ	चै० से आषा०
मटर (२७६)	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
मक्का (२८८)	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	वै०से आषा०
मिर्च (२४०)	ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा० मा०-फा०
मूली (१३०)	आषा० से माग०	आषा०से पौ०	आषा०से पौ०
मेथी (२०२)	आश्वि०-का०	आश्वि०सेपौ०	का० से मा०
मोगरी (२३८)	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
लेट्यूस (१८४)	आश्वि०-का०	आश्वि० से मार्ग०	आश्वि०से पौ०
शकरकन्द (१४६)	आश्वि०-का०	आश्वि०-का० माघ	आषा०
शलजम (१३३)	भा०-आश्वि०	श्रा०-भा० आश्वि० का० (विदेशी)	श्रा०सेआश्वि०
सरसों (२०६)	आश्वि०-का०	आश्वि०	आश्वि०-का०
साग (२१२)	चै० से आषा०	वै० से भा०	वै० से भा०
सेम (२७४)	आषा० से भा०	आषा०-श्रा०	आषा०
ब्रॉड बीन (२७५)	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
फ्रेञ्चबीन (२७६)	आश्वि०-का०	भा० से का०	भा० से का०
सूरन (१५६)	आषा०-श्रा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०
हल्दी (१६३)	ज्ये०-आषा०	आषा०	ज्ये०-आषा०

पञ्जाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बम्बई और मद्रास	पहाड़ों पर
आश्वि०-का०	भा० से का०	भा० से का०	वै० से ज्ये०
ज्ये०-आष०	ज्ये०-आषा०	आ०-श्रा०	वै० से आषा०
आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	फा० से ज्ये०
ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	आषा०	चै० से भा०
का०-चै०	भा०-आश्वि०	भा० से मार्ग०	चै० से ज्ये०
भा० से० का०	भा० से का०	भा० से पौ०	चै० से ज्ये०
आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि-का०	चै० से ज्ये०
आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	चै० से ज्ये०
आश्वि०सपौ०	आश्वि०-का०	श्रा० से माघ	चै० से ज्ये०
	माघ०-फा०		
आषा०	आषा०	आषा०	—
		आश्वि०-का०	
भा०-आश्वि०	भा० से का०	आश्वि०-का०	
			चै० से आषा
आश्वि०-का०	आश्वि०	आश्विन	चै०से आश्वि०
वै० से भा०	वै से भा०	वै० से भा०	ज्ये०-आषा०
ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०—आषा०	वै० से श्रा०
आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	का० से पौ०	चै० से आषा०
आश्वि०-का०	भा० से आश्वि०	आश्वि०-का	वै०-ज्ये०
ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०—आषा०	—
ज्ये०-आषा०	आषा०	आषा०—श्रा०	फा०—चै०

श्री

परिशिष्ट ३

साग-भाजियों में रासायनिक पदार्थों की मात्रा

शरीर के निर्माण, वृद्धि तथा जीर्णोद्धार निमित्त जिन भोज्य पदार्थों का उपयोग किया जाता है उनमें जल, आमिष जातीय (Proteids), सर्करा जातीय (Carbohydrates), स्नेह जातीय (Fats), तन्तुयुक्त (Fibre), कुछ लवण (Salts) और खाद्योज (Vitamins) पाये जाते हैं। इनमें से अन्तिम पदार्थ बहुत ही न्यून मात्रा में रहते हैं तथापि उनका स्वास्थ्य से अत्यन्त ही घनिष्ट सम्बन्ध है। ऐसे पदार्थों की आवश्यकता तथा उपयोगिता का विस्तारित वर्णन परिशिष्ट ४ में दिया गया है। यहाँ पर अन्य पदार्थों का कुछ वर्णन किया जाता है।

जल—यह पानी के रूप में वैसे तो काम में लाया ही जाता है परन्तु अन्य खाद्य सामग्री में भी यह उपस्थित रहता है। जल का महत्व सबको विदित ही है। खाद्य पदार्थ इसी में घुलते हैं और घुले हुए पदार्थों का शरीर के अवयव तरल पदार्थ के रूप में शोषण करते हैं, रक्त का दौरा बना रहता है और पसीने द्वारा अनावश्यक पदार्थ बाहर निकलते हैं। शरीर के कोठे को शुद्ध

कर अनावश्यक पदार्थों को मल-मूत्र के रूप में बाहर फेंकने में भी जल सहायक होता है।

आमिष जातीय पदार्थ :—इन्हें मांसोत्पादक पदार्थ भी कहते हैं। इन्हीं से बच्चों के शरीर के अङ्ग बनते हैं और परिश्रम द्वारा मनुष्यों के पट्ठों तथा अन्य अङ्गों का जो ह्रास होता है उनका जीर्णोद्धार होता है।

सर्करा जातीय पदार्थ :—इनसे शरीर में उष्णता तथा कार्य करने की शक्ति पैदा होती है।

स्नेह जातीय पदार्थ :—इनमें गुण तो सर्करा जातीय पदार्थों के ही होते हैं परन्तु उनसे सवा दो गुणे अधिक गुणदायी होते हैं।

तन्तु युक्त पदार्थ :—इनका शरीर के पोषण से तो कोई संबंध नहीं परन्तु सम्भवतः ये मल त्यागने में सहायक होते हैं।

लवण :—ये अम्ल तथा क्षार या धातुओं के मेल से बने हुए होते हैं। वैसे तो अपनी अपनी जगह सभी महत्व रखते हैं परन्तु कइयों की आवश्यकता बहुत न्यून मात्रा में होती है जो भोजन सामग्री द्वारा प्राप्त हो जाती है। इनमें विशेष महत्व स्फुर (Phosphorous) चूना और लोहे के लवणों का होता है। ताँबे की अनुपस्थिति में लोहा काम नहीं कर सकता इसलिए इसे भी महत्व दिया जा सकता है परन्तु यह बहुत ही न्यून मात्रा में चाहिए। स्फुर का उपयोग दिमागी कोषों की बनावट में होता है। चूने के साथ मिलकर यह हड्डियाँ बनाता है। चूने का असर हृदय पर भी

पड़ता है। लोहे का सम्बन्ध रक्ताणु (Red blood corpuscles) की बनावट से है।

उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए प्रत्येक मनुष्य के भोजन में एक चतुर्थांश भाग सागभाजी का होना चाहिए। ऐसी सूरत में कौनसी साग-भाजियों द्वारा भिन्न भिन्न पदार्थों की पूर्ति कितनी होती है यह जानने के लिए यहाँ एक सारणी दी जाती है जिनसे पाठक गणना कर सकते हैं।

साग-भाजियों में रासायनिक

(ये अङ्क बाज़ार में जैसी साग-भाजियाँ मिलती हैं. उनके न्यूनाधिकता हो सकती है, उसी प्रमाणानुसार दूसरे पदार्थों में भी

नाम	जल %	सर्करा जातीय %	आमिष जातीय %	स्नेह जातीय %
अदरक	८०·९	१२·३	२·३	०·९
अर्वी	७३·१	२२·१	३·०	०·१
आल, लौकी	९६·३	२·९	०·२	०·५
आलू	७४·७	२२·९	१·६	०·१
ककड़ी, खीरा	९६·४	२·८	०·४	०·१
कद्दू	९२·६	५·३	१·४	०·१
कद्दू भूरा	९६·०	३·२	०·४	०·१
करेला	९२·४	४·२	१·६	०·२
कुसुम	८९·९	५·१	३·३	०·७
केला कच्चा	८३·२	१४·७	१·४	०·२
खिसारी(पत्ती)	८४·२	७·६	६·१	१·०
गाजर	८६·०	१०·७	०·९	०·१
गोभी गाँठ	९२·१	५·१	१·१	०·२
गोभी फूल	८९·४	५·३	३·५	०·४
गोभी बन्धा	९०·२	६·३	१·८	०·१
ग्वार	८२·५	९·९	३·७	०·२
चने की कोंपल	६०·६	२७·२	८·२	०·५

पदार्थों की मात्रा*

विश्लेषण के हैं। तरकारियों की आयु अनुसार जल की मात्रा में कुछ हेर-फेर होगा।)

तन्तु युक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		चूना Ca. %	स्फुर P. %	लोहा Fe. %
२·४	१·२	०·०२	०·०६	०·००२६
—	१·७	०·०४	०·१४	०·००२१
—	०·५	०·०२	०·०१	०·०००७
—	०·६	०·०१	०·०३	०·०००७
—	०·३	०·०१	०·०३	०·००१५
—	०·६	०·०१	०·०३	०·०००७
—	०·३	०·०३	०·०२	०·०००५
०·८	०·८	०·०२	०.०७	०·००२२
—	१·०	०·१८	०·०६	०·००३६
—	०·५	०·०१	०·०३	०·०००६
—	१·१	०·१६	०·१०	०·००७३
१·२	१·१	०·०८	०·०३	०·००१५
—	०·७	०·०२	०·०४	०.०००४
—	१·४	०·०३	०·०६	०·००१३
१·०	०·६	०·०३	०·०५	०·०००८
२·३	१·४	०·१३	०·०५	०·००५८
—	३·५	०·३१	०·२१	०·०२८३

नाम	जल %	सर्करा जातीय %	आमिष जातीय %	स्नेह जातीय %
चिचड़ा	९४·१	४·४	०·५	०·३
चुकन्दर	८३·८	१३·६	१·७	०·१
टमाटर	९४·५	३·९	१·०	
टिण्डा	९२·३	५·३	१·७	०·१
तरोई	९५·४	३·७	०·५	०·१
धनिया	८७·९	६,५	३·३	०·६
पालक	९१·७	४·०	१·९	०·९
पार्स्निप	७२·४	२३·२	१·३	०·३
पार्सेली	६८·४	१९·७	५·९	१·०
प्याज	८६·८	११·६	१·२	०·१
फ्रेंचबीन	९१·४	४·५	१·७	०·१
बथुआ	८७·९	३·७	४·७	०·४
बैंगन	९१·५	६·४	१·३	०·३
ब्रसेल्स—स्प्राउट्स	८४·६	९·२	४·७	०·५
भिण्डी	८८·०	७·७	२·२	०·२
मक्का (हरी)	४९·४	१·१	४·३	०·५
मटर	७२·१	१९·८	७·२	०·१
मिर्च हरी	८२·६	६·१	२·९	०·६
मूली	९४·४	४·२	०·७	०·१
मेथी	८१·८	९·८	४·९	०·९
लहसुन	६२·८	२९·०	६·३	०·१

तन्तु युक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		चूना Ca. %	स्फुर P. %	लोहा Fe. %
—	०.७	०.०५	०.०२	०.००१३
—	०.८	०.२०	०.०६	०.००१०
—	०.५	०.०१	०.०२	०.०००१
—	०.६	०.०२	०.०३	०.०००६
—	०.३	०.०४	०.०४	०.००१६
—	१.७	०.१४	०.०६	०.०१००
—	१.५	०.०६	०.०१	०.००५०
१.०	१.१	०.०५	०.०४	०.०००४
१.८	३.२	०.३६	०.२०	०.०१७६
—	०.४	०.१८	०.०५	०.०००७
१.८	०.५	०.०३	०.०३	०.००१७
—	३.३	०.१५	०.०८	०.००४२
—	०.५	०.०२	०.०६	०.००१३
—	१.०	०.०५	०.०८	०.००२३
१.२	०.७	०.०६	०.०८	०.००१५
—	०.७	०.०१	०.१०	०.०००७
—	०.८	०.०२	०.०८	०.००१५
६.८	१.०	०.०३	०.०८	०.००१०
—	०.६	०.०५	०.०३	०.०००४
१.०	१.६	०.४७	०.०५	०.०१६६
०.८	१.०	०.०३	०.३१	०.००१३

नाम	जल %	सर्करा जातीय %	आमिष जातीय %	स्नेह जातीय %
लीक	७८·६	१७·२	१·८	०·१
लेट्यूस	६२·६	३·०	२·१	०·३
शकरकन्द	६६·५	३१·०	१·२	०·३
शलजम	६१·१	७·६	०·५	०·२
सरसों	८४·६	७·१	५·१	०·४
साग	८५·८	५·७	४·६	०·५
सूरन	७८·७	१८·४	१·२	०·१
सेम	८२·४	१०·०	४·५	०·१

* इस सारणी के अङ्क Dr. Aykroyd, Director, Bull. No. 23, 1941 से लिए गये हैं।

† साग-भाजियों में अन्य खनिज पदार्थों की मात्रा, चूना कम कर देने से मालूम की जा सकती है।

तन्तु युक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		चूना Ca. %	स्फुर P. %	लोहा Fe.
१·३	०·७	०·०५	०·०७	०·००२३
०·५	१·२	०·०५	०·०३	०·००२४
—	१·०	०·०२	०·०५	०·०००८
—	०·६	०·०३	०·०४	०·०००४
१·८	२·५	०·३०	०·११	०·०१२५
—	३·१	०·५०	०·१०	०·०२१४
०·८	०·८	०·०५	०·०२	०·०००६
२·०	१·६	०·०५	०.०६	०·००१६

Nutrition Research Laboratories, Kooncor, Health

स्फुर और लोहे की मात्रा को पूर्ण खनिज पदार्थ की मात्रा में से

श्री

परिशिष्ट ४

साग-भाजी और खाद्योज (विटामिन्स)

परिशिष्ट नं० ३ में यह बताया गया है कि खाने की वस्तुओं में पोषक पदार्थों के सिवाय कुछ ऐसे पदार्थ भी होते हैं जिन्हें खाद्योज पदार्थ या 'विटामिन्स' कहते हैं।

यदि हमारे भोज्य पदार्थों में विटामिन्स नहीं हों तो शरीर की बाढ़ और बनावट अच्छी नहीं होती। व्याधियों से बचने की शक्ति का ह्रास हो जाता है और सूखा, बेरीबेरी, स्कर्वी, पेलेग्रा इत्यादि कई प्रकार की व्याधियाँ आक्रमण कर बैठती हैं।

चूँकि हमारा देश शाकाहारियों का देश है और अन्य खाद्यों के सिवाय साग भाजी द्वारा भी इन पदार्थों की पूर्ती हो सकती है, यहाँ पर पाठकों की जानकारी के लिए दो चार शब्द दे दिये जाते हैं ताकि पाठक गण इस जानकारी से लाभ उठायें।

अभी तक खोज द्वारा जो खाद्योज पदार्थ निकाले गए हैं वे बहुत से हैं और उनकी संख्या बढ़ती जा रही है। इनका नामकरण भी ठीक से नहीं हुआ है। अभी इन्हें अँग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों का नाम दे रक्खा है जैसे विटामिन 'ए', विटामिन 'बी', 'सी' आदि।

नित्य के भोजन में आटा, दाल, चावल, दूध, घी, व मांस इत्यादि जो पदार्थ काम में लाये जाते हैं उनमें से अधिकांश में एक या अनेक विटामिन्स रहते हैं परन्तु यहाँ पर सिर्फ उन विटामिन्स का वर्णन दिया जाता है जिनके विषय में काफी छानबीन हो चुकी है और जो साग भाजी में पाये जाते हैं या जिनका परोक्ष रूप से साग भाजी से सम्बन्ध है—जैसे 'ए', 'बी', 'सी', 'डी' और 'जी'।

भिन्न भिन्न विटामिन्स का वर्णन देने से प्रथम यह बता देना उत्तम होगा कि साग भाजियों को काटकर धोने से कुछ विटामिन्स घुलकर बह जाते हैं इसलिए काटने से पहले ही उन्हें धो डालना चाहिए। अगर बाद में धोने की आवश्यकता पड़े तो अधिक नहीं धोना चाहिए।

पकाने से भी विटामिन्स का कुछ अंश नष्ट हो जाता है इसलिए आवश्यकता से अधिक नहीं उबालनी चाहिए। बहुधा मठा (छाछ) डालकर साग-भाजी खट्टी की जाती है। ऐसा करना अच्छा है क्योंकि इससे विटामिन्स कम नष्ट होते हैं।

विटामिन 'ए' :—

इनका सम्बन्ध आँख की रोशनी से बहुत अधिक है। इनके पूर्ण अभाव में रतौंधी आने लगती है और अगर इनकी मात्रा कम रही तो आँख की ज्योति कम हो जाती है। इनके सेवन से केवल रतौंधी वाले ही नहीं बल्कि जो आँखों की दुर्बलता के कारण भिन्न

भिन्न रंगों को नहीं बता सकते (Colour blindness) उनकी भी आँखें ठीक हो जाती हैं।

इसके सिवाय यदि निम्न लिखित अन्य लक्षण पाये जाए तो समझना चाहिए कि हमारे शरीर में विटाविन 'ए' की कमी है और ऐसे पदार्थ भोजन के काम में लाना चाहिए जिनसे इनकी पूर्ति हो। आँखों का फूलना, थोड़े से परिश्रम से थकावट मालूम होना, सिर में दर्द रहना, जल्दी जल्दी सर्दी लगना, मन का उत्साहहीन होना, त्वचा में रूखापन, बालों की चमक कम पड़ना और उनका झड़ना, दाँतों का खराब होना और जल्दी गिर पड़ना. खाँसी आना, बच्चे के फेफड़े तथा आंतड़ियों का बिगड़ना, बच्चों के शरीर की बाढ़ का रुकना, वज़न नहीं बढ़ना और फोड़े फुंसी होना इत्यादि। संक्षेप में यह कहना चाहिए कि इसकी कमी से शरीर में व्याधियों को रोकने के शक्ति कम हो जाती है। ऐसी सूरत में हमें ऐसी साग भाजी काम में लानी चाहिएँ जिनसे विटामिन 'ए' की पूर्ति हो।

यथार्थ में देखा जाय तो साग भाजियों में विटामिन 'ए' नहीं होते परन्तु उनका अग्रगामी 'केरोटीन' (Carotene) नामक एक पदार्थ होता है जिससे यकृत (कलेजा) विटामिन 'ए' को बना लेता है। निम्न लिखित सूची से ज्ञात होगा कि केरोटीन किन किन साग भाजियों में पाया जाता है।

हरा धनिया, साग, चने की भाजी, खिसारी की भाजी, कुसुम, सेलेरी, मेथी, पार्सली, गाजर, पोदीना, पालक, लेट्यूस,

बन्धा गोभी, हरी मिर्च, सूरन, ग्वार, टमाटर, फ्रेन्चबीन, करैला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, चिचड़ा, लहसुन, मटर, कद्दू, अदरक, भिंडी, तरोई, हरी मक्का, आलू, अर्वी, फूलगोभी, गाँठगोभी, पारिस्नप, टिण्डा, प्याज, सिंघाड़ा, शकरकंद तथा बैंगन इत्यादि।

उपर्युक्त सूची 'केरोटीन' की न्यूनाधिक मात्रा के अनुसार दी गई है। सबसे अधिक मात्रा धनिया में और सबसे कम शकरकन्द में होती है लेकिन धनिया अधिक नहीं खाया जा सकता इसलिए इनमें से जो चीज़ अधिक मात्रा में खाने जैसी हो उनका उपयोग करना चाहिए। इसी क्रमानुसार आगे की सूचियाँ भी दी गई हैं।

विटामिन 'बी' :—

इस पदार्थ के अभाव से शरीर निर्बल हो जाता है, स्मरणशक्ति कम हो जाती है और बहुधा बेरीबेरी नाम का रोग हो जाता है, निम्न लिखित लक्षणों से विटामिन 'बी' की आवश्यकता समझनी चाहिए।

शरीर की कमज़ोरी, पट्ठों का ढीला पड़ना, अङ्गों में दर्द होना। पैरों का कमज़ोर होना, झिनझिनी आना, हाथ पैरों में जलन होना, पैर तथा मुँह फूलना, पाकाशय में गड़बड़ी होना, भूख कम लगना, कब्ज़ियत रहना, श्वास जल्दी जल्दी चलना, दिल की धड़कन का बढ़ जाना, स्वभाव में चिड़चिड़ापन आन आदि।

निम्न लिखित साग भाजियों का सेवन करने से विटामिन 'बी' की पूर्ति हो सकती है।

मटर, फूलगोभी, पार्स्निप, लेट्यूस, अर्वी, लीक, मेथी, पालक, चुकन्दर, गाजर, मूली, कच्चू, बन्धागोभी, प्याज, शलजम, ककड़ी, फ्रेन्चबीन, गाँठगोभी, गराडू, रतालू, करेला, टमाटर, तरोई, भिण्डी, कद्दू, सूरन, आलू, बैंगन इत्यादि।

विटामिन 'सी' :—

'सी' के अभाव में शरीर निर्बल हो जाता है और स्कर्वी नामक व्याधि आक्रमण कर बैठती है। निम्न लिखित लक्षण 'सी' का अभाव दर्शाते हैं।

मसूढ़ों का फूलना, उनमें से खून का बहना तथा कभी-कभी घाव हो जाना, दाँतों का जल्दी गिरना, बदबूदार श्वास, जीभ का फूलना व लाल हो जाना, तिल्ली का बढ़ना, भूख कम लगना, कब्जियत रहना, हाथ पैरों में दर्द होना, मुँह पर छोटी छोटी फुंसियों का होना, तथा आँखों में दर्द होना, त्वचा का रूखापन, शरीर का निर्बल होना, स्त्रियों में मासिक श्राव की अधिकता और वजन घटना इत्यादि। जब व्याधि बहुत बढ़ जाती है तो कभी कभ हृदय की गति बन्द हो जाती है और शरीरान्त हो जाता है। विटामिन 'सी' के सेवन से उपर्युक्त व्याधियों से बचने के सिवाय शरीर में यदि कोई घाव हो तो वे शीघ्र भर जाते हैं।

निम्न लिखित साग भाजियों के उपयोग से 'सी' विटामिन की पूर्ति हो सकती है।

पार्सली, मिर्च, साग, धनिया, बन्धा गोभी, चुकन्दर, करेला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, गाँठगोभी, सेलेरी, फूलगोभी, ग्वार, पालक, शलजम, रूबर्ब, टमाटर, शकरकन्द, बैंगन, आलू, मूली, भिण्डी, पारस्निप, लेट्यूस, फ्रेञ्चबीन, लहसुन, सेम, प्याज, लीक, अदरक, ककड़ी, गाजर, कद्दू इत्यादि ।

विटामिन 'डी':—

हड्डियों की बनावट में इनका बहुत महत्व है। हड्डियाँ चूना और स्फुर के मेल से बनती हैं जिनका उचित परिमाण में उपयोग 'डी' की उपस्थिति में ही हो सकता है। इसके अभाव से बच्चों को सूखा रोग हो जाता है। हड्डियाँ ठीक से नहीं बन पातीं और दाँत भी पूरे नहीं बनते! हड्डियाँ पतली और कमजोर हो जाती हैं। पेट बाहर निकल आता है और पसलियाँ दब जाती हैं। सिर बड़ा हो जाता है। भौं के बाल लम्बे हो जाते हैं। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। गर्दन और सिर में पसीना बहुत आता है।

साग भाजियों द्वारा तो इस पदार्थ की पूर्ति नहीं हो सकती है क्योंकि यह बहुत कम मात्रा में कुछ ही सब्जियों में पाया जाता है। परन्तु यदि सब्जियों द्वारा विटामिन 'ए' की पूर्ति होती रहे तो दूध द्वारा जो विटामिन 'डी' मिलता है उसका पूर्ण उपयोग हो जाता है। मटर, धनिया, पोदीना, अङ्कुरे हुए मूँग तथा चने में 'डी' पदार्थ पाया जाता है।

विटामिन 'जी' :—

इसके अभाव से शरीर की बाढ़ ठीक से नहीं होती। कभी कभी "पेलेग्रा" नाम की व्याधि हो जाती है। यह व्याधि अमेरिका, इटली और रूस में जहाँ जहाँ मक्का खाने का प्रचार है वहाँ अधिकतर होती है। 'जी' के अभाव से शरीर कमजोर हो जाता है और पाचन शक्ति बिगड़ जाती है। शलजम, पालक, फूलगोभी, शकरकन्द, गाँठगोभी, आलू, मूली, टमाटर, प्याज आदि के सेवन से विटामिन 'जो' की पूर्ति होती है।

लेखक की "फलों की खेती और व्यवसाय" पर कतिपय सम्मतियाँ

Approved by the Education Departments of Delhi, United Provinces, Bihar and Orissa and Central Provinces.

"......The information contained in the book is brief but systematically arranged so as to be of use in the teaching of elementry horticulture in vernacular agricultural and bias schools. The book contains several practical hints on fruit culture and other fruit problems and may be of considerable use to the ordinary fruit-grower"—**Agriculture and Live-stock in India, issued under the authority of the Imperial Council of Agricultural Research, New Delhi.**

"..........has very successfully attemted to place before the Hindi-reading public a comprehensive book on the subject ....The instructive illustrations and simple style will, I am sure, make this book very useful not only to those interested in fruit cultivation but will cause it to be a book of considerable value in any school library and in particular where education is being given a rural bias."—**(Sd.) R. G. Allan, Director of Agriculture, U. P.**

"..........With the fund of information contained in the book and its systematic design the book is eminently fitted to guide the efforts of practical grower as well as to unify the knowledge of the student of agriculture."—**The Leader, Allahabad.**

"......A comprehensive study of the science of fruit-growing written in a simple and a chaste style......We recommend the book to those interested in fruit-growing............"—**The Hindustan Times, Delhi.**

" ....इतने अच्छे ढंग से लिखी गयी है कि इस विषय से पहले से अनुभव न रखने वाले भी इससे यथेष्ट लाभ उठा सकते हैं।..... पुस्तक की उपयोगिता देखते हुए यह सर्वथा प्रचार पाने योग्य है।"—**विश्वमित्र, कलकत्ता।**

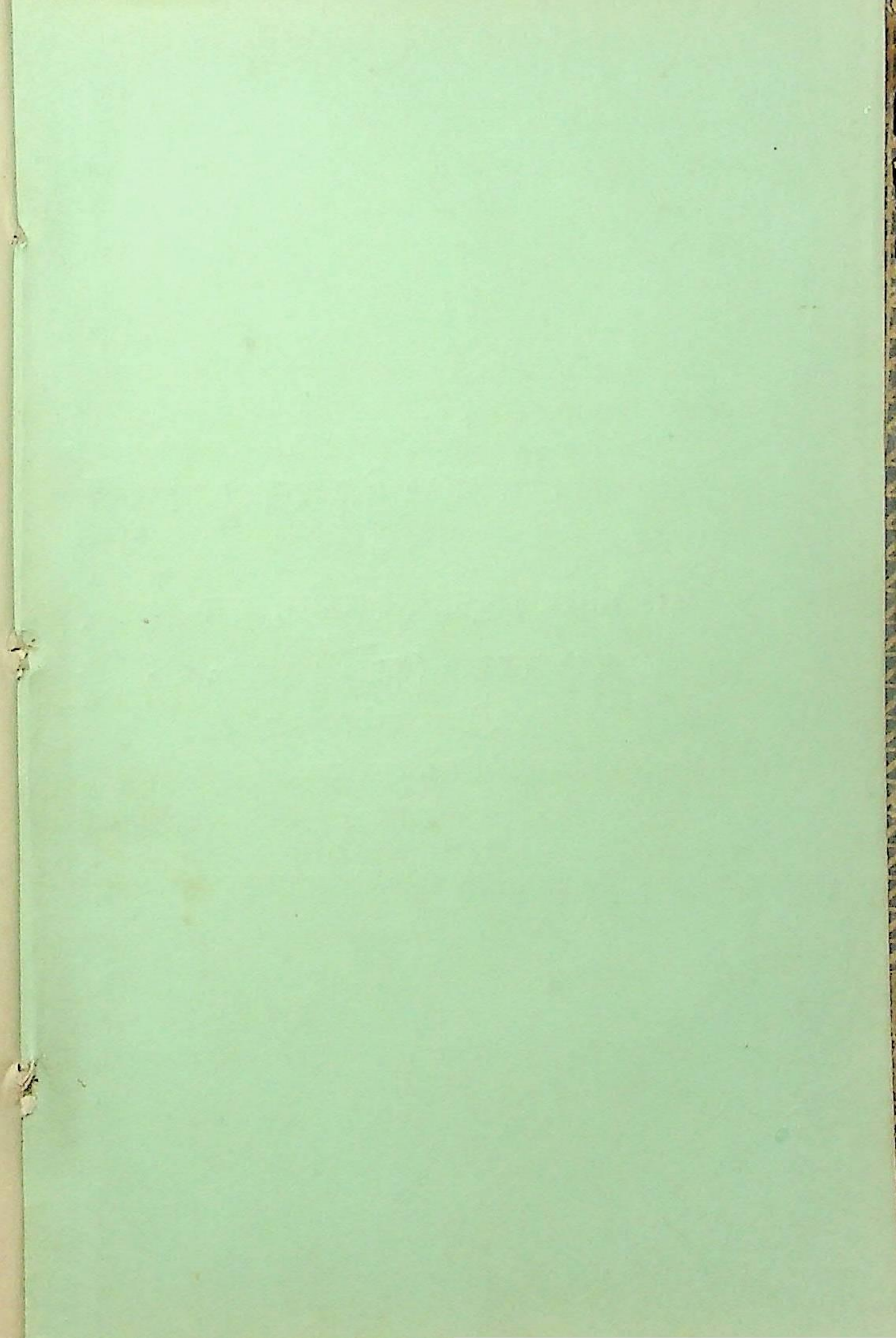
"……साधारण पढ़ा लिखा भी इससे पूरा लाभ उठा सकता है…। प्रति वर्ष हज़ारों युवक स्कूल और कालेजों से निकल कर नौकरी की खोज में मारे मारे फिरते हैं। वे यदि पुस्तक में बतायी हुई रीति से फलों की खेती और व्यवसाय करने की ओर ध्यान दें तो हमारा दृढ़ विश्वास है कि वे स्वतंत्र रूप से आनन्द पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकेंगे और इससे देश का भी कल्याण होगा। यदि डिस्ट्रिक्ट-बोर्डों द्वारा इस पुस्तक की एक एक प्रति प्राईमरी स्कूलों के पुस्तकालयों में रखने की व्यवस्था की जाय तो बहुत अच्छा है।" **किसान, पटना।**

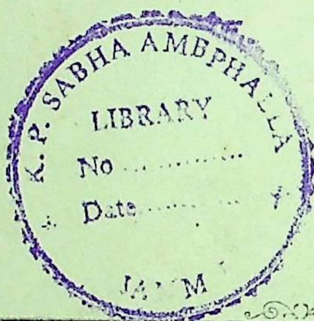
"……बाग़वानी अथवा फलों की खेती के आरम्भ करने वालों को अच्छी सहायता मिलेगी।………सार यह कि हर काम में और हर मौके पर यह पुस्तक आप का पथ प्रदर्शक और सहायक होगी।" **आज, बनारस।**

"……इस पुस्तक के लेखक कृषि विज्ञान के ज्ञाता हैं और बहुत समय से भारत की सर्वश्रेष्ठ कृषि सम्बन्धी संस्था में कार्य कर रहे हैं।…… आपकी यह पुस्तक फलों की खेती और व्यवसाय के इच्छुकों के बड़े काम की है।" **चाँद, इलाहाबाद।**

"……एक प्रामाणिक ग्रन्थ है……इस आर्थिक संकट के दिनों में……फलों की खेती और व्यवसाय शिक्षित युवकों के लिए लाभजनक जीवकोपायी सिद्ध हो सकता है।……सबसे बड़ी कठिनाई जो इस मार्ग में बढ़ने वालों को हो सकती है वह है हिन्दी में इस विषय के उचित साहित्य का अभाव।……प्रस्तुत पुस्तक इस अभाव की पूर्ति भलीभाँति करती है……।" **प्रताप, कानपुर।**

"……इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले सभी पहलुओं पर विचार किया गया है।…ग्राम सुधार के आन्दोलन के समय, हमें आशा है कि, कार्य-कर्ताओं का ध्यान इधर भी जायगा और वे इस पुस्तक से लाभ उठावेंगे।…" **अर्जुन, देहली।**





मिलने का पता :—

मैनेजर, लीडर प्रेस, इलाहाबाद

या

डॉ० नारायण दुलीचन्द व्यास, एल० एजी०

एम० एस-सी० (एग्री०), पीएच० डी०

इण्डियन एग्रीकलचरल

रिसर्च इन्स्टीट्यूट,

नयी दिल्ली

मूल्य ४)

